पुस्तकको अह्दतह्दा फेंककर ज्ञानकी आशातना मत करो !

ग्रथाक ८३

श्री अभक्ष्य अनन्तकाय विचार

[हिन्दी भाषामें]

रसनेन्द्रिय की आसक्तिमें वश होकर जीवपनसे या अज्ञानपनसे होता हुवा दोषो सें साधर्मिक बधुओं और बहिनों को बचाने का वात्सल्य भावसे

— मूळ लेखक —

सद्‌गत प्राणलाल मगळजी महेता
जुनागढनिवासी

— प्रकाशक —

चीमनलाल अमृतलाल शाह
बाबुलाल जेशिंगलाल महेता
श्रो सेक्रेटरीओ
'श्रीमद् यशोविजयजी जैन संस्कृत पाठशाळा
अने
श्री जैन श्रेयस्कर मडळ—महेसाणा.
[सद्‌गत शेठ वेणीचद सुरचद सस्थापित]

तृतीयावृत्ति
सवत् २०२८ — वीरसवत् २४९८ — सने १९७२
प्रत ४०००

मूल्य : १–७५

प्रस्तावना

जगत् में जैनधर्म का दया, संयम और तप रूप सर्व प्रकार का आचार सब आचार में श्रेष्ठ है। व्रतधारि श्रावक बंधुओ बाइस अभक्ष्य और बत्तीस अनंतकाय का त्याग करते है। उनको और जो व्रतधारी नहीं भी होता उन सब को जैन दृष्टि में भक्ष्याभक्ष्य की माहितीं के लिये लेखकने यह सुंदर पुस्तक लिखा है। प्राणलालभाई पीछे से आर्हती दीक्षा लेकर, पुण्यविजयजी नामसें अपना जन्म सफल कर आज वर्षोंसे स्वर्गवासी हुए है। किंतु उनका यह पुस्तक सब उपकारक हो रहा है।

यह पुस्तक गुजराती भाषा में लिखा गया है। जिसकी आजतक आठ आवृत्ति हमारी संस्था तर्फ से छप चुकी है। इस पुस्तक की उपयोगीता जगजाहिर है। क्या खाना? क्या न खाना? इत्यादि बातों की आवश्यकता सबको ही रहती है, और क्या खाने में क्या दोष है? यह भी जानना आवश्यक होता है। इससें यह पुस्तक की आवश्यकता प्रत्येक जैन गृहमें रहती है। इस अत्यन्त उपयोगी ग्रंथ की आवश्यकता सब जैन भाइयों और बहिनों के लिये एक सरखी होने सें गुजराती भाषा और लिपि को न समजने वाले साधर्मिक भाइयों के लाभ के लिये हमने हिंदी भाषान्तर करवा कर पुस्तक छपवाया है।

इस पुस्तकमे जैन दृष्टिसे भक्ष्याभक्ष्यका विवेक अच्छी तरहसे समजाया है। जैन दृष्टिका भक्ष्याभक्ष्य विवेकका मुख्य तत्त्व–अहिंसा, सयम और तप यह तिन है। इस हेतुसे –कोइ चीजका अभक्ष्य प अहिंसा दृष्टि है। यह दृष्टि मुख्य है। तथा कइ वस्तुओंका अभक्ष्यना सयम और तप–त्यागकी दृष्टिसे भी है। गर्भितमे मार्गानुसारी दृष्टिमे आरोग्य, तथा मानसिक और आध्यात्मिक विकास की दृष्टि भी आ जाती है।

हमको दुःखसे कबुल करना पडता है कि–इस ग्रन्थ का भाषान्तर की भाषा सतोषकारक नहीं है। हिंदी भाषा सौन्दर्य की दृष्टि से हमारा भाषान्तर सपूर्ण रीतिसे अपूर्ण और असतोषकारक है। यह त्रुटि हमारा ख्याल मे बराबर है। तथा प्रकार के भाषान्तकार के अभाव मे जो साधन मिला, उनका उपयोग कर के हमने यह पुस्तक छपवाया है। आशा है कि-इससे कुछ लाभ तो अवश्य होगा। भाषा कैसी भी हो, तथापि मतन्न समजकर इस माफिक जो कोइ वर्तन करेगा सो आवश्य कुछ ने कुछ आत्मिक और पारमार्थिक लाभ पावेगा। तथापि वाळजीवो का आकर्षण के लिये भाषा सौन्दर्य अवश्य होना ही चाहिये, और ज्ञानाचार की दृष्टिसे भाषा शुद्धि भी अवश्य होनी चाहिये। परतु भाषा शुद्धि और सौन्दर्य की राह देखकर कार्य मुल्तवी रखने से आत्मार्थी जीवों को लाभ से वचित रहने देना उत्तम न समजकर हमने यथाशक्ति भाषा शुद्धि और भाषा सौन्दर्य से सतोष मानकर इस पुस्तक प्रसिद्ध कर दीया है। कोइ सुज्ञ विद्वान् महाशय

प्रकरण ३ रा

प्रकरण ४ था, ५ वा ६ ठा.

प्रकरण ७ वां

प्रकरण ८ वां

प्रकरण ९ वां

प्रकरण १० वां

प्रकरण ११ वां

प्रकरण १२ वां

समाप्त

अभक्ष्य-अनन्तकाय-विचार

मङ्गलाचरणः विषयः सम्बधः अधिकारीः प्रयोजनः इ.

अति दुष्कर तपः और रागद्वेष को क्षयः कर मोक्ष की विशाल समृद्धि प्राप्त करने मे निकटोपकारी वर्तमान शासन के नायक-श्रमण भगवन्त श्रीमहावीर जिनेश्वर प्रभु को हमें नमस्कार करना चाहिए।

आठ मद का जय करने के साथ मे इंद्रियो के दमन करने वाले तथा उत्तम धर्म और शुक्ल ध्यान धारण करने में सदा तत्पर मुनिपुङ्गवो श्रीगणधर भगवतोः तथा धुरधर पूर्वाचार्यो. हमारा मगल करे।

चादह पूर्वधर श्री भद्रबाहुस्वामीः श्रीस्थूलभद्र-स्वामी. दशपूर्वी श्रीवज्रस्वामीः तथा श्रीदेवर्धिगणि क्षमाश्रमणजी. आदि निर्ग्रंथ श्रमण भगवन्तो को हम शरण लेते हैं।

श्री मृगावती : और चन्दनबालाः प्रमुख साध्वीजी के उत्तम चारित्र, शील तथा विनयादि गुणों का अहर्निश अनु-मोदन करना चाहिए।

श्री आणदजीः श्री कामदेवजीः श्री पुणियाजीः और श्री जीरणः प्रमुख श्रावकोंके उत्तमोत्तम द्वादश व्रत, ज्ञानः

दर्शनः चारित्रः इन तीन रत्नोंः की आराधकताः तथा दृढ सम्यक्त्वादिः उत्तम गुणों का हम शीघ्र अनुकरण करते जावें।

श्री सुलसाः और श्री रेवतीः प्रमुख शीलवती श्राविकाओं का दृढ़ सम्यक्त्वादि सुचरित्रों का स्मरणः अनुकरणः हमें सदा प्राप्त होवे।

श्री जैन शासन की अधिष्ठायिका श्री श्रुतदेवी सकल सिद्धि प्रदान करे।

श्री महावीर भगवान के शासन की रक्षा करने वाले मातङ्ग यक्षः और सिद्धायिका देवीः की स्तुति विघ्न शान्ति के लिए मैं करता हूं।

श्री जैनधर्म की सेवा करने में तत्पर अन्य सम्यग्दृष्टि देवों को स्मरण कर, श्री सूत्र–सिद्धांत में से उद्धृत कर, जिनाज्ञानुसार त्याग करने की इच्छावालेः और धर्म के इच्छुकः जीवों को भक्ष्याभक्ष्य का विवेक समझाने के लिए अभक्ष्य-अनन्तकाय–विचार नामक ग्रंथका प्रारंभ करता हूं।

उत्सर्ग मार्ग मेंः श्रावक को प्रासुक-अचित्त निर्दोष आहार लेने को कहा है, और शक्ति न होने पर अपवाद मार्ग में श्रावक सचित्त का त्यागी होना ही चाहिए। अगर वह भी न बन सके, तो बाइस अभक्ष्यः और बत्तीस अनन्तकायः वगेरह का त्यागी तो जरूर होना चाहिए।

*[श्रावक के धार्मिक जीवन मे भी अहिंसाः तपः और संयमः प्रधान रूप से होने चाहिए। इस का अहार में भी ये तीन तत्त्व अवश्य होने ही चाहिए। ये तीन तत्त्व जैन आहारविधि ओर भक्ष्याभक्ष्य विचार की भी कसौटीरूप है। "जैन खानपान की विधि मे आरोग्यः स्फुर्त्युत्पादकत्वः वगेरह तत्त्वों का स्थान नहीं है" ऐसा किसी को भी नहीं मानना चाहिए। परतु ये सबकी साथ ऊपर जनाए हुए तीन तत्त्व मुख्य होते है। वाचक महाशय यह हकीकत इस पुस्तक में कुछ विस्तार से जान सकेंगे]

बाइस अभक्ष्यः-

पचुंबरिचउ-विगई हिम-विस-करगे अ स-व्वमट्टी अ।
राइ-भोयणग चिय-बहु-बीय-अणत्त-सधाणा॥१॥
घोलवडा वायगण अमुणिय-नामाइ पुप्फ-फलाइं।
तुच्छ फल चलिअ-रस वज्जे वज्जाणि बावीसं॥२॥

पाच प्रकार के ऊबर फल, चार महा विगई, हिम, विष, करा (ओला), सब तरह की मिटी, रात्रि भोजन

---

* मूल ग्रथ म अथवा नीचे की टिप्पणीयों म प्राय जहा [ऐसे] कोष्टक के बीच में लिया हुआ हो वह इस आवृत्ति म हमारे द्वारा अभी ही बढ़ती की हुई समझना चाहिए।

वहु बीज, अनंतकाय, संधान-बोर-अथाणा वगेरह, घोलवडा, वेंगण, अजाने फूल और फल, तुच्छ फल, और चलित रस, ये २२ बाइस वर्जने योग्य अभक्ष्यों को वर्जना चाहिए। १-२

बाइस-अभक्ष्य

पांच ऊंबर:-

१ वड़ वृक्ष के फल
२ पारस पींपला तथा पींपली के फल
३ प्लक्ष (पींपला) का फल
४ ऊंबरा (गुलर) के फल
५ कचुंबर (काली ऊम्मर) का फल

चार महविगई

६ मधु (शहद)
७ मदिरा
८ मांस
९ मक्खन
१० हिम (बरफ)
११ विष (झहर)
१२ कड़ा (औला)
१३ सब तरह की मिट्टी
१४ रात्री भोजन
१५ वहु बीज फल
१६ अनंतकाय
१७ अचार-अथाणां
१८ घोलवडा
१९ वेंगण
२० अजाना फल-फूल
२१ तुच्छ फल
२२ चलित रस

यह दो मूल गाथाओं के ऊपर सारे ग्रंथ की रचना की गई है। इसी लिए उद्देश ग्रंथ बताकर उस हरेक का विवेचन करने में आवेगा।

१ पहले प्रकरणमें-बाइस अभक्ष्यों पर सुदेसर (सूक्ष्म) विवेचन।

२ दूसरे प्रकरणमे-चलित रस।

३ तीसरे प्रकरणमें-३२ बत्तीस अनतकाय।

४ चौथे प्रकरणमें-भक्ष्याभक्ष्यका परिमित समय।

५ पांचमे प्रकरणमें-अति हिंसा के कारण से वर्ज्य पदार्थ।

६ छट्ठे प्रकरणमें-उन्हाला मे और चातुर्मास मे, तथा गीले होने से और चोमासा होने मे वर्जित पदार्थ।

७ सातवें प्रकरणमें-चालू वापरने में आनेवाली (हमेश आनेवाली) वनस्पतियें और उस विषय में रखने योग्य विवेक।

८ आठवें प्रकरणमें-व्रतधारिओको कई एक उपयोगी सूचनाए।

९ नवमे प्रकरणमे-श्रावक के घर मे तथा वर्तन मे पालने योग्य कुछ नियम।

१० दसवें प्रकरणमे-श्राविकाओ के योग्य सूचनाए।

११ इग्यारहवें प्रकरणमे-सम्मूर्छिम जीवकी दया पालने के विषय में विचार।

१२ बारहवें प्रकरणमें-श्री कुमारपाल महाराज के बारह व्रत।

प्रकरण १ पहला

बाइस अभक्ष्यों पर मुक्तसर विवेचन

५ पञ्चोदुम्बर

१ वड़ के फल।

२ पारसपींपला और पींपल के फल।

३ प्लक्ष जात के पींपले के फल।

४ ऊंबर (गूलर) के फल।

६ कचुंबर (कालुम्बर) के फल।

इन पांच ही वृक्षों के फल में अनेक सूक्ष्म त्रसजीव उडते हुए देखने में आते हैं, जिनकी गिनती नहीं हो सकती है। इस लिए [उसी तरह उस में छोटे २ बारीक बीज भी बहुत होते हैं] वे सभी अभक्ष्य हैं। इस लिए उनका त्याग करना। दुष्काल इत्यादि के प्रसंग से अन्न न मिलता हो तो भी विवेकी ज्ञानी पुरुष ये खाते ही नाहीं। [बीज के अनेक वनस्पति जीवोंकी, और उस में पडे हुए अन्य त्रस जीवोंकी, इस प्रकार से दो तरह के जीवों की विराधना होती है। पींपली के फल को भी इसी प्रकार में समझना।]

---

१ फल में जितने बीज उतने ही वनस्पति के जीव जानने। उन सबकी थोड़े से स्वाद के लिये हिंसा करनी उचित नहीं है!

चार विगइओ.

६ मधु	७ मदिरा
८ मास	८ मक्खन

इन चार ही वस्तुओ के रग के जैसे असख्य जीव उन मे हमेशा (निरंतर) उत्पन्न होते हैं, इस वास्ते अभक्ष्य हैं। तथा ये चार महा विगई अति विकार करने वाली हैं। [इसी लिए मानसिक और शारीरिक दोष भी उत्पन्न करने वाली है] उन का विशेष वर्णन योगशास्त्र' जैन तत्त्वादर्शः वगेरह बहुत से ग्रथों में बतलाया है। इस लिए यहा सक्षेप में ही कहना चाहीए।

६ मधु–वाघरीये, भील आदि जाति के लोग मधु के छत्ते–(माले) लाते हैं। वे लोग प्रथम शहद की मक्खियों के छत्ते की नीचे धूवा करते है, इस से उन को अत्यत दु.ख दे कर उन के निवास रूप इस छत्ते मे से बहार निकालते हैं। उस छत्ते में उडने मे अशक्त उन छोटे बच्चे होने से, वे सब अपने प्रिय प्राणो मे मुक्त हो जाते हैं। एक आदमी का बहुत वर्षो तक, अत्यत परिश्रम मे सग्रह किया हुवा धन एक ही रात मे चोर आकर चुरा ले जावे तो उस को तथा उस के कुटुंबियों को कितना भारी दु ख होता है? इसी प्रकार से इन अनेक जीवों के बहुत समय पूर्व मे किए हुए परिश्रम से अपने निर्वाह के लिए तैयार किये हुवे शहद को [मधुपोड–विश्राम-

स्थल–गृह] वागरीये वगैरह अनार्य स्वभाव के लोग अत्यंत कष्ट दे कर लूट जावें. तो उनको कितना दुःख होता होगा? और एसे हिंसक लोगों को हम उत्तेजना देवें, वह कितना ज्यादा त्रासजनक है?

फिर मधु में निरंतर असंख्य जीव उपजते हैं। इस से उसका अवश्य त्याग करना उचित है।

१ रस लोलुपता से कोई मनुष्य शहद खावे, यह बात तो दूर रही, परंतु औषध के तौर पर मधु खावे तो भी वह नरक का कारण है। जैसे जीवित रहने के लिये कोई भूल से कोई कालकूट विष की कणी मात्र भी खा जाय, तो वह अवश्य ही मर जाय। उसी प्रकार से मधु खाने से नरक गति प्राप्त होती है। इसी लिए अन्य मत के पुराण वगैरह शास्त्रों में भी उसका त्याग करने के लिए कहा है। आत्मार्थी शूरवीर जीव अन्य जीवों को स्व-समान गिनकर एसी अभक्ष्य चीजों का सर्वथा त्याग करते हैं। और महारोग आवे या प्राणांत कष्ट आवे, तो भी इनका स्पर्श तक नहीं करते। उनको सहस्र वार धन्य है! ईस लिए हे बंधुओ! प्रमाद को छोड़ कर इस चीज को त्यागने के लिए शूरवीर बनो।

[वर्तमान समय में शहद को खुराक तरीके उपयोग में लाने के लिए अधिक प्रमाण से प्रयोग करने के लिए राज्य की तरफ से बहुत खर्चा कर शहद की मखियों को पाली

जाती है, परंतु शहद का ज्यादा प्रयोग आरोग्य को बिगाड़ेगा। यह हमारा निश्चित मत है। आरोग्य के नियमों को विचार करते हुए कोई भी, एक ही रस प्रधान चीज सब को, सर्वदा सर्वथा माफिक पड़ती ही नहीं। इसी से ऐसे प्रयत्न हिंसक, प्रजाका धन और भावी आरोग्य को हानिकारक ही हमें मालूम पडते हैं। कैसी अज्ञानता चल रही है? समय २ के प्रवाह के अनुसार अनेक प्रवृत्तिओं जन समुदाय में फैल जाती है। उसी तरह की लगन लगी रहती है। उस के उपर में वे सभी ग्राह्य ही है, ऐसा समझना नहीं. परंतु विवेक से अनुभव से विचार कर के हमें ग्रहण करने योग्य वस्तु का ही ग्रहन करना चाहिए। और अग्राह्य का त्याग करना चाहिए। इस लिए मधु मक्खी को पालने की प्रवृत्ति में सहयोग देना उचित नहीं है। सरकार की तो यह इच्छा है, और अमीरान नौकरों, प्रजा में मत प्रचारकर, प्रजाकी तर्फ से मधु भक्षण का उत्तेजन कराने का आग्रह कराने की तरकीब रची गई है।]

७ मदिरा-इस का सर्वथा त्याग करने वाले को विगयों का भी त्याग करना चाहिए। [किसी (शराब) द्रव्यों में मिश्रित दवाइए तत्काल काम करती है। परतु उसका असर जाने के बाद ज्यादा निर्बलता आती है। इस लिए दवाइयों में भी इस का उपयोग उचित तो नहीं है।] कारण

क—उस में प्रायः टिंक्चर–स्प्रिट (दारू) आता है। फिर कितने ही पाउडर (भूका–चूर्ण) वाली दवायों में भी अभक्ष्य वस्तु का मिश्रण होता है। जिससे [2]विलायती दवा का त्याग करना ही श्रेष्ठ है।

१—१ द्राक्षासव, २ कुमार्यासव, ३ लोहासव ये देशी दवाइयें भी एसी है। क्योकि द्राक्ष और कुंवार का सड़ा हि है। उसी सडे पदार्थ का नाम आसव है। [जर्मान में कुछ दिन तक गड़ी रहती है तब उसमें शराब के तत्त्व और जन्तु उत्पन्न हो जाते है] शरबत में भी अभक्ष्य के कारणों की संभावना है।

अनेक तरह के वाइन (शराब) पीनेवाले हरेक व्यसनी का बुरा हाल जगजाहिर और आंखों के सामने ही है। किसी तरह की शराब हितकर है ही ज नहीं। गांजा, लीलागर, भांग, चड़स भी त्यागने चाहिए। शराब—अर्थात् अनेक वस्तु का सडन करते हुए उसमें अनेक त्रस जीव ऊपजते है। उन सब के सहित मशीन से उस सडन का रस निचोड़ लेना वह। उस में भी एक तरह का स्प्रीट ही होता है।

२—विलायती दवाओं में अभक्ष्य पदार्थ होते हैं उसका खुलासा—

१ कॉडलिवर पिल्स—दरयाई मछली के कलेजे के तेलकी गोली।

२ स्कॉट इमलशन बॉवरील—बैल और भैसा के खास भाग का मांस।

३ विरोल—गाय के मगज का मांस रस।

देशी और विलायती अनेक तरह के दारु बनते हैं। वह हरेक सर्वथा त्याज्य ही है। ताडी वगेरह भी त्यागने योग्य है। सारंश कोई भी प्रकार का केफी पीना, हिंसा दृष्टिसे, आरोग्य दृष्टिसे, नैतिक दृष्टिसे। और सभ्य और लायक जीवन को तथा सयमी जीवन की दृष्टिसे भी त्यागनीय ही हैं। [विलायती या देशी शराब चाहे किसी प्रकार का हो, नुकसान प्रद ही है। इसी लिए इसे सात व्यसनों में गिनाकर अपने शास्त्रकारोंने उसे त्याग करने के उपदेश पर बहुत ज्यादा जोर दिया है। इस रीति से प्रभु की आज्ञा के मुताबिक अपने सर्व लोक के हित के लिए उपदेश दे सकते हैं। देशी शराब के बनावट के साधन बंध हो जाय, और विलायती शराब ही शुरु होवे (जारी रहे), इस वास्ते शराब बंदी की अभी

४ बी फाइरीन वाइन-(घेटा) गेंडा के मास युक्त ताडी।
५ कारतिक लिक्विड-मास मिश्रित।
६ एक्सट्रेक्ट चिकन-मुर्गी के बच्चों का रस।
७ सरोनानी टोनिक-स्पिरिट (मदिरा) युक्त।
८ एक्सरेट मोल्ट-मधु और मास मिश्रित।
९ वेसेन इन-सूवर-भालू की चर्बी।
१० पेपर्सीट पाउडर-कुत्ते और डुक्कर के अण्डकोष का चूर्ण।
११ [पिलोल्स तथा बहुत से इजेक्शन-भी एसे ही हिंसामय और अभक्ष्य पदार्थों में से बनाए हुए होते हैं।]।

की तमाम हलचल एक व्यवस्ति सुचारू रुपसे वडे जोर से चलती थी। यह अच्छा हुवा कि—उस में अपने मुनि महाराजाओंने चाहे जितने टीका टिप्पणी होते हुए भी सहयोग न दिया। नहीं तो भविष्यमां होनेवाला विलायती शराब के कायमी खूब प्रचार में आज अपनी सम्मति गिनाई जाती। देश के नेताओंने देशी शराब को वंध कराने में पूर्णतया अनुमति दे दीथी। शराब को रोकने वाले देशनेता ताजी ताडी पीते हैं और शराब के वदले उस की जरुरत का दाखला विठलाता था। कितना आश्चर्य ? अवकहां गई देशनेताओं की लगन? क्या कोई पेकेटिंग करता नहीं है ?। परतु यह सव वनावटी था। अपने को तो स्वाभाविक रीति से ही सब तरेह शराव छोडने का उपदेश समान भाव से देना चाहिये।]

८ **मांस**—अनेक जीवों को मार कर तैयार होता है।

---

३ जैसे **आयुर्वेद** के वनाने वाले ब्राह्म विद्वानोने अनार्यो के लिए अक्षन्य औषधि, चरवी, तेल वगैरह वताइ हैं। वैसे ही **युनानी हकीमोंने** दवाइयो में मांस, अण्डे और मछली वगेरह अभक्ष्य पदार्थो का उपयोग सहज ही वताये है। इस लिये हरेक दवा लेते हुए आर्य धर्म का विचार रखना चाहिए। [आयुर्वेद प्रायः वनस्पति को मुख्य मानता है। **युनानी वैद्य** (हकीम) प्राणी जन्य औषधियें मुख्यतया काम में लाते है। **विलायती** दवाओ में प्राणिजन्य औषधें, प्राणिजन्य विष, खनिज विष तथा वनस्पति विष, और केफी तत्त्व—

उस के मुख्य तीन भेद है-१ जलचर मे मछली वगेरह का, २ स्थलचर में पाडा, बकरा, हिरण, गाय, घेंटा, (सूअर), खरगोश ३, खेचर में चडिया, मुर्गी, कबूतर वगेरह का। अनेक पचेंद्रिय प्राणियो का शिकार करके और धंधे के लिए ही मारकर मास तैयार होता है। निरपराधी होते हुए भी वे बिचारे मारे जाते। वे सभी प्राणि अपनी २ माते के रुधिर और पिता के वीर्य से जन्मे होते हैं। इस लिए यह अत्यन्त निंदनीय है। क्षत्रीय वगेरेह मासाहारी कितनेक हिंदू और मुसलमानों के दारु मास त्यागना ही योग्य है। एसा मलिन पदार्थ सभ्य मानव के खाने लायक माना ही कैसे जाय? जगली मनुष्य-मनुष्य का मास खाते हैं, उन से कुछ सुधरे हुए लोग दूसरे प्राणियों का मास खाते हैं। इस बात को विचमते हुए भी सभ्य मनुष्य के लायक यह खुराक है ही नहीं।

पुरान मे तथा कुरान मे भी मास अभक्ष्य तरीके फरमाया हुआ है, तो भी बल, पुष्टि और जीह्वा के लालच से एसे अखाद्य पदार्थ खाते है। तथापि दूसरों के प्राण लेते

स्प्रीट वगेरह का मुख्यता से और अधिक प्रमाण मे उपयोग किया जाता है] वे दवाइए तुरत फायदा करती हुई माल्रम पडती है। परतु ' नये रोग उत्पन्न करती है और परिणाम स्वरूप आरोग्य को नुकसान करती है और आयुष्य का ह्रास करती है"। ऐसा अनुभवियो का पक्का मत है।

यान्त्रिक-वाहन और खेती के साधनों के बढते हुए भी बडी संख्या में पशु कतलखाने ले जाए जाते ही है। इस लिए इस देशमें भी यान्त्रिक कतलखाने बढते जा रहे हैं। उनके बढने से देशी कतलखानों की वध-क्रूरता का वर्णन, दूधवाले पशुओं को बचाने का प्रयास, यह सब जीवदयादि मंडली वगैरह की प्रवृत्तिए साधन तरीके हो रही है।]

किसी २ (बौद्ध) धर्म वाले ने तो "मुर्गा, हरिण और मछली वगैरह के मांस भक्षण से अनेक प्राणियों को मारने का पाप होता है। उस से बचने के लिए एक हाथी को मारने से उसका मांस बहुत समय तक चले, जिससे एक ही जीव की थोडी हिंसा होती है"। ऐसी पोली दलीलें चलाई हैं। जिससे जीव दया पालने की शोभा भी ली जा सके, और मांस भी खाया जा सके! क्या यह न्यायसंगत दलील है? [बडे प्राणि को मारने में बडी महनत पडती है, इस लिए उसे मारने के लिए अनेक युक्तिए करनी पडती है। जिस से ज्यादा तीव्र हिंसा के विचार में मन विचरता रहता है। उसी तरह से क्रूरता भी अधिक मन में उत्पन्न होती है।

सारांश—कोई भी प्राणि को मारना हिंसा ही है और बडे शरीर वाले को मारने में बडी हिंसा होती है] जो लोग अपने देवी देवताओं के वाहन तरीके से या देवीकी आकृति के तरीके से कोई २ मनुष्य मानते हैं, वे गणपती की आकृति जैसा हाथी और इन्द्र का महादेव की सवारी जैसा

हाथी सिंह या वाघ को मारने में कैसे योग्य गिना जाय? वास्तव में एसा जीव हिंसा का विचार भी अधोगति में जाने की सूचना करता है।

कसाई अपना मांस वेचने का धंधा करते होते हुए भी वकरा भालू या पाडा का गला स्वयं काटते ही नहीं। परंतु एक दो पैसा देकर गलकट्टा वगैरह नीच के हाथ में छुरी फीराते हैं। क्योंकि वैसा करने में वे भी पाप मानते ही हैं [अतः "मांस खाने में पाप है" इस वात में हरेक आदमी सहमत है]

इस के शीवा **मांस** के अंदर क्षण २ मे अनेक **त्रस** जीव उपजते हैं। मांस अग्नि ऊपर के पकाते हो और पकाये पीछे भी वे उपजते ही रहते हैं। उसका प्रमाण यह है कि- "पडे रहे हुवे शव में वडे २ कीडे पड जाते हैं, परंतु वे कीडे समय पर वडे होते जाते हैं। पहिले तो वे वारीक होते हैं। शरीर में से अलग हुवा मांस यह मरा हुवा भाग है। इस लिख वह शरीर से छुटते ही सडने लगता है। और तुरंतही उसमें उसहीके रंग के कीडे-जन्तु उत्पन्न हो जाते हैं। अतः भी "मांस खाने में असंख्य जीवों की हिंसा होती है" एसा परोपकारी महापुरुषोने कहा है। अतः हरेक प्राणि को अपने ही समान जानना और उनकी हिंसा से वचना। मांस वगैरह प्राणिजन्य-खान--पान तथा औषध वगैरह का कोइभी प्रकार का उपयोग करना ही नहीं चाहिए।

इसी हिसावसे श्री जैन शासनमें पदरह कर्मादान छोड-नेकी दरेक धर्मात्मा पुरुषको हमेशके लिए खास तौर, पर, कहा है। कितने ही दगाखोरलोक घीमें चरवी और वेजीटेवल नामके घी की मिलावट करते है। विलायती, विस्कुट वगैरह मे अभक्ष्य पदार्थका मिश्रण की सभावना होती है। आज कल कितनेही लोक ऐसी चीजोंको खाते है। यह वास्तव में खेदजनक ही है। उसीसे विस्कीट [किसी २ विस्कुट या चोकुलेट में ईडे का रस या शराब चीज स्वा-भाविक ही होने का सुना जाता है। गाय के मास की भी चोर्लेट आती है। अपने यहा पतासें आदि के वदले वचों को पीपरमेंट की मीठाई वाटी जाती है, यह हमारी बडी से बड़ी भूल है। क्योंकि भविष्य में अपनी भावि संतान को मासहारी बनाने की यह प्राथमिक योजना है। पीपरमेंट की गोलियों में से छोटी चोर्लेट और उसमें से बडी चोर्लेट तथा उसमें से ज्यादा वडी चोक्लेट व उसमें से उसीसे अधिक वडी, और कींमति और विटामिन्स वाली—जो लगभग मासमें से ही बनाई जाती है—उस तरफ—धीरे २ आकर्षित किया जा सकता है) आदि घृणित चीजों को छूना भी न चाहिये।

कितनी ही विलायती औषधिए जैसे कि कॅाडलीवर ऑइल (कॅाड नामक मछली का कलेजा का तेल,) कॅाड इमलशनवोपरील और बम्बई आदि चरवी इत्यादि के समेल्से बनाते है। इसका त्याग करना अत्यावश्यक है।

अपनी स्वास्थ्यता कायम रखने के लिए कई मनुष्य भक्ष्याभक्ष्य का विचार नहीं करते हुए ऐसी चीजें व्यवहार-में लाते है। लेकिन हे भव्यात्माओ! उसका-किंपाक के फल के समान-फल बहुत नीच गति में जाकर भोगना पडेगा, तनिक उनका भी विचार करो। अनादिकाल से स्थूल शरीर का पोषण करते हुए ही यह जीव चारों गतियों में पर्यटन कर रहा है। लेकिन पवित्र मन के बिना आत्मा का कल्याण कैसे हो सकता है? इस लिए जन्म, जरा, मृत्यु, आधि, व्याधि और उपाधि के दुःख निवारण करने के लिए इन अभक्ष्य पदार्थों का सर्वथा त्याग करो। धन्य है राजकुमार वंकचूल! तुमने, प्राण त्याग दिये लेकिन मांस भक्षण नहीं किया। और फलतः देव गति प्राप्त की।

हम ऐसे महापुरूषों का अनुकरण करना कब सीखेंगे? और मोक्ष-श्री को कैसे प्राप्त करेंगे?

जैसे दूध विगड़ जाने पर खाने लायक नहीं रहता, उसी प्रकार दहीं भी जमाने के बाद दो रात्री के बाद में जंतु पड़ जाने से अभक्ष्य हो जाता है। सांड (उंटनी) के दूधमें अंतर्मुहूर्त के बाद जीव पैदा हो जाते है। अतः अभक्ष्य हो जाता है। उसी प्रकार सर्वज्ञ जिनेश्वर देवने मक्खन को भी अभक्ष्य कहा है। छाछ (भेद) में मक्खनका आ जाना संभव है। विरतिवंत जीवों को छान कर छाछ को काम में

लेना चाहिए। और अनजान में नहीं आ जावे इसकी पूरी २ यतना रखनी चाहिये। मक्खन मे छाछ में से निकलते ही अंतर्मुहूर्त में तद्वर्ण जीवोत्पत्ति हो जाती है।

जिनेश्वर भगवतोने जो धर्म वतलाया है, वो सत्य मानना चाहियें. [आगम गम्य पदार्थोंमिसे कितनेक पदार्थ प्रयोगगम्य कर सकते है. परन्तु ऐसे साधनो करने मे बडा भारी खर्च का सामना करना पडता है. अथवा सूक्ष्म हेतुवाद समझने में बहुत गहरे अभ्यास और सूक्ष्म बुद्धि की जरूरत पडती है. वैसे साधन और समझने की शक्ति न होने से सर्वज्ञ भगवतो की वतलाई हुई हरएक बात सत्य मानना चाहिये]

(उपसहार)

उपर वतलाई हुई चार महा विगई को [मद्य, मदिरा, मांस मक्खन] का अवश्य त्याग करना चाहिए. प्रभु की आज्ञा पालन करना यह धर्म है, और उसमे दया, सयम तथा निर्मल जीवन का लाभ समाया हुवा है यह चार विगई खाने वाले जिन्दे रहते है, और नहीं खाने वाले मर जाते है, यह वात नही है। तो फिर क्योंकर पाप में पडना ?

१० =:वरफ:=

वरफ: हीम: और ओले. इन तीन चीजों मे एकी सरीखा दोष होता है. अप्काय (हरेक सचित्त पानी का एक बिन्दु

असंख्य जीवमय होता है, एक जीव का शरीर का सरसव के दाने मुताबिक कल्पना की जाय, तो पानी के एक बिन्दु के जीव लाख योजन जंबूद्वीप में न समाय. इतने [सूक्ष्म] छोटे शरीर वाले होते है. [पानी को छान कर बरफ कोन बनावे ? और छानावे तो भी बहुत से छोटे जीव गलने में से निकल कर रह गये होतो तमाम ठंडी के उपद्रव से मुकडा करके मर जाते है, अगर कोई बच जाय तो उपयोग करते वक्त मृत्यु हो जाती है। इस तरह कई प्रकार से उसमें पाप प्रत्यक्ष समझ में आता है। वास्ते बरफ वगेरेको अभक्ष्यमें गिनने में आता है, वो ठीक है।

यानी पानी खुद जीवमय होता है. और उसके उपरांत पानी के एक बिन्दुमें कितने दुसरे (त्रस जीव होते है वो सामने के चित्र में देखो.] यद्यपि पानी विना निर्वाह न हो, वास्ते जरुरत पुरता कच्चा पानी वापरने में आता है।

गर्मी को शांत करने में चंदन (सुखड) बरास खडसलीया पित्त पापडा का विलेपन करने में आता है. शक्कर का पानी बदाम या सुखड सहीत पीने से तृषा शान्त होती है, केले भी शीत प्रदान है.

मलयागिरी, सुरोखार, लीम, गलोका सत्त्व, किरीयाता और बुचकण आदि अणहारी वस्तुएं रात को अभिग्रह होते हुवे भी वापरने में आती है.

हिम [बरफ] कुदरती है, और खास मशीनो के



સિધ પદાર્થ વિજ્ઞાન નામનુ પુસ્તક અલ્હાબાદ
ગવર્નમેટ પ્રેસમા છપાયલું છે જેમા કેપ્ટન
સ્કોર્સબીએ સૂક્ષ્મદર્શક યત્રથી એક પાણીના
ટીપામાં ૩૬૪ ૫૦ જીવો હાલતા ચાલતા જોયા
તેનું આ ચિત્ર છે.

साधनो से वनता है। वो दोनो प्रकार का अभक्ष्य है. सवत्र उस में पानी के असंख्य जीव है. वहुत आरंभ करने का तिर्थंकर परमात्माने निषेध किया है. आईसक्रीम, आईसवोटर, (वरफ का पानी) आईससोडा, कुल्फी, प्रमुख वरफ की चीजों का अवश्य त्याग करना चाहिए. [आईसक्रीम वनाने में वरफ तथा कच्चा पानी और निमक काम में लिया जाता है. जिससे छोटे एकेन्द्रिय, दोइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौरिन्द्रिय चलने फिरने वाले जीवोंका नाश होता है.] मशीनो के अन्दर में रहा हुवा दुध आदि का रस साफ करने में न आवे, तो दोइन्द्रिय वगैरह जीवो का उत्पन्न होने का प्रसंग आता है. परन्तु वो जीव वहुत छोटे होने से (दृष्टि) नजर में न आते, और दुसरी दफा नया दूध गिरने से फोरन विचारे का विनाश हो जाते है. इस तरह त्रस जीवों की हिंसा होने का संभव होता है. ऐसी वातका विचारकर जिह्वा इन्द्रिय में लग जाने से अपने में कितनेक अहिंसामय धर्म को मानने वाले आगेवान जैसे जैन वन्धुओं भी त्याग नहि करते. अनेक जीवो का प्राण लेने का कारण हो जाता है. जैसे आगे उनके पूज्य वडे सचित्त त्यागी और गंठसी-वेढसी प्रमुख कठिन नियमो को पालन करने में मजवूत रहते थे. परन्तु इस काल में कई वंधु चलते होटल-विश्रांतिगृह (विश्रांति नहीं परन्तु खास विनाशकारीग्रह) आदि में (भक्ष्याभक्ष्य) याने खाने-

पीने में और (स्पर्शास्पर्श) छुने छाने आदि बुरी बातों का विचार नहीं करते। इसी तरह आगामी जन्म का [इस जन्म में गुरु बडे व ज्ञाति आदि का भय होनेसे] डर नहीं रखते हुवे निर्भयता से नाश होने के कारण नहीं समझते हुवे इन मामूली चीजों से खुद अपने मन की इच्छाओं तृप्त कर के खुद आत्माओं को भ्रष्ट कर देते है। अफसोस ! यह बात कितनी दुःख प्रद है? बन्धुओ ! दुसरे जीवों को होता हुवा दुःख का कुछ विचार अपने विचारशील दिमाग पर लाकर ऐसी तुच्छ चीजों का हंमेशा के लिये त्याग करना चाहिये। व विगडी हुई बातों को सुधारना चाहिये। [कितनेक वैद्यो का मत है कि-"बुखार के अन्दर बरफ बहुत से काम में लाया जाता है. अगर शरीर नाशक बुखार हो तो चाहे जितने मण बरफ रखने में आये, तो भी उसीसे बच नहीं सकता. और शरीर को विनाशकारी जैसा न हो तो, उस समय के जोसके बाद चाहे जैसा बुखार हो, कम होते ही सिर का भार हल्का हो जाता है, इतनी बात ठीक है, कि-बरफ रखते समय बीमार को आराम पहुच जाता है. परन्तु जोरदार बुखार हो तो बरफ को हटाते ही फोरन उसको बुखार का असर मालूम पडने लगता है. इसी तरह बरफ रखने का रिवाज बढता जाता है. परन्तु बरफ रखने से नुकशान होता है यानी जहा बरफ रक्खा जाता है वहा का खून

घट्ट हो जाता है. जैसे आईस्क्रीम [वरफ दूध आदि वस्तुओं से वनता है] उसी मुताविक खून भी जम जाता है. फिर उस जमे हुवे खून का हृदय में प्रचार होने से शरीर को कमजोर वनाता है. इसके साथ २ दुसरे रोगो को भी निमन्त्रित करता है। एसी मतलव है। "

११ विष-[जहर चार प्रकार का होता है. खनीजः प्राणिजः वनस्पतिज और मिश्रणजः। सोमलः हडताल आदि खनिज है. और सांप बिच्छु वगेरे का प्राणिज है. वच्छनागः अफीयूनः धतुराः आकडा आदि वनस्पतिज है, मध और घीरत वरावर मिलाने से वो भी विष वन जाता है, और मिश्रणज कहलाता है.] अफीयून, सोमल, वच्छनाग, हडताल, मीठा तेलीया, संखया आदि प्रमुख चीजे अभक्ष्य है. सवव उस जहर खाने से पेट के कीडे आदि जीवों का नाश होता है. और शरीर कमजोर होजाता है, व पराधीन वनजाता है। वास्ते जहरी वस्तुएं ताकात और शोख के लिये नही खाना चाहिये, औषध के लिये काम मे ला सक्ते है. [मगर यह भी ठीक नही]. देखो व्यसनी (आदत वाले) मनुष्य का क्या क्या हाल होता है. यानो समय पर अफीयुन नही मिले तो आत्मा में वेचेनता और क्रोध वढजाता है. और उस चीज खाने वाला जहां मल मूत्र करता है, उस जगह पर (त्रस-स्थावर) छोटे वडे जीवों का विनाश होता है. और यह वस्तुएं खाकर

आपघात करने से दूसरे जन्म में नरकादि नीच योनियों में भ्रमण करना पडता है इसीलिये जहर व्यसन व आपघात करने मे नही खानी चाहिये. और इनका व्यापार भी नहि करना चाहिये. अगर राज्य कर्ता जहर के व्यापार करने की इजाजत मर्यादित उपयोग के लिये देवे तो ठीक है. सर्वज्ञ भगवंतोने पन्द्रह कर्मादान छोडने में जहरका व्यापार करनेका इन्कार फरमाया है. क्योंकि उसके व्यापार से बहुत-से बुरे काम होते है. माताए अपने बच्चों को अफीयून की छोटी २ गोलीया बनाकर देती है लेकिन उस व्यसन से फायदा नही होता. बल्कि उलटा नुकसान होता है [थोडे समय के लिये ही बच्चे को स्फूरतीप्रद होती है] और बिमारीया उनके अन्दर अपना घर बना लेती है. उनकी माताएं इस बात का ख्याल नहीं रखती. कदाचित्-किसी समय भूलसे गोलीया मुकाम सर न रक्खी गई हो, और बच्चे के हाथ लग जाय व ज्यादा खा लेवे, तो उसकी मृत्यु हो जाती है. इसीलिए समजने वाली माताओं को ऐसी जहरीली चीजें न मगाना चाहिये. ×

× सोमल पारा गंधक वच्छनाग जहरकाचला धतुरा अफीयून कर्चीनाइन आदि झेरी चीजें औषधि के काम में लाई जाती है वो औषधियें ताकात देने वाली व फायदा करने वाली होती है और जल्दी रोगो का नाश करके फायदा पहुचाती है, इससे सामान्य दवाईया बचनेवाले वैद्य डाक्टर भी जल्दी प्रसिद्धि को प्राप्त कर लेता है साथ २ उनकी इज्जत व धन की प्राप्ति भी अच्छी होती है लेकिन

ऐसी लगाता है जोरदार शास्त्रसिद्ध गिनी जानेवाली दवाईयां बनती है.
अच्छे डाक्टर और वैद्य तेज दवाईयां क्वचित् देते है. कभी देते, तो
वक्त लेने को इन्कार करते है. और जहां तक बन सके, एसी दवा
नहीं भी देते है. फिर जरूरत के मुताबिक खास आत्यमिक कारणों
में ही देते है। लेकिन अंग्रेजी दवाईयां और उस में खास पुरान
(Injection) इन्जक्शन जहर वाला होता है. इतना ही नहीं लेकिन
होमियापेथिक जसी वार क्षार वालि ओर दुसरी औषधियां जहर से मिली
हुई रहती है. जैसे ऐलीया जैसी दवाईयां को (Sugar of milk)
शुगर ऑफ मिल्क में घोट घोट कर इतनी बारीक कर देते है जैसे
ज्यादा दुध का शकर में जहर कम भी बहुत ही बारीक बनकर
शरीर में एकदम फेल जाते है, और छोटी से छोटी तत्वो में मिलकर
असर करते हुवे बनावटी चाल देकर रोग को दबा देते है। पीछे से
अपना जहरीम पन बताये विना नही रहता. कितनीक दवाईयां इन्द्रियों
को तेज बनाकर दर्द नही होने देती है. लेकीन इनके उपर से विचार
कीयां जाय की रोग का नाश हो गया यह बात मानने में नही आ
सकती. देशी वैद्यो में से कितनेक **हिमगर्भ** की गोली को एक दो
मरतबा घिस कर मरते हुवे आदमी को पिलाकर बातचीत करवा देते
है. उसका कारण बीमार की मृत्यु की तैयारी होती है, तथापि यह
दवाईयां अपना जोर बता कर स्वस्थ बना देती है. यान बातचीत करने
पूरता बीमार को अच्छा करती है. लेकिन इस दवा की शक्ति हट जाने
पर मरने जैसा हो जाता है. और कुच्छ जल्दी मृत्यु को प्राप्त कर लेता
है. तो दया देने वाले कहते है कि—"अब जल्दी मृत्यु होगी, समा-

१२ करा–यानी ओले आकाश में से पडते है उसमें भी बरफ के मुताबिक महा दोष है जिनेश्वर की आज्ञा के खिलाफ है वास्ते त्याग करना चाहिये. [देखो बरफ पृष्ठ १९]

लना" मगर उसका कारण जहर होता है बहुत से प्राचीन वैद्यक मे ऐसे जहर का उपयोग खास कर बतलाया नहीं। अलबत्त, ऐसे प्रसग कभी जरूर होते है। जिसमे जहर की खास जरूरत पड़ती है जैसे–पानी के अन्दर डुबे हुवे मनुष्य मूर्छित हो जाता है। उस वक्त उसका हिम गर्भकी गोलि कुछ प्रमाण मे एक दफा घिस कर पिलाई जावे, तो उसकी मूर्छा उड जाती है। परन्तु कुछ देर देख कर अगर जरूरी देखन पर देना चाहिये, लेकिन मरने जीने का खास महत्व और सच्चे प्रसग में देने मे आवे, तो-हरकत नहा। ऐसे खास कारण में बताई हुई जहर की चिकित्सा को पीछे के वैद्यक मे व्याप्क कर दी गई, ऐसा मानने मे आता है। और आधुनिक विदेशी चिकित्सा का जहर खास प्राण ह, ऐसा मानने मे आता है।"
इसके उपर से जहर को अभक्ष्य गिनने में जैन शास्त्रकारो की कीतनी सूक्ष्म दृष्टि है? ये समजानेके लिये इतनी चर्चा की गई है।

(१) जैसे कच्चा फल और उगता हुवा धान्य खाने से मीट चडती है और गर्भवालि स्त्री के कच्चा गर्भ गिर जाय, उस वक्त सुवावड़ मे खाने जैसी घी वगेरे उत्तम वस्तु के बदले उसको कसुवावड़में तेल चोल कल्से बाजरी सुकी रोटी वगैरा खाना पड़ती है इसी तरह कच्चे गर्भकी तरह कच्चे वरसाद का स्वरूप ओले कुदरत खिलाफ होने से अभक्ष्य है।

१३ भूमिकाय (पृथ्वीकाय) सर्व जाती की मट्टी. मळलन. खडी, भूतडा (सरकडा) खारां कच्चा निमक वगैरा अभक्ष्य है.

क्योंकि उसमें असंख्य जीव है. मट्टी. नमक. इसमें दोष का मुख्य कारण—प्रत्येक वनस्पति काय में जैसे एक शरीर में (पत्ते फल बीजमें) एक २ जीव है. वो हरेक जीव कबूतर मुताबिक शरीर करे, तो इतनी जीव इस लाख योजन गोळाकार (जंबूद्वीप में) रह नही सकते, इतनी वडी संख्यावाले होने पर भी छोटे शरीर वाले होते है. उसका नाश करके अल्प तृप्ति लेना, उसके बदले एसी चीजो को त्याग कर उन जीवो को अभयदान देना चाहिये. इन चीजों के बदले दुसरी बहुतसी अचेतन चीजें मिल सकती है. आंवलां, कंकोडी, अरीठा, वगेरे नहाने धोनेमें कासमें लेना ठीक है.

गर्भवाली स्त्री को भूतडा खाने से गर्भ को व्याधि और नुक्सान होता है.

पापड या साळीयां बनाने में संचीरा वापरने के बदले. साजीखार उपयोगी होता है.

चाक, चूना, गेरू, अचित्त होने से पेट में असंख्य जीवों की उत्पत्ति होती है. याने पांडुरोग, आमवात, पित्त, पथरी, आदि प्रमुख रोग होते है. और कितनेक जातकी मट्टी, गेरू वगेरे समुर्छिम जीवों की योनि रूप होती है. जिससे अभक्ष्य है. वास्ते उसका अवश्य त्याग करना चाहिये. और अनाज

में करकर खाने में आ जाय या पानी में धुल उडकर पडे, और शाक तरकारी में मिट्टी लगी हुई हो. उसका उपयोग करते हुवे भी मिट्टी रह जाती है. लेकीन कच्ची मिट्टी के नियमका भंग नहीं होता. परन्तु उसकी जयणा तो रखना चाहिये.

कच्चा–सचित्त निमक श्रावक को त्याग करना चाहिये. और अचित्त वापरना चाहिये. पृथ्वी मे से खान खोदकर निकला हुवा पहाड से मिला हुवा या, समुद्र के पानी से आगर में जमा हुवा एसा वडागर, घशीयु, उस, लाल सेंध्या वगेरे अनेक खार जिसको अग्नि रुपी शस्त्र न लगा हो वहां तक सचित्त है वैसा तमाम प्रकारका निमक हरेक जैन भाईयों को त्याग करने लायक है. ग्रहस्थों को अचित्त किया हुवा (बिकता हुवा) कीमतसे नहीं मिले, तो जरुरत पूरता अचित्त कराना चाहिये. दाल शाक मे डाला हुवा सचित्त भी अचित्त हो जाता है. परन्तु आचारमें, मशालेमें, मुखवास और औषध में अचित्तनिमक वापरने मे योग्य है।

अणहारी में गिना हुवा–मुरोखार, टंकणखार और फटकडी ये अचित्त है। निमक भिन्नभिन्नरीतिसे होता है। एक मिट्टी के बरतन में निमक भरकर उपरसे मूह मजबूत बन्धकर कुम्भार या हलवाई की भट्ठी मे रखनेसे बराबर

१ निमक कुंभार के यहा अचित्त करनेके लिये देनेकी प्रवृत्ति गुजरात में पाटण शहर के अन्दर है यह रिवाज, कुमारपाळ

अचित्त होता है. इस तरहसे अचित्त किया हुवा निमक चार पांच-वर्ष तक सचित्त नहीं होता. श्रावक खुद के घर एक सैर निमक खांडकर या पीसाकर लगभग दो सैर पानी में मिलावे, फिर एक रस होने के बाद छनाकर चुले पर रखकर जैसे शक्करका बुरा बनाया जाता है, वैसेही शेक डालना चाहिये। इस तरीके पर बनाया हुवा निमक बराबर अचित्त होता है. परन्तु पानी के संयोग से किया हुवा रस दो चार माह के बाद सचित होने का संभव है। भट्ठी में पका हुवा बलमण का काल अधिक होना संभवित है। कारण-भट्ठी में शिका हुवा निमक स्वयं गलकर पानी होकर ढेपा बंध जाता है। कोई २ जगह पर लोहेके *तवे वगैरा में शेकते है. परन्तु जब तक लाल रंग न हो जाय, तब तक अचित्त नहीं

महाराजा के जमाने से चला आता है. वहां पर दांतन का चीरी व अचित्त निमक कीमतसे बिकता हुवा मिलता है. जिसको अहमदाबाद के कितनेक श्रावक मंगवाते है. तथा अचित्त खारा हलवाई की पेढ़ी में मिलता है.

* काठीयावाड़ में कितनेक आयंबील एकासणा प्रमुख में अचित्त निमक वापरनेके लिये तवेया कटोरीमें सचित्त निमक डालकर चुले पर थोड़ी देर शेक कर उपयोग करते है। उनको अवश्य समझना चाहिये कि निमक की योनी इतनी सूक्ष्म है की जिसके बदले शास्त्रकारोने भी भगवती सूत्र के १९ में शतक के तीसरे उद्देश में फरमान किया है कि-चक्रवर्ती की दासी वज्रमय शिला के उपर वज्र के वत्ते से इक्कीसवार घीसे तो भी निमकका जीवको बिलकुल असर नहीं होती-

जाय, तब तक उचित नहीं होता. क्योंकी निमक की योनि बहुत सूक्ष्म है. वास्ते उसको अग्नि रूपी शस्त्र जब तक बराबर नहीं लगे, तब तक अचित्त नहीं हो सकता. मुनिराज श्रीवीरविमलजी महाराज सचित-अचित्त की सज्झाय में लिखते है कि-

अचित्त लवण वर्षा दिन सात,
सियाले दिन पन्दर विख्यात।
मास दिवस उन्हाळा मांही,
आघो रहो सचित्त ते थाय॥ १॥

यानि-'अचित्त किया हुवा निमक वर्षा ऋतुमे सात दिन,

वास्ते अग्नि रूपी शस्त्र बराबर नही लगे तबतक अचित्त नहीं होता. अन्यथा शकादील जानना अचित्त निमक निकालते वक्त हाथ साफ करके निकालना चाहिये, नहीं तो सचित्त पानी का एक बिन्दु मात्र पड़ने से निमक सचित्त हो जाता है इसलिये बहुत ध्यान रखना चाहिये

× इस दुनिया में आहार, भय, परिग्रह और मैथुन यह चार सज्ञा तमाम जीवो को होती है देव देवीयों को कोई व्रत पच्चक्खाण नही होता जिससे वो पिछले जन्म के मुनाफे का भोग करके फिर परभव मे खाली हाथ से जाने वाले होते है नरक गति में सिर्फ दुःख सहन करते है इसी तरह वो रात या दिन देखते नहीं. जीसमे व्रत नियम का वहा पालन व शुभ कार्य नहीं किया जाता है सबब पुन्यका बंध नहीं पड़ता और तिर्यंच गति मे पशुपंखि सर्व विवेक

ठंडी ऋतु में पन्द्रह दिन, व गर्मी की ऋतु में एक मास अचित्त रहता है. उसके बाद सचित्त हो जाता है." इस तरह काल मान का रंगत देखते हुवे घरमें ही तवा या कड़ाई वगैरे लोहे के बरतन में शेक कर अचित्त किया हुवा निमक का इतना काळ मानने में आता है. क्यों कि भट्टि में पका हुवा बलमन का काल तो प्रवचन सारोद्धार वगेरे में बहुत बड़ा—प्रभूत कहते है। दो चार वर्ष या उसके उपरान्त कुछ समय तक अचित्त रहता है॥ अर्थात् उसका काळ बहुत समझना॥ श्रावक मूळ भांगे सचित परिहारी होता है। जिससे प्रमाद को त्यागकर तमाम सचित्त वस्तु का त्याग करना चाहिये। सर्वथा नहीं बन सके तो, सचित्त निमक का तो अवश्य त्याग करना चाहिये.

१४. रात्रि भोजनः—इस जन्म व आगामी जन्म के लिये महा दुःख का कारण होता है. रात्रि को चारो आहार अभक्ष्य है. रात्रि भोजन करनेवाला आगामी जन्म में उलुक, काग, गीध, भुंड, विंच्छुं, घो, बिल्ली, चुहे, सर्प, वागोल, चामचिडीया वगैरह के भव करना पड़ता है. व महा दुःखी होते है और उनको धर्म का मिलना बहुत ही दुर्लभ होता है। जो मनुष्य खुद रात्रि भोजन करते है. उनके पुत्रादिक को भी बुरी आदतें पड जाती है.

अलावा, भोजनमें चिंटी खानेमे आ जावे तो बुद्धि मंद होती है। जू जलोदर रोग पैदा करती है. मक्खी वमन करवाती है.

हिन होता (माता पुत्रकी व्यवस्था ग्हील होने से) है खाना पीना पराधीन होता है सिर्फ मनुष्य गति में उनको सच्चे शास्त्र का भरोसा है, जिससे त्याग करते हैं जो पुन्यवान आत्मा रात्रिभोजन के पार बार दुख को समझते हैं मोक्ष याने मनुष्यकाही कर्तव्य करना चाहिये त्याग याने दान अर्थात् अभयदान देना चाहिये की जिसका फल शिव है उसको प्राप्त करना चाहिये अठारह पापस्थानक में पहिले प्राणीहिंसा त्याग करनेकी है फिर दूसरे स्थानको की त्याग वृत्ति होती है अथवा पहिले प्राणातिपात विरमण व्रतका पालन करना वो दूसरे व्रतो की समाल क लिये क्षेत्रकी वाड रूप है। अपने लिये या दूसरे के लिये हिंसा नहा होनी चाहिये। ऐसी अच्छी चाल रखने के लिए रात्रि भोजन का त्याग चार प्रकार से सर्वज्ञ, सर्वदर्शि, परमात्माने परोपकार करने के लिये अनेक शास्त्र द्वारा फरमाया है साधु मुनिराज रात्रि भोजन का सर्वथा त्याग करते हैं याने पंच महाव्रत के साथ छठे व्रत का पालन करने की सूचना की है दूसरे जीवों को भी मनुष्यों का तरह कान, आख, नाक, मूंह वगैरह होते है, परन्तु विवेक पूर्वक अच्छे वर्तन रूप धर्म, मनुष्यो को ज्यादा है अनादिकाल से जीव खाता आया है। मगर तृष्णा नहीं छोडी, वहातक सन्तोष वृत्तिका सुख नहीं मिल सकता है।

सूर्य होता है जबही वातावरण स्वच्छ रहता है और वो नहीं, हो उस वक्त याने रात को वातावरण बिगडता। ऐसे बिगडे समय है

करोलिया कुष्ट रोग पैदा करता है। अरुवेश प्रमुखका कांटा तथा काष्ट के टुकडे तालवे को चीर डालते है। वडा वगेरे या उसके

खाना पिना फिरना राक्षस, भूत और प्रेत के मुताबिक है. और निशाचर (रातको आहार लेने वाले घुवड़ विल्ली) जैसे कहने में आते है. भोजन वनाते वक्त जहरी जीवो की तंतुवे किसी वक्त पड़ जाय तो देखने में नही आते, और फिर उससे अवसान होनेका कइ उदाहरण मिलते है.

जैसे किसीको मारकर भाग जाना अन्याय है. वैसेहि भोजन कर सो जाना अनारोग्य कर है। वास्ते सूर्यास्त के पहिले भोजन करलेनेका **वेद पुराण** में भी लिखा हुवा है। उसका उलटा अर्थ वताकर उपर वताये हुवे शास्त्र की आज्ञा का भंग करते है, चुंटी कुंथुं, जू, इयल, उधई, मच्छर वगैरे वहुतसे छोटे वडे जींव का घात रात को खाने पीने से होता है. इस वात को तमाम कवूल कर सकते है. यानी वो प्रत्यक्ष देखने में आता है. वास्ते यह काम आर्यो को भूषणरूप नही है.

जव मांगने से नही मिले और जोगवाई भी न हो, या विमारी में लंघन कर भुखा रहे. उससे रात्रि भोजन का फल नहीं मिलता, परन्तु शक्ति होने सें हरेक चीजकी जोगवाई मील जाय तो भी त्याग भाव से इच्छा का रोध करना चाहिये, ऐसा करने से रात्रिभोजन का त्याग करने सें दररोज आधा उपवास का महाफल होता है.

(१) **पुराण** आदि **वैदिक** शास्त्रो में भी रात्रि भोजन का महा पाप वतलाया हुवा है. उस कारण से—सूर्यास्त न हो, उन्हे पहिला भोजन करने का फरमान किया है.

समान आकारवाली चीजमें या शाक-तरकारीमें अगर साप विच्छूं आजाय तो ताजना फोड डालते है। याने जाल आ जाय तो गलेमें

और निशीथ सूत्रकी चूर्णि म भा कहा हे कि–गरोळी का अवयव रातको भोजन में आवे तो जरूर पेट में गरोली जेसे जीव उत्पन्न होते है और सपादि के तनु–विष गीर गया हो तो अवश्य मोत की निशानी है चुहे वगैरह् की लिंडी से पीसाबकी महा व्याधि होती है वैसेही व्यन्तर भी छलने है

उपर बताई बात निशीथ सूत्र के भाष्य में लिखी है रातको तैयार सुकी चीज लड्डु, पेंडा, खजूर, द्राक्षादि खाय, तो उसे रोशनी या चन्द्र प्रकाश होते हुवे भी कुंथु तथा पचवर्णि (रगनिगी) लील फुगी वगेरह की विराधना होती हे वास्ते अनाचरणीय है याने यो मूल व्रत का विराधक होना हे

स्कन्द पुराण में "रात को पानी को खून समान और अनाज को मास के ग्रास मुताबिक" कहा है

रुद्र ने कपाल मोचन सूत्र में कहा है कि–"रात को भोजन नही करनाले को तीर्थ यात्राका फल होता हे और दान, स्नान, श्राद्ध, पूजा आहुति और भोजन यह सभी रात को नहीं करना चाहिये।

१ आयुर्वेदमें–"हृदय और नाभिकमल रात को बन्द हो जाते है। जिसे उस वख्त कोइ (चार प्रकार से) आहार नहीं करना" ऐसा कहा है

योगशास्त्र में "शामको सूर्य दो घडी बाकी रहते वख्त और सुबह म दो घडी सूर्य उदय हो जाने पहिले रातके माफोक, खान पानका त्याग करने से महापुण्य होता है" ऐसा बतलाया है

बहुतही पीड़ा उत्पन्न करते है। इत्यादि रात्रि भोजन सम्बन्धी बहुत दोष हैं। कितनेक पशु, पंखी भी रातको भोजन नहीं करते। वास्ते यह बात भी देखकर रात्रि भोजन का त्याग करना चाहिये। दिन होते हुवे अंधेरे में या छोटे बरतन में भोजन करना भी उपर बताये मुताबीक दोषित है। दिन में बनाया हुवा भोजन रातको खावें. रातका बनाया हुवा रातको खावें. रातको बनाया हुवा दिन को खावें, यह त्रीभंगी अशुद्ध है। फक्त दिन को यतना पूर्वक बनाया हुवा भोजन दिनमें खावें वो ही शुद्ध है. मुख्यरीतिसे सूर्यास्त पहिले व सूर्योदय बाद दो घडी तक आहारका त्याग करना चाहिये। तथा (लगभग वेलाएं) याने सूर्य होते हुवे सूर्य-अस्ताचल की बहुतही नजदीक आ जाय याने थोडा स्वरूपमें नजर आवे या न आवे, सूर्य होगा या नहीं? ऐसा मालूम हो, उस वक्त से भोजन का त्याग करना चाहिये। चौविहार के नियम वाले महानुभावों को सूर्यास्त के दस मिनिट पहिले भोजन करना चाहिये। तिविहार दुविहार के नियम-वालों को भी उपर बताये मुताबिक अमल करना चाहिये, नहीं तो दोष लगने का संभव है। शास्त्रकारोने फरमाया है कि—“जो मनुष्य लगातार एक मास तक चौविहार करते

---

२ रात को भोजन करते वक्त पानी से भरा हुआ थाळ पास में रखने से जितने जंतु पडे हुवे देखने में आवे, उतने का मांसाहार होता हुवा प्रत्यक्ष जानकर रात्रि भोजन का त्याग अवश्य करना चाहिये.

रहे। उनको पन्द्रह उपवास का फल मिलता है. और वोहि भव्य आत्मा मोक्षका अधिकारी होता है. इनमे बिल्कुल संदेह नहीं है। अगर जो मनुष्य चौविहार करने को असमर्थ हो, उनको तिविहार दुविहार जरूर करना चाहिये। जैनशास्त्रो के अलावा=दूसरे मजहब के शास्त्रो में भी रात्रि भोजनमें जल रूधिर व अन्न मास के समान है। एक इटालीयन कविने नीचे लिखे मुतानिक कहा है:—

२ पाच बजे उठना, और नव बजे जिमना.
पाच बजे व्यालु, और नव बजे सोना.
इससें नेबु और नव वरस जीया जाता है.

---

१ श्राद्ध विधिमे—"(उत्सर्ग मार्गसें) दिन होते ही—दिवस चरिम पच्चक्खाण कर लेना चाहिये, ऐसा कहा है" योग शास्त्रादिक में दिवस चरिम शब्दका अर्थ—"अहोरात्रि का बाकी रहा हुवा समय" ऐसा बतलाया है, इसलिये रातको दिवस चरिम नहीं होना ऐसा एकान्त नही है। लेकिन बराबर ख्याल रखकर दिन को हि पच्चक्खाण कर लेना उचित है। चौविहार, तिविहार, दुविहार पच्चक्खाण लेन का अभ्यास हर एक जैन भाइयों को बचपन से ही होना चाहिये।

२ इस देशमें मजदूर वर्गमें सामान्य रूपसे तीन वक्त भोजन करते है और शिष्ट वर्ग में आम तौर से बालको के सिवाय दो वक्त भोजन करने का रिवाज था हाल में चाय का प्रचार होने के

इनका अर्थ यह है कि—पांच वजे उठना व नौ वजे भोजन करना. पांच वजे शामको व्यालु करना और नौ वजे

बाद प्रातः काल में कुछ खाने का रिवाज होगया है. नहीं तो विना कारण कोइ नही खाते, सिर्फ दस वजे भोजन करते और शाम को ऋतु के मुताविक पांच वजे के लगभग खाने का रिवाज था। दिन को सूर्य के प्रकाश से जठराग्नि तेज रहती है. इस लिये सुवह दस वजे का किया हुवा भोजन ७—८ कलाक में पच जाता है, व शाम को किया हुवा भोजन रात्रि में लगभग १६ कलाक की मदद से पच ज़ाता है. यानी दूसरे दफा भूख अच्छी लगती थी। जव ही भोजन करने में आता था। मारवाड़ प्रदेश में हाल में भी यह रिवाज़ देखने में आता है! लेकिन, इस समय में टाईम का ख्याल कोई नहीं करते. यानी सुवह, दो प्रहर, शाम, रात्रि को नही देखते हुवे खा लेते है, ज़िससे वहुत कों पित्त की विमारी कायम रहती है और उनका चेहरा पीला—फीका देखने में आता है। खून में सफेद—पीले रजकण ज्यादा होते व लाल कम होते है. अगर इस तरह अनियत वक्त पर भोजन होते रहे तो फायदा नहि करते है। महेनती मनुष्य के अलावा दो टाईम ही भोजन करनेका रिवाज रक्खे तो तन्दुरस्त रह सकते है, ऐसा हमारा ख्याल है। महेनती लोग भी इस नियम पर चले तो उनको भी अनेक लाभ हो सकते है। और उनको यह वात समझमें आसकती है। मगर उनको यह वात आज तक नहीं वतलाई गई, इस लिये इस लाभ को नही समझ सकते। और जरूरत होने पर दो वक्त से ज्यादा भी भोजन

रातको सोना. ऐसे नियम से चलने वाले मनुष्यों का आयुष्य पूर्ण ९९ वर्ष का होता है.

रातको भोजन छोडने से धर्म के साथ शरीर भी बहुत तदुरस्त रहता है. व इस लोक में वह जीव सुखी रहते

कर सकते है व साथ २ इसके आरोग्यता भी रह सकती है। पित्त के जोर से दिनमें खाया हुवा भोजन जल्दि पच जाता है। जैसे कि सूर्य की गर्मी से पित्त का जोर भूख को बढाता है, व "बादलो' से जठराग्नि कमजोर करता है। और हमेशा कफ के जोर से निद्रा भी बहुत आती है।

जठराग्नि भी कमजोर हो जाती है जैसे कि सूर्य का प्रकाश नहा होनेसे वातावरणमे भी मदता आती है। दिन में निद्रा लेने से कफ का जोर बढता है व शरीर कमजोर होता है, इन तमाम बातों को देखते हुवे रात्रिभोजन का हमेश के लिये त्याग करना चाहिये यह तदुरस्ती के लिये भी फायदेमद है। इस लिये समय पर दो वक्त भोजन करना ठीक माना गया है। जैन फिलोसोफी पच्चक्खाण में (छट्ठ) दो उपवास के आगे पिछे दो एकासणा (और दरमियान में दो उपवास) याने ७ वक्त भोजन करने का त्याग। अठम तीन उपवास क आगे पीछे दो एकासणा (व दरमियान तीन उपवास) जैसे ३+२=६+१+१=८ ऐसे आठ वक्त भोजन का त्याग याने पाच दिन मे दो वक्त ही भोजन किया वास्ते अठम=आठ वक्त का त्याग= पच्चक्खाण समझना मतलब यह है कि मनुष्य को दो वक्त ही भोजन करना सामान्य रीतिसे शिष्ट पुरुषों को सम्मत माना जाता है.

है। मनुष्य जन्म दस दृष्टांत से दुर्लभ वतलाया है। और चिंतामणि रत्नसमान जैन धर्म अगर पुन्य का उदय होने से मिलसकता है. वास्ते पाये हुवे मनुष्यजन्म से आत्माका कल्याण साधने के लिये प्रमाद को दूर कर रात्रि भोजन का त्याग करना चाहिये। जिसे चौरासी लाख जीवायोनि से मुक्त होकर मोक्षगति को प्राप्त कर सकें, बेटाबेटीयां पर मोह रखकर रात्रि भोजन कराना ठीक नहीं है. अगर वो रात्रि में आहार मांगे, तो उनको शारीरिक, धार्मिक नैतिक वगैरा रात्रि भोजन के दोष को समझाकर सुधारना चाहिये। [घरमें रात्रि भोजन करने का रिवाज न हो, तो संतान वगैरह भी नहीं करते.]

जो मनुष्य खुद रातको आहार अथवा दूध. चहा, काफी, कावा, वगैरह लेने की आदत वाले हो, वो उत्तम सामग्री प्राप्त करके भी खुद के मन को दृढ करके सकाम निर्जरा नहीं करते उनको किंपाकके फल समान दुःख होता है। जैसे कि–नारकी में सीसाका रस पिगला हुवा गरम २ पीना पड़ता है. तिर्यंचमें भूख तृषा की वेदना व पराधिनता के कारण चाबूक वगैरह सहन करनी पड़ती है। उस वक्त पश्चात्ताप होता है–कि "हा! हा! पिछले जन्ममें वहुत (अनाचार) पाप किये, वो अव उदय में आये है," इसलिये "हे महानुभावों! अव भी जागो, और रात्रि भोजन का त्याग करो. जिससे मोक्षलक्ष्मी जलिद प्राप्त हो जाय.

[आज कल के जमाने में सरकारी स्कूल के पढ़ने वाले विद्यार्थी, स्कूल बन्द होते ही क्रीकेट खेलने को जाते है, और उनको अवश्यमेव देरी होजाने से रात्रि भोजन करना पडता है। जैन बॉर्डिंग वगेरे में जहा नियम होता है. वहा जल्दि आना पडता है. व खेल बन्द रहता है और शाम को भोजन करने के बाद उपर बताये मुतावीक क्रीकेट वगैरह खेलना नुकशान कारक है। इस विषय में कितनेक लोग जैन विद्यार्थीयों को रात्रि भोजन की इजाजत दिलाने बाबत शिफारिश करते है। खेल के साथ लाभ जरूर होता है। परन्तु रात्रि भोजन करने से मानसिक शारीरिक को अधिक नुकशान होता है. वो सहन करना पडता है। यानी दो में से एक लाभ उठा सकते है। रात्रि भोजन के त्याग का फायदा जैन विद्यार्थीयो को उठाने के लिये क्रीकेट वगैरे खेल को बन्द करके प्रातःव्यायाम वगैरे की व्यवस्था कर देना चाहिये. जिसें दोनो प्रकार के लाभ हो सकें। गर्मी की ऋतु में दिन बडा होनेसे बहुत समय रहता है। इस-लिये जितनी देर खेल खेलना हो, वो खेल सकते है शक्ति से ज्यादा व्यायाम करने मे शरीर को हानिकारक होता है. जैसें "अर्ध-बलेन व्यायामः" यह आयुर्वेद का वाक्य है. और एक युरोपियन लेखक के लेख पर से भी यह बात सिद्ध होती है। वर्तमान समय में जगह २ बड़ी २ हॉस्पिटाले है, लेकिन प्रजा आरोग्यतामें रहे, ऐसा पूर्ण ध्यान कोई

नहीं देते. जिसे प्रजा की तन्दुरस्ती बिगड़ रही है। उनका आक्षेप उलटा प्रजा पर डाला जाता है। प्राचीन जमाने में प्रजाकी आरोग्यता वहुत श्रेष्ठ थी.

आजकल के समय में अखाडे वगैरह का वहुतसा साधन है जिसे कुछ संख्या शक्तिशाळि होती है। लेकिन साथ २ प्रजा की लाखों की संख्या शक्ति हीन होती जा रही है। अक्सर देखने में आता है कि छोटे गावों में रहने वालोंकी भी आरोग्यता जोखमदारी में है। यानी सच्चे रूपसे उनकी तंदुरस्तीकी तरफ कोई निगाह नहीं करते. लेकिन आरोग्यता के व्हानेसे प्रजाका धार्मिक, नैतिक वंधारण तुड़वाने का प्रवन्ध देखा जाता है. दिनमें आठ आठ घंटे कितावोका ही ज्ञान देने के वदलेमें महेनत का ज्ञान देने में आवे, तो प्रजा उद्योगी और परिश्रमी वनती है, व हौंशियार होती है। शाम को जरूरी महत्व की किताबे पढ़ाने में आवे या अच्छे मनुष्य का सतसंग किया जाय, तो भी सच्ची वुद्धि वढ़ती है। परन्तु इस सच्चे रास्ते का कोई अमल नहीं करते व देखादेखी चलते है.]

१५ व हु बीज=याने ज्यादा वीजवाले फल में वीज के दरमियान अन्तर न हो, अर्थात् वीज से वीज मिला हुआ हो। ऐसे फलादिक में गर थोड़ा व बीज ज्यादा होते है। जिसमें गर और बीज का अलग२ रहने की (स्थान) जगह नहीं हो. उनको ज्यादा वीज वाले फल समझना चाहिये:—

जैसे कि कोठीबडां, टींबरू, करमदे (बीज पैदा होने के अव्वले अनन्तकाय) बेंगन, खसखस, राजगरा, वगैरह. यानी इनमें जितने बीज होते है, उतनेही पर्याप्त जीव है. इसलिये त्याग करना चाहिये। ऐसे फल खाने में कम आते है मगर हिंसा ज्यादा होती है. इसलिये ज्यादा बीज वाले फल का बीलकुल त्याग करना चाहिये. [ज्यादा बीज वाले फल खाने से पित्त प्रमुख रोग होते है. और जिनेश्वर भगवान की आज्ञा के विरुद्ध है. कितनेक साधु मुनिराजों का मत है की दाडम, और टिंडोरा, अभक्ष्य नहीं है। कच्चे टिमाटे को भी वेगन की जाती समझकर (बहुबीज) ज्यादा बीजका शाक होने से त्याग करदेना चाहिये।

१९ सधान=शब्द से बोल्का आचार समझना चाहिये.. जिसको ज्यादा समय तक रखते है। वोह बहुतसी वनस्पतिया का होता है: जैसे कि:=आवळ, पाडल नींबू, केरी, गुदा, केरड़ा, करमदा, काकडी, डाला, गीले मरीय, खडुच, मिर्ची वगैरह का आचार तीन दिन बाद अभक्ष्य हो जाता है। यह सब तरह के आचार तुच्छ और त्रसजीव की खान है। कदमूल [अदरक, आलु, हल्दी, गरमर, गाजर, कुवार, और नागरमोथा, यह चीजें अनन्तकाय है। उपर बतलाई हुई चीजें तथा पंचु वर, बहुबीज, बीछा,—बीली हरा वांस वगैरा का आचार बिल्कुल नहीं बनाना चाहिये. क्योंकि ये चीजे 'अभक्ष्य है.

इनमें जरूर शुरु से चोथे दिन दोइंद्रिय जीव उत्पन्न होते है। झूठा हाथका स्पर्श करने से पंचेंद्रिय समूर्छिम मनुष्य की उत्पत्ति होती है। हरे तीखे (मरीय) जो मलवार से निमक के पानी में शामिल होकर आते है वो वोलका आचार है। वास्ते अवश्य त्याग करना चाहिये।

अन्य दर्शनीयों के शास्त्र में भी वोल का आचार नरक के द्वार गिना है। इस लिये हंमेश के लिए त्याग करका जरूरी है।

जिस फलमें खटाइ हों वो अथवा वताइ हुई चीजें शामिल हो, वो आचार, तीन दिन के वाद अभक्ष्य गिनने में आता है। परन्तु केरी, नीवूं वगैरा में नहीं मिले हुवे गुवार. गुंदा. डाला. खरवूच. मिर्ची वगैरा का आचार जिनमें खटाई न हो, वो एक रात्रि व्यतीत होने के वाद दूसरे दिन अभक्ष्य हो जाता है।

केरी और नीवूं की साथ मिला हुवा हो, तीन दिन खाने में आसकता है।

लेकिन उसमें भूंजी हुई मेथी डाली हो, तो वाशी रहने से दूसरे दिनही अभक्ष्य होजाता है. सवव मेथी धान्य है। मेथी, चनेकी दाळ या आटा मिलाया हुवा हो, तो उसी रोज हि कामसें आ सकता है।

और जिस आचार में मेथी डाली हुई वो द्विदळ होने से कच्चे गोरस–दूध और दहीं के साथ नहीं खाना चाहिये।

केरी, गुंदे, खारीक, मिर्ची वगैरह-का आचार, सुकाया जाता है. मगर उनको गर्मी बराबर नहीं लगे, और गीला रह जाय, तो तीन दिन के बाद अभक्ष्य हो जाता है। इस लिये तीन दिन तक बराबर सुखाना चाहिये, ऐसा-नियम नहीं. इस तरह सुखाने के बाद राई, गुड और तेल मिलावे। ऐसा आचार वर्ण-गंध, रस स्पर्श, फिरे नहीं, वहा तक खाने के काममें आ सकता है परन्तु तेल कम हो, तो जल्दी से बिगड कर अभक्ष्य हो जाता है।

वास्ते इस मुताबिक उपयोग पूर्वक बनाये हुवे आचार के पिछे भी बहुत ख्याल रखना पड़ता है।

(१) आचार की बरनीयों अच्छे गरम पानी से साफ करके फिर उनमे आचार भरना चाहिये।

(२) उन बरनीयों के उपर मजबूत ढकन लगाकर कपडे से बांध देना चाहिये, जिससे उसमें हवा नहीं जा सके. नहीं तो वर्षाऋतु में हवा लगके लील-फुग हो जाती है. जिससे अभक्ष्य हो जाता है.

(३) आचार, नोकर—चाकर व बालबच्चों के पास नहीं निकलवाना चाहिये. उपयोगवत मनुष्य खुद हाथ को स्वच्छ करके चमचा या दूसरे किसी साधन से निकालना चाहिये. मगर बने वहा तक हाथ से नहीं निकालना चाहिये। अगर निकाला जाय, तो उपयोग पूर्वक गीले हाथ को साफ करना

चाहिये। नहीं तो पानी का एक विन्दु गिरने पर जीवोत्पत्ति हो जाती है। इस लिये इस विषय में खास ध्यान रखना चाहिये।

(४) आचार की बरनीयों के उपर चिंटा चिंटी वगैरा जीव नहीं चढे, ऐसी जगह रखना चाहिये. व वर्षाऋतु में हवा न लगे ऐसे स्थान पर रखना चाहिये. कितनेक लोग आचार, मुरब्बा वगैरा अंधियारे मे रखते है, वहां निकालते वक्त उनका रस प्रमुख जमीन पर गिरने से वो जगह चिकनी व गंदी हो जाती है. जिससे मच्छरादि जीव चिपक जाता है और बरनीयोंका मुंह खुला रहने से उसमें भी गिर के मर जाते है। फिर वो कलेवर पेट में आते है. जिससे भयंकर बीमारी पैदा होती है. इसीलिये जहां अच्छा प्रकाश पड़ता हो, व जगह साफ हो, वहां रखना चाहिये.

(५) आचार को मामुली रूपमें सुखाया हो, तो आचार तीन दिन से ज्यादा काम में नही ले सकते, वास्ते उपर बताये मुताबिक सुखाना चाहियें। साथ यह भी बात बतलाई जाती है, की—आचार बनाते वक्त पानीका जरा भी स्पर्श नहीं होना चाहिये।

(३) ऐसे आचार की मुदत एक वर्ष से ज्यादा है.

---

१ आचार सरसों के तेल में इस मुताबिक डाला जाय की डाली हुई चीजें डुबी हुई मालूम होवे।

लेकिन ऐसा नही रखते हुवे जल्दि काम मे लेकर खलास कर देना चाहिये, और या फिर थोडा जम्रीका डालना चाहिये.

उपर लिखी हुई सूचनाओं के अनुसार बनाये हुवे अचार में दोष है या नहीं? यह बात केवलीगम्य–केवली भगवान के अलावा कोई नहीं बतला सकते। आज कल के समय मे जिह्वाइद्रिय के लालच से उपर की सूचना के मुताबिक नही सुखाते है सबब–उसमें ज्यादा सुखाने से स्वाद चला जाता है। ऐसे तुच्छ अचार को जिह्वाइद्रिय द्वारा विजय करके त्याग करने वाल रत्न शिरोमणि वीर पुत्र होते है. और वो लोग तारीफ के लायक है. कारण इस आत्माने अनेकवख्त हरेक चीजें खानें के काम मे ली, मगर तृष्णा नही गई. यह एक आश्चर्य है (अणाहारी) अनशन किये विना मोक्ष नहीं मीलता, मीलेगा भी नही, इसीलिये ऐसी तुच्छ अभक्ष्य चीजों की ममता छोड देना चाहिये जिसे हमेश के लिये अनाहारी पद प्राप्त हो. [आचार, मुरब्बा वगैरह सधाण–सोड रुप पदार्थ ज्यादा समय तक रखें जाय, तो उनमे जीवोत्पत्ति का सभव होनेसे बहुत से जैन बंधु ऐसी चीजों का हमेश के लिये सर्वथा त्याग रखते है. वो ठीक है]

(१५) घोलवडा–घोल्वडे यानी द्विदल–विदल और गायके दुध मे मिला करके बनाई हुई चीजें अभक्ष्य गिनने मे आती है।

द्विदल-विदल यानी सामान्य रुपसे जिसको कठोल धान्य कहा जाता है. वो हरेक का कच्चे गोरस के साथ खाने का त्याग करना चाहिये.

द्विदल की सामान्य रूप से यह व्याख्या करने में आती है. कि:—

जिसमें से तेल नही निकले, व वृक्ष के फल रूप न हो. और दोनो दल चीरके बराबर दाल बने, उनको द्विदल कहते है.

चने, मूंग, मटर, उड़द, तुवर, वाल, चवलां, कलथी, रह, लांग, गुवार, मेथी, मसूर, हरे चने, वगैरा द्विदल की चीजें है. हरी-सुखी चीजें, तरकारीयां का चुरा, दाल, और उसकी बनावट वगैरा भी द्विदल गिनने में आती है. जैसे कि कठोल मात्र के पत्ते की तरकारीयां-वालोर, चौलासींग, तुवर, मूंग मटनें, गुवारफलीं, हरे चने, पांदडी की तरकारी और सुकवणी, संभारा, अचार, दाल, फली, सेव, गांठिया, पूरी, पापड, बूंदी वगेरा भक्ष्याभक्ष्य के विवेक में द्विदल गिनने में आती हैं।

उपर लिखी हुई तमाम बातें लागू पडती हो, मगर जिसमें से तेल निकले, वो द्विदल गिनने में नही आते, राई, सरसों तिल:

मेथी डाला हुवा अचार वगैरा चीजे द्विदल मानना चाहिये.

उपर लिखी हुई तमाम बाते लागु पडती है, और झाड के फल रूप हो, तो द्विदल नही माना जाता है. जेसे किः-सागरी.

अलावा जिसके दो फाड नहीं बनती हो, वो भी द्विदल मानने मे नही आती. बाजरी, जूवार, मका,:-(इनमे तेल भी नहीं होता) वगैरा।

कच्चा गोरसः-यानी कच्चा दुध, दही, छाछ, उनके साथ द्विदल का सयोग होने पर दोइन्द्रिय जीव उत्पन्न हो जाते है, इसलिये वो अभक्ष्य है.

परन्तु अच्छा गरम करके, फिर ठडा करदिया जाय, व फिर उसमे द्विदल चीजे मिलाने मे आवे, तो दोष नहीं लगता है.

इस विषय का श्रावक के घर मे हमेश के लिये खास विवेक रहना चाहिये. द्विदल वाली चीज खाने के बाद पानी अवश्य पीना चाहिये, व हाथ मुह गोकर लुछ लेना चाहिये और वरतनो को वदल देना चाहिये. तात्पर्य यह है कि.-कच्ची या पकाई हुई द्विदल की बनाई हुई कोई भी चीज को दूध, दही, छाछ का स्पर्श नहीं होना चाहिये.

मेथी डाला हुआ अचार के साथ कच्चा गोरस नहीं खाना चाहिये

कढ़ी'-छाछ को अच्छी तरह गरम करने के वाद वेसन डाल कर बनाना चाहिये.

खट्टे ढोकले का आथा करते है. मगर उपर बताये माफिक छाछ गरम कर के बनाना चाहिये. स्वजन, संबन्धी, अन्य दर्शनीय, या अन्य जाति की रसोई वगैरा में भोजन करने का मोका आवे, तो विदल का अच्छी तरह उपयोग रखना चाहिये. नहीं तो चलते रास्ते दोष लग जाने का संभव है. और कढ़ी, राईता, वगैरा बनाया हुवा हो, तो पहिले शंका का निवारण करना चाहिये की छाछ को गरम करने के बाद (विदल) वेसन डाला गया था? या नहीं? इस तरह पुरी बराबर जांच करने के बाद खाना चाहिये।

घर पर भी राईता, कढ़ी बनाया हो तो विरतिवंत श्रावको कों बीना खात्री किये नहीं खाना चाहिये। हाल में बहुत सी जगह (गोरस) दहीं, छाछ, अच्छी तरह गरम करने की प्रवृत्ति देखने में नहीं आती, वास्ते विरतिवंत मनुष्यों को बराबर खात्री करना ही बेहतर है. अगर किसी जगह ऐसा पाया जावे, तो भोजन करने को नहीं जाना चाहिये।

आशा है कि-विरतिवंत मनुष्य तथा अन्य श्रावक श्राविकाएं अब से उपर बतलाये मुताबिक (गोरस) दूध, दहीं, छाछ, गरम करने की प्रवृत्ति में उद्यमवंत रहेंगे. द्विदल-के साथ कच्चा गोरस मिलने पर फोरन दोइंद्रिय जीव उत्पन्न होते है, वो आगमगम्य है। इसका वृत्तान्त आगे मक्खन के संबन्ध में बतला चूके है। इस लिये शंका नहीं रखना व

अभक्ष्य का अवश्य त्याग करना चाहिये । "भोजन करते वक्त खुद के घर पर द्विदल नही खाउगा, और अन्य के घर पर खास उपयोग रखुगा." ऐसा नियम असमर्थ (कायर) मनुष्यों के लिये है. किसी जगह भोजन करना लेकिन साथ २ इसके अभक्ष्य वस्तुए खाने का आगार नही रखना चाहिये। आगार रखे तो समझना चाहिये कि, "लड्डुभी खाना, और मुक्ति मे भी जाना" इस मुआफीक हुवा । लेकिन बधुओ और बहिनीया ! ऐसा करने से मोक्ष पद प्राप्त नहीं होता. मगर इसके लिये आत्म वीर्य की शक्ति रखकर त्रिकरण योग से ऐसी चीजों का त्याग किया जाय तो प्राप्त हो सकता है. अलावा इस शरीर के साथ माता, पिता, भाई, भगीनी के मोह का जब तक संबन्ध रखा जाय तब तक चार गति के चक्र में से निकलना बहुत मुश्किल है इस शरीर का तो अवश्य विनाश होने का स्वभाव है. इस लिये हे वीर पुत्रो ! शरीर पर से ममता भाव हटाकर मोह रुपी रात्रि का त्याग कर व निद्रा को दूर कर जाग्रत् होना चाहिये व पाये हुवे मनुष्य जन्म को सफल करना चाहिये ।

"आज करेंगे, कल करेंगे" इस तरह विचार करते २ यमराज के चक्कर में आ जाना पडेगा । जेसे कि'—

"आई अचानक काल तोपची,
ग्रहेगो ज्यु नाहर बकरीरी."

इसका सबब यह है कि—उनके फायदे या दोष का हमें मालूम न रहा हो, और वे फल जहरीले हो तो उसे आत्म-घात होता है। इस लिये वो त्याज्य है। वंकचुल राजकुमार को महान परोपकारी गुरुमहाराजने अपरिचित फल न खाने की प्रतिज्ञा करवाई थी। अत्यन्त भूख लगने पर भी उसने अपनी प्रतिज्ञा का दृढता पूर्वक पालन किया. जीसे उनके प्राण बचे। एवं उनके साथ दूसरे चोर अपरिचित फल खाने से मर गये।

हे भव्यात्माओं! ऐसे परम कृपालु एवं निःस्वार्थी तीर्थंकर महाराज तथा गुरुमहाराजका अपार दुक्ख से शीघ्र मुक्त करवाने का सदुपदेश अपने पूर्वपुण्य के उदयसे ही प्राप्त हुआ है। वह फिर से प्राप्त होना दुर्लभ है। पुण्यरूपी लक्ष्मी का व्याज खर्चकर यदि मूल धन का भी खर्च कर दोगे, तो अगले जन्म में सुख और सम्पदाएँ कैसे मिलेगी? इस हेतुसे शांत एवं गंभीर प्रकृति वाले अनंत गुणों के धारक उस परमात्मा की उस उत्तम शिक्षा को ग्रहण करो। और तदनुसार आचरण करके ऐसी शक्ति पैदा करो कि जिसे स्वयंके गले में मोक्षरूपी माला सुशोभित हो जाय।

२० तुच्छ फलः—एसे पदार्थकि—जिसमें कुच्छभी तत्त्व न हो। बहुत आरंभ करने पर भी तृप्ति न हो। जिसमें खाना थोडा और फेंकना अधिक हो। उदाहरणार्थ—चणीबोर, पीलु अथवा पीचु, गुंदी, म्होर आदि तुच्छ फल हैं। तथा

मूंग, चवले, गुँवार, वाल आदि की कोमल सींग और दूसरी जात के कोमलफल इन सब को तुच्छ औषधि मानना चाहिये।

चने के फूल, केरी के मोर–जिसमें गुटली न पडी हो, बोर के ठलिये में से गर निकाल कर खाना आदि मे भी दूषण लग जाता है। क्यो कि वनस्पतियें अत्यन्त कोमल अवस्था में अनंत काय होती है। इससे अनन्तकाय व्रत का भंग हो जाता है। ऐसी वस्तु को अधिक खाने से भी तृप्ति नहीं हो सकती है। तथा खाने में थोडी आती है। एव खाने के पश्चात् उसकी गुटली को बाहर फेंकने से मुँह की लार का परस्पर सम्बन्ध होने से असंख्याता संमूर्च्छिम जीवो की उत्पत्ति होती है। तथा जो पुरुष बहुत तुच्छ फल खाता है। उसे तत्क्षण रोग भी हो जाता है। यह सबसें तुच्छफल का हम्मेश त्याग करना चाहिये।

हे भाइयो! जब आपका तुच्छ ममत्व भाव इन तुच्छ अभक्ष्य वस्तुओ पर से उड जायगा, तभी आपको शाश्वत् अनंत सुखरूपी लहरो मे मग्न होने का समय शीघ्र प्राप्त होगा।

२१ चलित रस'–सडा अन्न, बासी रोटी, चावल, दाल, शाक, खिचडी, सीरा, लापसी, भजिय, थेपला, पुडला, वडे, नरमपूरी, ढोकला आदि अनेक रसोई ऐसी है, कि जो एक रात्रि व्यतीत होने के पश्चात् वासी हो जाती है। सूर्यास्त हो जाने के पश्चात् उन चीजोंका स्वाद, रंग, स्पर्श, और खुशबू बदल कर "चलित रस" होने से अभक्ष्य हो जाती है।

मिठाई वर्षाऋतु में अच्छी, उत्तमरीति से बनाई हो, तो उत्कृष्ट पंद्रह दिन। गरमी की मौसम में वीस दीन, शीतकाल में एक महिने तक भक्ष्य है। यदि बनाने में कच्चापन रह जाय, और उसका वर्ण, गंध, रस, स्पर्श बदल जाय, तो काल की मुद्दत पहले भी जैसे—आज की बनाई मिठाई आजतक ही, वर्ण, गंध, रस स्पर्श, बदल जाने से अभक्ष्य हो जाती है।

शास्त्र में जितना समय कहा है, उसके व्यतीत होने के पश्चात् उस वस्तुका चलित रस हो जाता है। तब असंख्य बेइंद्रियजीवों की उत्पत्ति उसमें होती है। इसलिये श्रावको को तिलमात्र भी अन्न अथवा झूठा अपने घर में न रखना चाहिये।

जो विवेकी पुरुष अपनी थाली में लीया हुआ अनाज वगैरह जूठा नहीं रखतें तथा थाली, कटोरी धो कर पीतें है, उनके निमित्तसें असंख्य समुर्छिम पंचेन्द्रिय मनुष्यों की उत्पत्ति होते ही बचती है। इसे उनको आयंबील तप के समान लाभ प्राप्त होता है। इसलिये जिमणवार करने के पश्चात् बरतनों और जूठा अनाज को रातभर नहीं रखना। दिन को भी दोघडी हो जाने पश्चात् झूठा साफ करदेना चाहिये। और वह जानवर के उपयोग में आ जावे तो ओर भी उत्तम है। लापसी, सीरा आदि सूर्यास्त के पूर्व ही घी के अन्दर दाना अलग करके भूंज लेना और रोटी के खाखरे कडक

बना लेना (जो नरम बिलकुल न रहे) तो वी वासी नहीं गिने जाते हैं।

रात को बनाई हुई रसोई भी खाना योग्य नहीं है। प्रातःकाल सूर्य निकलने के पश्चात् सूक्ष्म अन्न देखने में आ जाय ऐसा उजाला होने पर और रात को सूर्य अस्त के पहिले भोजनादिक से निवृत्त हो जाना यो दयालु श्रावक का आचार है।

प्रकरण २ रा

चलित रसका स्पष्टीकरण

- चलित रस किसे कहलाया जाता है ?

" जो वस्तु जिस जातिकी उत्पन्न हुई, उत्पन्न की गई, अथवा जिस २ स्वरूप में योग्यरीति से खाने के उपयोग में आ सकती है, वह यथास्थित रसवाली गिनी जाती है।

जिस वस्तु में यथास्थित रस उत्पन्न न हुआ हो, अथवा यथास्थित रस उत्पन्न होने के पश्चात् उसमें फेरफार हो गया हो, और वह खाने के लायक न हो, वह वस्तु चलित रस कहलाती है।

किसी चीज में सूक्ष्म फेरफार समय २ पर हुआ करता है, परन्तु अमुक प्रमाण में फेरफार हो कि, जिस फेरफार से उस वस्तु को उपयोग करने लायक न गिनीजावे, उसे चलित रस कहते हैं।

चलित रस के मुख्य वर्णन.

१ आटा
२ जलेवी
३ हलवा
४ अम्रती
५ मावा
६ मुरब्बा
७ सेंव आदि
८ खीर
९ केरी
१० पापड़
११ चटनी
१२ संभारा
१३ पक्वान्न
१४ चवाणें
१५ चूरमे के लड्डू
१६ रसोई
१७ ओदन
१८ दहीं
१९ दूध
२० घी
२१ वली
२२ ढ़ोंकले [खट्टे]
२३ दहीं वड़े
२४ खांकरे
२५ पापड़ के लोये आदि
२६ जुगली राव
२७ रायता
२८ भूंजा हुआ अनाज
२९ ढुंढ़णीआ

१. आटाः—वीना छाना हुआ आटा, पिसाने के पश्चात् कुछ दिनों तक मिश्र [कुछ सचित्त कुछ अचित्त] रहता है। पश्चात् वह अचित्त होता है।

पीसाने के पश्चात् विना छाना हुआ आटा—

श्रावण, भाद्रवे मास में पांच दिन तक मिश्र रहता है।

आसो, कार्तिक मे चार दिन। अगहन, पोस में तीन दिन। माह, फाल्गुण मे पाच प्रहर। चैत्र, वैशाख में चार प्रहर। जेष्ठ, आषाड में तीन प्रहर। पश्चात् अचित्त होता है।

जिस दिन पीसा हो वो दिन छाना हो तो सब ऋतुओं में उसी दिन अचित्त है। और दो घडी पश्चात् कार्यवश मुनिराज भी उपयोग मे ले सकते है।

सिद्धान्त मे आटेका समय निश्चित देखने मे नही आता, परन्तु अचित्त आटे में कटुता और वर्ण, गध, रस, स्पर्श पलट जाय, तब अभक्ष्य है। तथा जीवकी उत्पत्ति मालूम पडे, तो वह आटा छानकर भी नहीं खा सकते। याने वो अभक्ष्य मानना।

और वर्षा ऋतु में आटे को प्रत्येक दिन मे दो वक्त और शियाले तथा उन्हाले में एक वक्त छानना। कारण कि–उसे न छानने से उसमे जाले पड जाते हैं, और वह शीघ्रही बिगड जाता है। तथा हरएक समय काम मे लाते समय अवश्य छानना चाहिये। जीससे जीवो की यतना हो सके। [यान्त्रिक चक्की द्वारापिसा हुआ आटा गरम होता है। इससे उसको एकदम बिना ठडा होने के पूर्व ही भरदेने से भाफ के कारण गराक म पानी छूटता है इससे आटा गठरा-हो जाता है। और वह गद्दू बनेम दवा देता है। इससे वह अभक्ष्य होता है। इस कारण उसे ठडा होने के पश्चात् भरना चाहिये। यन्त्र चक्की द्वारा पिसे आटे का भक्ष्य रहने का समय बहुत कम है। यन्त्र चक्की द्वारा पिसा हुआ आटा -

खाना यह प्रजा का कमनसीब है। इसमें से सत्त्व का नाश होजाता है।

विटामीन की चर्चा करने वाला जमाना मसीनका आटा नहीं छोड़ सकता है। गाँवडे के मजदूर, कीशान भी अपने सिर पर बोजा उठा के लाते हैं और उसे पिसवा कर ले जाते हैं] बाजरी का आटा गेहूँ, चने की अपेक्षा सें बहुत शीघ्र खराब हो जाता है। इसका ध्यान रखना चाहिये।

विना कारण आटा अधिक न पिसवाना चाहिये। और बाझार से भी आटा खरीदना नहीं। कारण यह है कि-व्यापारी के पास बहुत दिन का पुराना माल रहता है, और वे सड़ा हुआ हल्का माल विना साफ कीये भी पिसालेते हैं। क्यों कि उनको व्यापार करना है। इससे वे ऐसा ही करते हैं। जीससे अपने घर पें अच्छा माल मंगवाकर, देख साफ कर उपयोगपूर्वक पिसना और पिसवाना और छानकर उपयोग में लेना।

गेहूँ आदि में कितनेक वक्त बहुत छोटे छोटे छेद होते हैं। उसमें धनेरिये आदि अनेक जीवों की उत्पत्ति होती है वे जीव बहुत छोटे छोटे होते हैं इससे वे एकाएक निकल नहीं सकते। परन्तु जब वड़े हो जाते हैं तब उस दाने में से कहीं निकल सकते नहि। इससे उन दानों को चुन कर उनको उपर्युक्त जगह में रखदेना चाहिये [या जीवातके खाने में भेज-देना चाहिये।] परन्तु कितनेक व्यक्ति उनमें सिर्फ छेद है, एसा समजकर वैसे ही पिसवाने को दे देते हैं। यह दुख की

बात है। अपने जरासे स्वार्थ के लीए यह प्रमाद महान् अनर्थ-कारी होता है। [परन्तु कितनीक वख्त लोको अधिक अनाज भरते है, वो ऋतु परिवर्तन के कारण आखिर में कचित् सड जाते है। वो दाने यदि कितनेभी अधिक क्यों न हो, लेकिन उनको काममें न लेना चाहिये। वास्तव में जिस भाँति चाहिये उस भाँति एक मन, दो मन या पाँच मन साफ कर के अच्छा माल लेना ठीक है। परन्तु यदि यह न हो सके और अधिक आवश्कता हो, तो उसे ध्यान पूर्वक, सुरक्षित कीस भाँति से रखना चाहिये ? यह खास अनुभवियों से पूछ लेना चाहिये। प्रत्येक को सुरक्षित रखने की भिन्न भिन्न रीति है। कितनेक बाजरी, गेहूँ आदि राख में मिलाते है। मूग आदि रेत में दबाते है। कितनेक में पारा भी डाला जाता है। कितनेक को कितनेक स्थान पर एरण्डीका तेल लगाते हैं। कोई कोई स्थान पर चूना भी डाल्ते है। किसी मे पारे की डलिया डाल्ते है। *यद्यपि इसमें की कोई भी रिति अन्न के मूळ गुणो* के हानि करती है, और इसी रीति से करने में न आवे, तो फीर जीवजतु से सड जावे, यह भी मुश्केली होती है।

पारा खूब नुकसान करता है। जिस पर एरंडी का तेल लगा हो उस पर यदि जतु चढे तो चिपकर मर जाता है, इस लिये हर प्रकार से सावधानी रखना निहायत जरुरी है। जरुरत अनुसार अच्छा देखकर खरीदना यह आदर्श प्रणाली है। परन्तु यह स्थिति बडे कुटुम्ब में या अनावृष्टि आदि कारणो

में टिक नहीं सकती। इससे संग्रह भी करना होता है–इस भारतवर्षमें से जब–अनाज परदेश बहुत नहीं जाता था, तब तक प्रत्येक कुटुंब हरेक प्रकार के धान्य पृथक् पृथक् रीति से संग्रह करके कालजी पूर्वक रक्षण करते थे। यह सब अनुभवी-ओंसें जान लेना चाहीए.]

राखमें भारना, पारा देना, तथा सार संभाल लेना चाहिये। उसमें भी वर्षाऋतु में खासकर के प्रत्येक वस्तु में जीवों की उत्पत्ति होनेका संभव है। इससे विशेष समाल कर रखना चाहिये।

यही सब कार्यों में ओरतोंने विवेक तथा चतुराईपूर्वक अपना फर्ज समझ उपयोग रखना चाहिये। यदि बन सके, तो दूसरे को पीसने के लिये भी न दे। कारण पीसने वाले को तो मजदूरी करना है। वो चाहे घंटी साफ करे या नहीं, स्वच्छता की दृष्टि से भी दुसरी कीतनी बातो का भी उपयोग कैसा रख सके? घंटी के ऊपर चन्द्रवा आदि हो या न हो [प्रायः वे धर्म से परिचित न होने के कारण वे शुद्धि, यतना आदि का उपयोग कैसे रख सके?] तथा वे तिथि के भी दिन पीसेंगे। और उसमें भेल कर देवे, [बहुत लोग "हाथ से पीसेंगे" एसा कह कर पैसे ले लेते हैं, और यन्त्र-चक्की में पिसवा कर ठंडा कर के आटा दे जाते हैं।] कीन्तु यह यंत्र के जमाने में गरीब भी चक्की के द्वारा आटा

पिसवाते है। तब फिर धनवान, श्रीमतपुरुषों की तो वात ही क्या ? परन्तु धर्म तो अमीर और गरीब सब के लिये समान है। शास्त्र में घटी के ऊपर जीवदया के लिये चंद्रवा न होने से अनेकानेक दोष बताये हैं। [जीव दया के कारण] आज के पचीस पचास वर्ष पूर्वे अमीर के घरवाली स्त्रीया भी हाथ से पीसते और पानी लाते थे। तथा दूसरा कार्य भी खुद ही करते थे। यह भी जीव दया के कारण करोगे तो इस में आपकी कोई लघुता नहीं है। यदि चतुर महिलाओं का इस वात पर ध्यान रहे तो वो अच्छा उपयोग रख के अनेक जीवो को जीवित दान देने का उत्तम फल प्राप्त करें, और क्रमानुसार सुख संपदा भी प्राप्त करे। इससे जयणापूर्वक करना यही उत्तम है।

[आज कल की कितनीक लडकिया भोजन बनाने में भी अप्रसन्न है। तो फिर हाथ से पीसना, खांडना और जयणा आदि की आशा उनसे किस प्रकारे की जावे ? वे आज कल की शिक्षण पुस्तकें पढ़ना और लिखना सीखती है, परन्तु वे जीवनोपयोगी योग्य शिक्षा, धार्मिक जीवन, यतना, जात महिनत आदि योग्य तत्वों से वंचित रहती है। और आर्य संस्कार तथा धर्म से विमुख बनती है। अग्नि के अन्दर से जिस भाति पानी की आशा रखनी व्यर्थ है, उसी भाति आज के जमाने के शिक्षण से यतना और काळजीपूर्वक जात महेनत के जीवन की आशा रखनी व्यर्थ है। कितनीक पढ़ी

लिखी बहिनों में यह संस्कार कोई कोई बक्त देखने में आता है। वह तो प्रायः उनके कौटुम्बिक वास्ते का है। सारांश यह है की आधुनिक पढ़ाइ जहां तक बाल्यावस्था में है वहां तक पूर्व के संस्कार बने रहे हैं। फिर वर्तमानकी पढ़ाइ जिस जिस भांति विशेष मजबूतारूपे चले जायगी, उस उस प्रकार पीछे के जीवन के सुन्दर तत्त्व भी मजबूत रीतिसे अदृश्य होने की संभावना है।]

२ जलेबी—जलेबी का आथा करने की जो रीति है, वह जीवों की उत्पत्ति का कारण है। कोई जगह दिन में आथा तयार करके उसी दिन उपयोग में लेते हैं, और "इसमें दोष लगता नहीं" ऐसा कहते हैं। परन्तु इस विषय पर तपास करने से पत्ता लगता है कि पुराने मेंदे का जावन दिये विना नया मेंदा फुलता नहीं है। और उससे वीना जलेबी फूलती नहीं। आथा होता है तो जलेबी फुलती है। मैंदा फुलता नहीं, इस लिये जलेबी अच्छी बनती नहीं है। इस लिये जलेबी अभक्ष्य हैं। उसमें असंख्य बेइंद्रिय जीव उत्पन्न होते हैं। इससे उसका हमे त्याग करना चाहिये। ऐसा सुना जाता है कि—जलेबी उसी की उसी दिन नहीं बनती। बाजार में जलेबी बनती है वह रात का आथा की बनाई जाती है। इस लिये सर्वथा अभक्ष्य है।

३ हलवा—लीला, सूखा, बदाम आदि कई जातका हलवा अभक्ष्य है। क्यों कि गेहूँ के आटे को दोतीन दिन सड़ा

कर उसमे से सत्त्व निकाल कर उसे बनाते हैं। इससे उसमें असंख्य जीव उत्पन्न होते हैं। इस हेतु से उसका सर्वथा त्याग करना चाहिये। दुधी का हलवा जिसदिन बना हुआ उसी दिन भक्ष्य दुसरे दिन अभक्ष्य हो जाते है। जलेबी, हलवा, या जो चीज अत्यंत आरंभ से बनाई जाती है इनका अवश्य त्याग करना चाहीए।

बम्बई मे हलवा बहुत प्रसिद्ध होने से, वहा से जो लोग अपने वतन जाते है वह साथ ले जाते हैं। परन्तु भाईयों! अनेक बेइन्द्रियादिक जीवों की हिंसा करने वाले पदार्थ को खाने का उपयोग में लाने से अपनी आत्मा को कठिन फल भुगतने पडेंगे। उस वख्त माता-पिता, भाई-बहन, स्वजन, कुटुम्बी या मित्र अथवा स्त्री कोई उस महादुख्ख में से निवारण करने के लिये नही आयेंगे, न उस वख्त होते हुए दुक्ख में से [निवारण करने के लिये] थोडा बहुत आप भी स्वीकार करेंगे। भोक्ता अपनी आत्मा ही बनेगा। इस लिये इस प्रकार के अभक्ष्य पदार्थ बिल्कुल उपयोग में न लेना चाहिये। वैसे ही ज्ञाति मे, रिश्तेदारी में अथवा किसी दूसरे के वहां भोजनके लीए जाते वख्त अैसी अभक्ष्य चीजों को विष समजकर उसको स्पर्श भी न करना चाहिये।

शक्कर आदि के खिलौने जानवर के रूप में जो बनाये जाते हैं, वो भी अभक्ष्य है। क्योंकि यशोधर राजाने पूर्व

जन्म में माता के दाक्षिण्यता से उड़द का कुकड़ा मारकर उसको मांस की भांति भक्षण किया था, इससे वारंवार कितने ही तिरियंच के भव करना पड़े ? व छेदन भेदन किया गया ? इस सबब यह जरूर वर्जनीय है। धर्मी मातापिताओं ऐसी बाबत पर लक्ष्य रख कर अपने बच्चों को भी समझाना चाहिये।

४ अम्रती—कलकत्ता तरफ बनाई जाती है। उसकी शकल जलेबी की भांति ही होती है। लेकिन अम्रती बनाने में आथा नहीं करना पड़ता, इससे यदि उपयोगपूर्वक बनाई गई हो, तो उसी दिन खाने में कोई हरजा नहीं। दूसरे दिन वह अभक्ष्य हो जाती है। इस हेतुसे कब बनाई गई है ? इसका निर्णय करके ही उपयोग में लेना चाहिये।

५ दूध का मावा—जिस दिन बनाया हो उसी दिन भक्ष्य है। रातको अभक्ष्य हो जाते है। यदि उसको घीमें कीट्टी बनाकर तल लिया जाय तो रात को भी रह सकता है।

उसके पेंड़े, बरफी आदि मिठाई बनाना हो तो ताजे मावे से कीट्टी बनाकर फोरन बना लेना चाहिये और चार पांच दिन में उस मिठाई को समाप्त कर देना चाहिये। ज्यादा दिन रखने से खट्टी हो जाने की तथा लीलन-फूलन जम जानेकी संभावना है। और इसी प्रकार बहुत से व्यापारी की दुकान पर की मिठाई पर लीलन-फूलन देखने में आती है। जैसे मावे की मिठाई सर्वथा अभक्ष्य है। वैसे ही मावा

कच्चा रह गया हो यानी उसके अन्दर दूध का अगाही भाग रह गया हो तो उस मावे की मिठाई उसी दिन उपयोगमें लेकर पूरी करनी चाहिये। शक्कर डाला हुआ मावा जो बीकता है वो वासी होने से दूसरे दिन नहीं लेना चाहिये।

कितनेक दगाबाज मावे में बटेटा, रताळू, प्रमुख कंद मिलाकर उसका मिश्रण बनाकर बेचते हैं। इस लिये उसका ध्यान रखना चाहिये।

हे भव्यो? ऐसी मिठाईया में प्रथम, मध्यमें, और अन्तमें, कितनी हिंसा होती है? तथा कितना दगा होता है? इसका ध्यान दीजिये। जलेबी, हलवा आदि मिठाई बीगर क्या आपकी उदर पूर्ति नहीं हो सकती? अथवा, अन्य भक्ष्य मिठाई नहीं मिलती? जिससे इन अभक्ष्य मिठाईका उपयोग किया जाय? उन वीररत्नों को धन्य है! कि जो प्रारभसे ही निष्पन्न हुई मिठाई के रसास्वादन से विमुख होकर उसका सर्वथा त्याग करते है। यह बात यथार्थ है कि एक रसइन्द्रिय के तुच्छ स्वाद के लिये असख्याता जीवो की हानि होती हैं, तो भी भक्ष्याभक्ष्य की तर्फ ध्यान न देकर, अनादि काल की रफ्त के मुआफिक मुह हिलाया ही करना, यह कितनी आश्चर्यजनक बात है?

अपना मुख कब बद रहेगा? और अनत सुखमें कब लयलीन होगा? जब कि-रसनेन्द्रिय ही वश में न हुई तो

बाकी की शेष चार इन्द्रियां कभी भी वशमें होने की नहीं। इससे रसनेन्द्रिय जो कि प्रबल है उसको कब्ज़ करना चाहिये।

चतुर भ्राताओं! देखिये, श्रीमहावीर भगवान्ने साड़ा-बार वर्ष में सिर्फ ३४९ दिन भोजन किया। शेषकाल में तपश्चर्या की है।

वैसे आत्मशूर महापुरुषो ही आत्मा का कल्याण कर सिद्धि महल में पहोंच गये है। रसनेन्द्रिय को वशवर्ती होकर पौद्‌गलिक सुख में मग्न होते हुए अपन सब लोग चतुर्गति में भ्रमण कर रहे हैं, और कष्ट का अनुभव कर रहे है। तथापि हे चेतन! अनादिकाल की कुवासना क्यों नहीं मिटाता हो? अब तो चेत! चेत! श्री जैनशासन फिर फिर मिलने की चोकस खात्री नहीं है! वास्ते इसी शरीर से कुच्छ अपना जीवन साफल्य कर ले! कर ले!

६ मुरब्बा— "केरी का मुरब्बा-तिनों ऋतु में वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श न फिरे वहां तक भक्ष्य है, अन्यथा अभक्ष्य हैं।" ऐसा सेनप्रश्नादिक में कहा है। तथापि अथार के लिये रखनेकी, निकालनेकी जैसी जुक्ति बतलाई है, वैसी सब जुक्ति मुरब्बा के लिये भी रखना चाहिये.

चोमासाकी मोसममें मुरब्बे में लीलन-फूलन हो न जावे, ऐसी संभाल-जुक्ति से और योग्य स्थल में रखना चाहिये.

मुरब्बा की चासणी जो कच्ची होगी, तो फौरन वो बिगड जायगा। कच्ची चासणी का मुरब्बा में पदरह–बीश दिन में–लीलन फूलन हो जाती है। अर्थात् बनाने मे खूब उपयोग रखना चाहिये।

बीजोरां, सफरजन, मोसंबी का मुरब्बाका उल्लेख कहीं शास्त्र मे देखने मे आते नहीं, इसी लिये वर्ण गंधादिक का परिवर्तन का उपयोग रखना चाहिये।

मुरब्बा, अचार वगैरह खुल्ले रखने से बिगड जाते है और मीठाई, चवाणा [सेव, गाठीये–आदि] बिलकुल बंध रख ने से बिगड जाता है, और वर्षाऋतु मे तो हवा लगने से भी लीलन–फूलन हो जाने से अभक्ष्य हो जाता है।

इसी लिये जो चीज जिस रीति से रखने से अच्छी रह

---

१ तिन तार की चासणी में मुरब्बा बनाने से ढीला गुड की माफक रहेगा और बिगडेगा नहीं परन्तु आमला या तो सफरजन का मुरब्बा का रसा दवाई मे लेते है, सो जुना पुराणा नहीं लेना चाहिये।

शरबत—अनार और गुलाब का और भी कई तरह का होते है, वो अभक्ष्य है क्योंकि उनकी चासणी बहुत कच्ची रखनी पडती है, और पानी खूब डालना पडता है,। सीसा में पेक होने पर भी नींबू अचार की तरह वो भी अभक्ष्य है।

सोरबा—यो भी अनेक हरी वनस्पति का बनता है, सो भी अचार की तरह अभक्ष्य है।

सकती है। उन के लिये खूव इंतजाम रखना चाहिये. और जिस तरह वन सके उसी तरह जिह्वास्वाद कमी रख असी वहुतसी चिजों का त्याग करना ही उत्तम है। तथापि यदि अपनी जिह्वेन्द्रिय वस में न रह सकती हो तो, सव वातोमें अच्छी तरह से उपयोगपूर्वक वर्तना चाहिये. अन्यथा अनेक प्राणीओ के विनाशक होकर दुर्गति का अतिथि वनकर पूर्वकृत कर्म का फळ का अनुभव करना ही पडेगा. अर्थात् दोही मार्ग है—१ जिह्वेन्द्रियका जय करना या २. प्रमाद छोडकर यतनापूर्वक वर्ताव करना, जिस से अल्प दोष लगने का संभव रहता है।

७. **संभारा**—तथा सेव, वडी, पापड, खेरा, फरफर, उड़द की सेव, सालीवडां, खीचीका पापड, वगरह सियाले में और उन्हाले में सूर्योदय वाद आटा वांधकर वनाना

---

१ सेव [परदेशी मेंदा की अभक्ष्य है] पापड, उड़दकी सेव का आटा सूर्योदय वाद ही वांधना चाहिये. फरफर, खिचि का पापड, सालिवडां इत्यादि चावल का आटा को रांधकर वनाते है, वो भी सूर्योदय वाद ही करना चाहिये. खेरा—जो चणाका आटा आथकर मशालामिश्रित वनाते है, वो भी सूर्योदय वाद आथकर वनाना चाहिये, नहींतर वो अभक्ष्य है। विरतिवंत को अवश्य खाते पहिले इसी वात का उपयोग रखना चाहिये कि—कैसे ? कव ? और कीसी विधि से ? चीज वनाई गई है ? भक्ष्य है ? या अभक्ष्य है ? इस वात का विचार कर पीछे उपयोग करना युक्त है।

और सूर्य अस्त के पूर्व ही बराबर सुखजाना चाहिये, नही तो वासी होजाते है। चातुर्मास में इस प्रकार की वस्तुएं बनाना और खाना या रखना योग्य नहीं है। क्यो कि उसमें त्रस जीव तथा लीलन-फूलन की उत्पत्ति हो जाती है। कदापि चातुर्मास मे पापड असाड सुद १ से पूर्णिमातक बनाये गये हो, और खाने के वास्ते रखना होतो उनको वग्त वग्तपर सुखाना चाहिये, एवं वार वार हेर फेर करना चाहिये। परन्तु आजकल आलस्य के वशीभूत होकर एसा उपयोग नहीं रखते है। इस लिये चातुर्मास में नही खाना ही उत्तम है। कितनेक लोग सियाले, उनाले में बनाये हुए सेव, पापड, चातुर्मास और दूसरे सियाळे तक रखते है, मगर वो अयुक्त है। असाड सुद पूर्णिमा के पूर्व जो वस्तु उपयोग मे लेलेनी चाहिये, और कार्तिक सुद पूर्णिमा के बाद बनानी चाहिये। सेव, पापड जो बाजार मे मिलते है, यह बिलकुल नही लेना चाहिये। उपयोग पूर्वक घर पर बनाया गया हो, वो ही उपयोग में लेना चाहिये। "पापड और वडी चोमासे मे अभक्ष्य है" एसा श्राद्ध विधि में कहा है।

८ दूधपाक–रावडी, खीर, शीरावड, दूध, दूध की मलाई आदि दूसरे दिन वासी होजाते है। सबब अभक्ष्य है। वैसे ही रात को बनाया हुआ भी अभक्ष्य है। जिव्हा की लोलुपता से ऐसी चीजें रातमें वासी रखकर दूसरे दिन खाना शर्म की वात है। दहीं की मलाई का समय दहीं के मुआफिक ही जानना।

९ केरी–आर्द्रा नक्षत्र वैठे, वहांसे पक्की केरी का रस चलित होता है, उसे वो केरी अभक्ष्य है ॥ वास आती हुइ, सड गइ हुइ वीगड़ गइ हुइ, हंमेश के लीए अभक्ष्य है ॥ आम चूसके खाना, उस्से उनका रस नीकाल के खाना व्याजवी है ॥ सववकी चूसनेसे उनका गोटला जहां डाले वहां अपनी लाळ लगीहो, उस्से असंख्य समुर्छिम लाळीये और पंचेन्द्रिय मनुष्य उत्पन्न होवे । फीर भी केरी में त्रस जीव (कीडे) कभी नीकलते है । रस नीकाला हो, तव उनमें जीव देखने में आनेसे रस का जंतु पेटमें न जाते है, उनकी और अपनी रक्षा होती है । चूसनेसे सचित्त रसका उपयोग होता है । अचित्त का नहीं होता है । केरी का रस उन्हाले की उग्र गरमी से सुबे का नीकाला हुआ साम तक रहने का असंभव है । वास्ते जव उपयोग करना हो, तव रस नीकालना । और चार, छ याने आठ घंटे तक रखना हो, तो ठंडे पानी के वरतन में रस का वरतन रखना । जहां गरमी न लगे वैसी जगा में रखना । आर्द्रा नक्षत्र से केरी का अवश्य त्याग करना जरूरी है । क्यों की उनके वादमें यह क्षेत्रमें केरी प्रत्यक्ष विगडी हुइ मालूम होती है, वरसाद आदि कारण से कोइ वक्त जल्दी भी वीगड़ जाती है, इसी लीए शास्त्रकाकारोंने "आर्द्रा" की मर्यादा रक्खी है, वो झूठी ठरती नहि । (क्यों की–आर्द्रा में वरसाद का खास संभव होने से यह वरावर है । आगे पीछे की वस्तुस्थिति चाहे जैसी हो,

लेकीन अमुक काल मर्यादा नकी अवश्य करनी चाहिए, नहिं तो कुच्छ भी व्यवस्था रहती नहीं ।]

[दूसरे देशोंमे चातुर्मासमें केरी पकती है, वहा के लिए भी शास्त्र में अलग उल्लेख मालुम नहिं पडता है । याने सामान्य रीति से वो देशो मे भी आर्द्रा के वाद में केरी अभक्ष्य गीनने की अनुमान से शास्त्राज्ञा मालूम होती है । नहिं तो, पूर्वाचार्य के विहार भारतवर्ष के हरेक विभाग में रहा हुआ है, यदि जो कुच्छ फेरफार होता तव वैसा उल्लेख हरेक स्थलों में करने मे आता, लेकीन वैसा उल्लेख अव-तक देखने मे आया नहिं है ।]

१० पापड—भुंजा हुआ पापड का दूसरे दिन रूपान्तर होजाने से वासी होता है, तैल या घी में तळा हुआ दूसरे दिन वापरने में आ सकते है । पापडमे लीलन–फूलन की वहुत समाल रखनी चाहिए.

११ चटनी–कोतमीर, फोदीने की चटनी करने में आती है, उनमें भुजा हुआ चनेकी दाल या गाठीया (वड़ी) विगेरे डाल के वनाइ हुइ हो, तो वोही दिन भक्ष्य, दूसरे दिन वासी होने से अभक्ष्य है । खटाइ (लींबु कोठ प्रमुख) वाली कोतमीर फोदीने की पाणी वीगर की कोइ भी अनाज डाला न हो, वैसी चटणी तीन दिन तक ली जावे । छुटते वक्त पाणी डाला हो, तो दुसरे दिन वासी अवश्य होवे । खटाइ

वीगर की चटणी ताप में सुखाइ होवे, तो दुसरे दिन लेनेमें हरकत नहिं। अन्यथा शंकास्पद माननो। योग्य रस्ता तो यह है कि ताजेताजी रोज बना के खाना उत्तम है। कभी उसमें झूठा पड़जावे या झूठे हाथ का स्पर्श हो जाय, उससे भी अभक्ष्य होती है।

१२ संभारा–आटा या मेथी या पाणी डाल के बनाया हुआ संभारा दूसरे दिन वासी होता है।

१३ पक्वान्न–मीठाई गोलपापड़ी या पाक के लड्डु जो पाणी वीगर होता हैं, वो वर्ण, गंध, रस, स्पर्श, फीरने से अभक्ष्य होता है। इसी लीये "पक्वान्न का काळमान खास तौर पर निश्चित नहीं कर सकते है, "विशेप काळ भी पहोंचे" वेसा शास्त्र में भी कहा है। जिसने गूड़की और घीकी वीगइ का त्याग कीया हो, और नीवीयाते की जीनको छुट हो, उनको वोही दिन की वनाइ हुइ गोलपापड़ी लेनेमें काम न आवे। दुसरे दिन ली जावे। क्यों की–वोही दिन उनमें वीगइ पणा रहता है, वास्ते नाही। तो भी उत्कृष्टसे सुखड़ी की काळ मुतावीक लेनेमे ठीक है. सवव की कीतने वख्त रसनेन्द्रिय में लुब्ध हो जानेसे उनका वर्ण गंधादिक पल्टा हुए, और मालूम नहीं तो वो वापरने में दोप लगता हैं। वास्ते गोल पापड़ीका काल पक्वान्न के काल जीतना कहा है उस मुतावीक लेना वो ज्यादा ठीक है।

मिठाई अच्छी उत्तम प्रकार की वनाइ हुई वर्षाऋतु में

उत्कृष्ट पदरह दिन, गरमी की ऋतुमे वीसदिन, और ठड़ी ऋतु मे एक महिना तक भक्ष्य है, बाद में अभक्ष्य है।

हल्वाइ की दुकान की मिठाइ बहुधा वैसी उत्तम नहोने से उनका काल कम समझना। और जो वर्ण, गंध, रस, स्पर्श फीर जावे तब तक काल के पहिले भी अभक्ष्य होजाय। हल्वाइ की दुकान की मिठाइ वापरने मे अनेक दोष है। जीसमे अपने घरपे बना के या बनाके खाना वोही उत्तम है। दूसरी बात यह है की-जो पानी पीके झूठी कटोरी वोही बरतन में डाले, उसे असख्य समुर्छिम जीव होते है, ऐसा पानी को मीठाइ बनाने में डाले। जुना माल (खुसडी) बिगडी हुइ हो उनका चूरा वगरह नवी मिठाइ के साथ भी मीलाते है-आटा वगरह पुराना माल वापरने मे आवे, पानी बीना छाने भी वापरे. रातको आरंभ करके बनावे, परदेशी मेदा वगैरेह अभक्ष्य चीजें वापरे, घी बील्कुल हल्का और कडसा भी वापरें, लकडी, चूला, वगैरेह साफ करे या नहि, उनके चूले पर चदरवा कहांसे होवे? ऐसी सभाल बिना धमाल सें बनाते रहने मे एकेंद्रिय से लगा के चौरेन्द्रिय ओर असन्नी-समुर्छिम पचेन्द्रिय तक के अनेक जीवो की भयकर हिंसा होती ही है। षट्काय का आरंभसमारंभ होता है। वगैरह सबब सें हल्वाइ की दुकान की मिठाइ या सेव, गाठीया, बुंदी, चवाणा आदि बहुधा अभक्ष्य है। चातुर्मास में तो हल्वाइ की दुकान की मीठाइ का अवश्य त्याग करना चाहिए।

समझना. भजीये, कचौरी, लोचापूरी, मालपूआ वगरह नरम-चीजें दूसरे दिन वाशी होती है.

१५ चूरमे के लड्डु–जो मूठीये तळ के बनाया न हो, वो लड्डु दूसरे दिन वासी हो जावे. परंतु अच्छी तरह से तळा हुआ उत्तम मूठीये के बनाया हों, तो दूसरे तीसरे दिन खाने में हरजा नहि। ×खसखस, चूरमे के लड्डु और वैसे ही कीतनीक मिठाई पर डालने में आता है. वो वापरना युक्त नहि है। विरतिवंतोने तो अवश्य ख्याल रखना। [यदि मूठिये ज्यादा अग्नि सें तळा हुआभीतर कच्चा रह जाए, और उपर सें जल्दी लाल हो जाय, तो वासी होना संभव है। वास्ते धीमे मधुर अग्नि सें तळना.]

१६ रसोई–उन्हाले में सुवह पकाई हुइ दाल, भात वगरह रसोई सख्त धूप से साम को पलट कर बेस्वाद [चलित रस] होजाने की संभावना है। तब अभक्ष्य हो जावे। रोटी, परोंठा वगैरह भी सम्भाल से रख देना चाहिये। एक दम गरमागरम हो, वैसाही उनके बरतन में भर देना नहि. लेकीन थोड़ी देर पीछे भरना। वैसे ही गरम धूपमें भी न रखना. और ढांकने में काळजी रखना चाहिये। रखने का स्थान भी स्वच्छ और वीगर जीवजंतु का एवं खुली हवा मीळे वैसा होना चाहिये [रसोइ मध्यम पाक सें बनाना चाहिये।

× खसखस–अभक्ष्य है. वास्ते हलवाइ की दुकानसें मिठाइ खरीदने वख्त उनका निर्णय किये वीगर विश्वास रखना नहि.

कड़क रखने से, या ज्यादा जलादेने से, ज्यादा तळ डालने से, ज्यादा पका डाल्ने से, दूणादेने से वगैरह तरह से भी ठीक नहि। पचने में भारी हो जाय, अपक्व, और दुष्पक्व न होना चाहियें, वैसी रसोइ खाने में अतिचार गीने गये है] फीर भी कलाइ रहित बरतन में दहीं, छाछ वगैरह खट्टे पदार्थों और दूसरी रसोइ दाल, शाक वगैरह भी फट जाते हैं, जीससे वो चीजोंका वर्णादि फीरजानेसें वो खानें लायक रहता नहि है। वास्ते पीतल, ताने के जीना कलाइके बरतन में वो चीजें जरा वख्त भी नहि रखना। कीतनीक वख्त थोडी कलाइ रही हो वैसे बरतन में पकाई हुई चीज, या दहि–छाछ रखने सें भी वो फट जाती है, वास्ते वारवार कलाइ करवानेका अवश्य उपयोग रखना. उनमें प्रमाद या लोभवृत्ति रखने से उनका परिणाम व्याधि वगैरह खराब होता है।

। तैयार रसोई साधारण रीतिसे पकाने बाद ज्यु समय पसार होता रहे त्युं त्यु पचने मे भी भारी होजाती है। इसीही मुआफीक कुटा हुआ, पीसा हुआ मसाल्ला, पीसा हुवा आटा मिठाइयां वगैरह भी पचने में भारी हो जाती है। और दीगाया हुआ काल मानके बाद खराब तत्वोंका प्रवेश होकर खाने लायक रहती नहि। याने सुक्ष्म जन्तुओ भी उत्पन्न होजाने से अहिंसा दृष्टिमे भी अभक्ष्य बनता है कलाइ कीया हुआ और कासीका बरतन खानेका पदार्थ रखने के लीये

जरूरी है। [लेकीन आरोग्य दृष्टिसे भी जहां तक वने वहां-तक खट्टे पदार्थका उपयोग कम रखना फायदाकारक है। खटा रस पाचक हैं. तथापि स्थंभक होनेसें जींदगी तक खाया हुआ खट्टारसका परिणाम वृद्धावस्था में वहुत असरकारक मालूम होता है। सामान्यतः आंवले, और दाडम शिवाय हरेक खट्टी चीजें गरम है। सुफेद कोकम, नींवुं यह चीज तीव्र खटापनवाले पदार्थ दाल, शाक, में डालना ठीक नहिं है। काला कोकमकी खटाइ माफक है। वास्ते वो ठीक है। खटा रस स्वाद देते है। पाचन में भी अच्छी मदद करता है। लेकीन खोराक के साथ स्वयंभी पचकर शरीर में घरकर रहता है। और वाद एक स्वरूपमें या दूसरे कोइ स्वरूपमें शरीर को नुकशान कीया करता है। वो वृद्धावस्था में मालूम होता है] 'एल्युमेनीयम' के वरतनो पकाने खाने और तैल वीगर की चीजे रखने के लीए नुकशानकारक मालूम होता है।

१७ ओदन (भात)–पकाया हुवा चांवल*छाछ में रखा हुआ हो, उनका काल आठ प्रहर तक है। उतना काल चांवल सांजको पकाया हो, और छाछ छांटी हुई हो, उनका समझना। परंतु द्विप्रहर में पकाया हुवा चांवल जो छाछ छांटके

* छांछ में वुड होना चाहिए, छांछ में नयापानी मीलाया हुआ नहोना चाहिये. तीन दिनका ओदन नहि लेनेका अतिचार सूत्रमें कहा है। वो सीर्फ जाडी छांछसे पका हुआ अनाज समझना.

रखा हो तो उसीही दिन वापरने में आवे. सूर्यास्त बाद वो काममें न आवे।

छाछ छाटके सामको पकाया हुवा चावल रखने में भी बहोत उपयोग रखने की जरूर है। वो चावल के सूर्यास्त होते पहले सब दाना अलग करना चाहिए. और जो वैसा न किया जावे, तो वो वासी होजावे, प्रत्येक दाना अलग अलग करना और उनके पर ग्यारह अंगुल छाछ जरूर रखनी चाहिये, फिर वो छाछका कपालमे तील्क हो सके वैसी घट्ट अर्थात् पानी बील्कुल कम और छाछ घट्ट बहुत हो वेसी चाहिए] तथा वो चावल जहासे तैयार हुआ हो, व्हासे काल आठ प्रहरका गीनना, परंतु छाछ छाटी व्हासे नहि। और सूर्यास्त होते पहिले हि उनकी पूर्वोक्त सब क्रिया कर लेनी चाहिए.

चातुर्मासमे तो दूसरीतिसे चावल रखना हि योग्य नहिं है। बहेतर तो योहि है की अैसी चीजा परसे ममता उठालेनी चाहिये। क्युकी प्रमाद वशाद् हम उपर बतलाया मुआफीककी व्यवस्था बहुधा रख सकते नहिं। और उसे वासीका दोष लगता है। वास्ते जरूर जीतनाहि पकाना, और यमे करतेहि अधिक हो जावे, तब अनुकंपा दान करना भी ठीक है।

कीतनीक जगहपे न्यातमें साजका भात, मग वगेरह पकाई हुई रसोई अधिक हो गई हो, उनका कृपण स्वभावमें सदुपयोग कर नहि सकते, परतु दूसरे दिन जो वासी रसोई

नई रसोइ के साथ मीलांकर खीलाते है। उसे चलीत रसके त्यागीओ को खास, और दूसरोंने भी ऐसी जगहपे भोजन करते पहिले सावधान रहेनेका विचार करना।

श्रावकोंको इसतरहसे वासी खीलाना वो ही ज अयोग्य घात है। अपना थोडासा नुकशान के लीए असंख्य जीवोका विनाश वो लोक कबुल करते हैं। अफसोस ! वन्धुओं ! उनसे किंपाक समान कर्म का फल चखना पडेगा, तब वहुत पश्चात्ताप होगा। वास्ते समजो और अनादि की कुमति को दूर करो। जीससे सुमति के संगसे स्वात्मका श्रेयः करके अविचल सुखवास प्राप्त कर सके, याने मोक्ष मील जाय।

१८ दहिं–सुबे [दूधमें खटाई डालके] जमा हुआ दहिं सोलह प्रहर वाद अभक्ष्य हो जावे। और सांमके समय वना हुआ दहिं वारह प्रहर वाद अभक्ष्य होवे। ऐसा सेनप्रश्न में कहा है।

दृष्टांत सह–इतवारके सवेरे सात आठ या दस वजे दहिं वनाने के लीए छांछ डाली हो, उनका काळ इतवारका सूर्य उदयसे हि गीनना. नहिकी–"दश बजे मीलाया हो याने उनके वाद १६ प्रहर" अर्थात् इतवार के अहो रात्रीके आठ प्रहर मील कर सोलहप्रहर गिनना,

वो दहिं मंगळवार के सूर्योदय पहिले छांछ वना लेना चाहिए। व्हांसे सोलहप्रहर वो छांछका काळमान समजना॥

वैसेही इतवारके सध्या वख्त या उनके बाद मीलावट डाला हो उनका काल इतवारका सूर्यास्तसें गिनलेना याने इतवार के रातका चार प्रहर और सोमवार की अहोरात्रका आठ प्रहर मीलके बारा प्रहरका काल समजना। अर्थात् दहिं तैयार कीये बाद दोरातका कालमान समझना [-मीलावट चाहिए उस वख्त डाला जाय। लेकीन सामान्यतः दूध नीकालनेका प्रसिद्ध वख्त से दूध के अंदर के तत्वों दहिं बनाने की क्रिया तर्फ गति कर रहे होते हैं। बराबर दूध पीछेसे हि कालकी गीनती करनी बराबर है]

वर्णादि पल्टा न जाने तो दूध चार प्रहरतक भक्ष्य है, दरम्यान मीलाना चाहिए, और सामको चाहिए उसी वख्त दूध नीकाला हुआ हो, उसमें रातको बारा बजे-मध्य रात्रि पहिले मीलावट डाल देना चाहिए।

दहिं बाजारमें से नहि लेते हि अपने घरपे बनाना वो उत्तम है, भरवरी-उन्होंका बरतन बहूधा शुद्ध नहि रहते, खुल्ला नंगा ढाका रहते है. बासी दूधका या मिश्र कीया हुआ दूधका या सबेरे दूधका बनाते है, काल मान कमज्यादा करे, डीरपोंहे पकाके दूध के साथ मिश्र कर मीलाके दहि बनाते हैं। कीननेक वख्त मरा हुआ जीव भी दहिंमेंसे नीकला हुआ मालूम होता है। वगैरह अनेक दोषके सबबसे घरपे बनाके वापरना युक्त दीखता है।

कांजी—जो चीज कच्ची अथवा गरम की हुई छांछकी छाछ-पराश कहलाती है, वो कांजीका काल सोलह प्रकारका कहा हैं।

दहिं, छांछ और कांजी का सोळ प्रहर उत्कृष्ट काल कहा है, वो सोलह प्रहर में दोरात उल्लंघन न होनी चाहिए. उनके पहिले भी यदि वर्णादिक फीर जाय, तो वो चीज उत्कृष्ट काळतक अभक्ष्य है। चलितरसमें जो जो कालमान बताया है, उसके उत्कृष्ट कालतक आचरणीय है उनके वाद क्वचित् निश्चय-सें चलीत न हूई हो, तो भी वो व्यवहार से अनाचरणीय है।

कालमानका अर्थ ऐसा हुआ, की जो मर्यादा जो काळकी आचार्य महाराजाने बतलाइ है, उनके बाद वो चीज नहिंज बापर सकते, और कभी कालमान पहिले भी वर्ण, गंध, रस, स्पर्श वदलजाय तो भी ज्हां से अभक्ष्य समजमें आइ व्हांसें ही त्याग करने का खास ख्यालमें रखना।

१९ दूध—चार प्रहर तक भक्ष्य है, लेकीन सांजका नीकाला हुआ दूध का उपयोग मध्यरात्रि के आगे होजाना चाहिये। कीतनीक वख्त ग्रीष्म ऋतुमें दूध सख्त धूपसें या ज्यादा वख्त रहने सें या उपयोग पूर्वक शुद्ध वरतनमें नहिं रखना वगेरह कीतनेक कारणसें वीगड जाता है। और कोइ वख्त दहिं के मुआफीक जमजाता है। उनको "दहिं हुआ" समजके वापरना नहि। कारण—वो दूधका वर्णादि पलटजाय उससे वो दूध हि अभक्ष्य है। कोइ वख्त दूध फट जाता है। तो भी उनका वर्णादिक फीरजानेसें अभक्ष्य मानना।

कीतनेक वेचनेवाले वासी दूधका भेल करते है। कलकत्ते तरफ रात को दूध खूब गरम करके, उनमें से मलाई नीकाल के उनमें सींगापुरसें आता हुआ आरारुट का आटेका मीश्रण करके ग्रुनेमें ताजा कहकर–वेचते है। अपने तुच्छ स्वार्थके लीये बन्धुओं! यह लोग क्या क्या नहि करते है? अर्थात् यो बहुधा हरेक चीजमें दगा करते है। उनका सूक्ष्म दृष्टिसें तपास करना और उनसके वहातक उपयोग रखकर खरीद करना।

बीगडा हुआ और वासी दूधका दहिं, दूधपाक, बासुदी, मगाई, मावा वगरह पदार्थो भी अभक्ष्य है।

दूध दहिं प्रमुख प्रवाहि पदार्थ के वेचने वाले लोगों वो चीजों के बरतन खुल्ले और अयतनासे कीतनेक वख्त रखते है, उसें थोडा वख्त पर काठीयावाड में जुनागढ शहेर में एक दूधका वेचने वालेका दूध जहा जहा दीया वहा वहा जीनोंने वो दूध पिया उन्होको कल्लाकोंके कल्लाको तक पेखाना, वमन, और अत्यत बेचेनी सहन करनी पडी थी। तपास करते मालूम हूआ की वो दूधमें कोइ जीवकी ल्याळ वगेरह भरी पड़ा पडा हुआ होनेसें उन्होंको बीमारी सहन करनी पडी थी। केइ वख्त सर्प वगेरह की ल्याळ (विष) गीरगई हो तो वो वापरनेसें मृत्यु हो जानेका समव है। इसीहि लीये शास्त्रकारोंने दश जगह पर चदरवा रखने का कहा है। एक मोनोट भी पानी, भोजन वगेरहका बरतन

खुल्ले नहि रखना, वगैरह प्रकारकी यतना यह ग्रंथमें बतलाइ है, वो शारीरिक और धार्मिक दोनोकों लाभके लिये हैं. जीससे अवश्य उपयोग रखना [टट्टी–जंगल जाने वख्त लेजाने के लीये पानी का वरतन भी खुला न रहे, उनके लीये भी विवेकी पुरुषों ढंकनेकी योजना रखतें है.] बन्धुओं ! यह उत्तम जैन धर्ममें बतलाइ हुई (यतना) याने दया पालनेवालोंको शिघ्र मुक्ति देता है। जैन धर्मकी बलीहारी है।

दोया हुआ दूध जैसे बने वैसे तात्कालिक गरम करके रखना चाहिए, नहि तो ठंडा दूध थोडे वख्त में बीगड जाने का संभव है। मुनि महाराजाओं भी ठंडा दूध व्होरते नहि। दूध छांनके गरम करना चाहिए [गाय प्रमुखका वाल पीने में आ जाय तव सडेका भयंकर रोगका संभव होता है।] दूधको बीना छाने नहि खाना. इतर धर्ममें भी कहा है और जैन शास्त्रमें छानने के सात कपडे कहा है–१ मीठे पानीका, २ खारे पानीका, ३ गरम पानीका, ४ दूधका, ५ घीका, ६ तैलका और ७ आटा छानने का।

दूध वेचनेवाला दूधमें थोडा पानी डाले, वो वीगर छाना पानी जंतुवाला होता है।

गायका, भेंसका, वकरीका, और गाडरीका यह ४ दूधको दूध विभाग में शास्त्रकारोंने गीना है. जीससे दूसरा जानवरोंका दूध खाने में दोष है. जल्दी अभक्ष्य हो जाता है। और रोग भी पैदा करता है।

शहरोंमें दूधमें-सेपरेटका दूधकी मीलावट होती है, और विलायती पावडरका भी मेल होता है। स्वच्छ दूध के लीए म्यु० प्रयत्न कर रही है। और दूसरी तर्फ हजारो वर्ष के अनुभवी भरवाडों के हाथमें से दूधका धंधा छुट जाय वैसी कोशिषें चलती हुई देखने मे आती है और विलायत की पद्धति पर चलती डेरी कंपनीओं के हाथमें दूधका धंधा रखनेकी कोशिषें भी चल रही है। जीससे अपने देशके गरीब मनुष्यों को सस्ता और तुर्तमें दोहा हुआ ताजा दूध मीलना मुश्केल होनेका संभव हो सकता है, और धंधे बीगर होते ही, भोली, प्रामाणिक और आर्य प्रजाका एक भाग रूप हजारो वर्षकी, और अपना धंधे में खूब पावरधी न्यात का विनाश से बडी हिंसाका भी संभव मनाता है। और खानपान की ऐसी महत्व की चीजों की मुश्केली के लीए अपनी प्रजाका आरोग्य भी जोखम मे आजानेका संभव है। दूधवाले जानवरों को बचनेका अनेकविध प्रयास मुख्य तया डेरी के धंधेको विकसाने के लीए है.

और मूल धंधार्थीओं के मार्ग में विघ्नो वीना डाले डेरीओं मजबूत नहीं हो सकती है। सादाई, कुशळता और महेनत वालें दुध सस्ता बेच सके याने हरिफाई में डेरीवालेंको भी पहोंचने न देवे, जीससे उन्होंका दुध, घीकी परीक्षा करके अप्रमाणिकता और अज्ञानतासें उनको जनसमाज में हल्का बना करके कायदे सें विघ्न रचा रहे है। प्रजा का

आरोग्यकी तो बात ही क्या ? लेकीन जहां से गौचरें खेडे गये और डबा दंडका कायदा शुरु हुआ, व्हांसे दूधवाले जानवरोंका पालनेवालेकी मुश्केलीकी शुरुआत हुई.

उनमें से अप्रमाणिकता, वेर, विरोध, तुफान, खून खरावी होती है। और उनका बच्चोंको फरजीयात स्कूलके केलवणी लेनेकी फरज पडने से, उनको पशु रक्षण का ज्ञान वारसे सें आता नहि, और केळवणी पूर्ण ले सके नहि, मानो उनका नुकशानका पार न गीना जाय]

२० घी—कडछा, काळ पूर्ण हो जानेसे, वर्ण, गंध, रस, स्पर्श वदल जानेसे अभक्ष्य हो जाता है। घीमें कीतनेक दगाखोर लोग चरवीका और वटाटा, रताळु प्रमुख कंदका मीलावट करते हैं। उनका अवश्य उपयोग रखना। वीना परीक्षा हरेक माल लेना नहि। [वर्तमान में वीलायत से वेजीटेवल घीके नामसे वनावटी घी आता है। वो सारे देशमें करीव करीव प्रख्यात हो गया है। और दुध देनेवाले जनावरों को पालने वाले लोगोंमें भी वहुत प्रचलित हुआ है। वो अच्छे घी के साथ मीला के वड़ी सिफारस से वेचते है। चाहीए जीतनी खात्री करने में आवे तो भी जहां घी की पहेदास के मुख्य स्थानोंमेंही ऐसी भेल सेल वहुधा होने लग रही है। अव क्या इलाज ? ज्यादा चेतते रहता वोंहि। यह जमानेमें केळवणी, अखाड़ा और आरोग्य वास्ते धमाल मच रही है। लेकीन दूसरी औरसें

ऐसे प्रजा के आरोग्य के नाश के बहुत तत्त्वो यह जमाने में खुबी से प्रचलित कीया है। उनके पर कोइका ध्यान नहि जाता है। जुठी बूम और खर्च चल रहा है। यह भी जमाने की बलीहारी है।] फिर जो लोग घी गरम करके बेचते हैं वो कंई सात आठ या दो चार दिनका मख्खन एकट्ठा करके गरम करते है, वो अभक्ष्य गीना जाता है। उनके वास्ते जीन्हो के घरपे गाय भेंस हो तो वोहिज सच्चा उपयोग रख सकते हैं। थोडी छाछके साथ या छाछसे अल्ग करते वरत तानडतोब मख्खन चूले पर रख देना चाहिए। [अपने घरपे इसरीति से तैयार कीया हुआ घी आग्रहपूर्वक वापरने वाले भी हैं। बहार गाव जाना पडे तो भी यह घी साथमें ले जा कर उनका ही उपयोग करते है, नहि तो घीना घीसे चला लेवे। ऐसा कीतने ही श्रावक कुटुंबों आज भी देखने में आते है] परतु कोइ श्रावक अपने घर अतर्मुहूर्त्त से ज्यादा या कलाकों के कलाक वासी मख्खन न रक्खे [अन्तर्मुहूर्त्त–जघन्य नव समय से लगा के दो घडी में कुछ कम काल उनको अन्तर्मुहूर्त्त कहा है] एक आखका पलकारा लगा दे उतने वरत में असख्य समय हो जाता है], उसीही से मख्खन की बाबत मे बहुत उपयोग रखना उचित है।

अपने प्रमादमें अहाहा ! असख्य जीवोंका नाश होता है। हे बन्धुओं ! श्री जिनशासन में हम लोग ऐसा

अत्युत्तम मौका प्राप्त कीया है की जीससे सूक्ष्म बातें का अनुभव होता है। अहो! केवली भगवंतो के अलावा दुसरा कौन कह सकता है? अर्थात् त्रिकाळ भाव जीन्होंसे एक समयमें देखा है वो प्रभु केवळज्ञान से ही यह सब प्रकाश सकते है।

बन्धुओ! चलो अब अपना प्रमाद छोडके यह उत्तम मोकेको सहर्ष स्वीकार लीजीए, और "जीवदया प्रतिपाळ" यह नाम सार्थक करके मंगळमाळ पहनीए [घरपे दूधवाळे जनावरों रखने सिवाय घी, दूध स्वच्छ मीलनेका दुसरा उपाय नहिं है।

लेकीन जानवरों के लिये जो गौ-चर जमीन अलग रखने में आती थी वो शुभ प्रथा बंध होजाने से याने गौचर खेडे जाने से, और बांधने के लीए म्यु० तर्फ से महसुल वसुल करना होनेसे यह सादा और गरीब देशोंमें घरपर पशु रखना सर्व सामान्य प्रजाको परवडता नहीं है. म्यु० स्वच्छ घी-दूध के लिये प्रयास करती है, वो तो डिब्बेका दूधका भावि परदेशी व्यापारके लिये है। स्वच्छ, सस्ता और ताजा घी दूध मिलने का इससे संभव नहीं है]

२१ बली-तुरत की वीयाइ हुई गाय तथा भेंस के दूध से बली बनाते है। गाय के जनने बाद १० दिनतक, भेंस के जनने के बाद १५ दिनतक, तथा बकरी के जनने के पश्चात् ८ दिन दूध काममें लेना कल्पता नहीं है। तो फिर बली कैसे काममें आ सकती है? अर्थात् यह खाने योग्य नहीं है।

[दूसरे दूध में तुरतकी जनी हुई गाय अथवा भैंस का अभक्ष्य दूध शामिल न हो यह भी तपास कर देना चाहिये।]

२२ खट्टे ढोकले—चावल की कणकी के साथ उड़द, चने और तूवर की दाल पीसकर छाछ में घोलकर रातको रख छोडते है वो अभक्ष्य है। इससे गरम की हुई छाछमें दिनमें घोलकर, बनाकर उसके ढोकले बनाना चाहिये। और सूर्यास्त के पूर्व उसको काममें ले लेना चाहिये। बन्धुओं! ऐसी चीजों का दूसरे दिन खाना यह श्रावक कुलको योग्य नहीं है। [सिकी हुई, तली हुई, बाफी हुई चीजें प्रायः कची रहती हैं। यह आरोग्यता के लिये हानि प्रद है। ढोकले बाफी हुई चीज मे गिने जाते है। पापड सेकी हुई चीज में और पूडी भूजियें आदि तली हुई चीज में।]

बासी रखी हुई रोटी, नरम पूडी, भजिये। ढोकले और छाछमें न भिगोये हुए चावल आदि चीजें खाने से अनेक जीवों का नाश होता है। भगवान् की आज्ञाका उल्लंघन होता है। और शरीर में अनेक रोग उत्पन्न होते हैं। इस हितार्थ प्रत्येक वस्तु ताजी खाना ही उत्तम है। प्रातः कालमें यदि छोटे बालकों के जलपान के लिये कोई चीज रखी जाय तो गेहूँ के पतले खाँकरे बनाकर रखना चाहिये जिसमें बिल्कुल नरमाई न हो। परन्तु महान् अफसोस की बात तो यह है कि प्रायः बहुत सी जैन स्त्रियें शीतलामाता

को अपने वालकों की रक्षक मानकर सीलसातम के दिन एक रोज पहले वनाया हुआ वासी भोजन काममें लेती हैं। और उसी दिन चूल्हा नहीं जलाती। इस लिये इस मिथ्यात्व आचार को छोड़कर वासी चलित रस कभी भी काम में नहीं लेना। एसी दृढ प्रतिज्ञा करना चाहिये।

२३ घोलवड़ा (दहीं वडे)—गरम किये हुवे दहीं व छाछमें वनाये हुए हों तो वे उसी दिन तो भक्ष्य हैं। कच्चे दहीं अथवा छाछ में वनाये हों तो अभक्ष्य ही है।

२४ खाँकरे—गेहूँ की रोटी को तवेपर सेककर विलकुल करड़ी वना लेते हैं। वो पांच सात दिन से ज्यादह नहीं रखना चाहिये। रोज २ वनाकर एक ही वरतनमें रखते जाना अच्छा नहीं है। क्योंकि ऊपर ऊपर से काम में लेना और जो नीचे के वचे रहेंगे वो ज्यादह दिन के हो जाने से अभक्ष्य हो जाते हैं। और उनमें भी जंतुओ की उत्पत्ति हो जाती है। इससे पहले के वनाये हुए काम में लेते जाना चाहिये। और उस वरतन को साफ रखना चाहिये जिससे दूसरे जंतु भी उसमें अपना घर न वना सकें। और उसमें फुलन आदि भी नहीं हो सकती। खांखरे को विलकुल करडे वनाना चाहिये। [सुवह सिरावन के लिये वासी खानेमें न आवे इस लिये श्रावक के कुल में खांकरे वनाकर काममें लेने का रिवाज चला आ रहा मालूम होता है।]

२५ पापड़ के लोये, बड़े; पौरन पोली—उड़द, चना, मूंग आदि के पापड़ के लोये, तथा मूँग, उड़द आदि की दाल के बड़े, और पोरनपोली [दाल बाँटकर रोटीमें भरकर बनाई जाती है] सुबह में बनाई हो, तो श्याम तक काममें आ सकती है। ये सब चीजें रातमें रखने से अभक्ष्य हो जाती है।

२६ जुगलीराब (जीराराब)—छाछ में जुवार का आटा मिलाकर राबते हैं। यह सुबह की बनी हुई श्याम तक काममें आ सकती है। बाद में अभक्ष्य हो जाती है। और जिस छाछ में अनाज जादह मिलाकर बनाया जाता है, उसको घेंस कहते हैं। वो आठ ८ घंटे बाद अभक्ष्य हो जाती है। [अर्थात् जीराराबका समय १२ प्रहर तथा घेंसका ८ प्रहरका]

२७ रायताः—केला, दाख, खारक, आदि लोंजी का काल १६ प्रहर का है। परन्तु उसमें कोई भी भाँति अन्नका मिश्रण न होना चाहिये। रायते में यदि भजिये, सेव, गाँठिये आदि डालना हो तो पहले दहीं अथवा छाछ को खूब गरम कर के फिर उसमें डालना चाहिये। रायता सायकाल तक खाने योग्य है। बादमें अभक्ष्य हो जाता है। दहींको गरम कियाबिना बनाया हुवा रायता कठोलकी साथ न खाने की संभाल रखनी चाहिये।

२७ सेका हुआ अनाज—भूंगड़ा, धानी, परमल पहुवे, आदि सेके हुए अनाज हैं। इसका काल कड़ा विगई प्रमाण है। चोमासे में उत्कृष्ट १५ दिन, सियालेमें १ माह, तथा उन्हाले में २० दिन हैं।

२९ खिचडाका ढुंढणीया—जुवार और वाजरी को पानी ड़ालकर खाँड़ते है, इससे उस के छिलके (फोंतरे) निकल जाते हैं, उनकुं सौराष्ट्र देश में ढुंढणीया कहते है। फिर उसको रांधते हैं। इस खंडे हुए अनाज का समय सेका हुआ धान्य की माफक है। अर्थात् वर्षाऋतु में १५ दिन, शीतऋतु में १ माह, और ग्रीष्मऋतुमें २० दिन। इनके पश्चात् अभक्ष्य होता है। ढुंढणीया वरावर सुख जाना चाहिये.

प्रकरण ३ रा

२२ वत्तीस अनंतकाय.

सव अनंतकाय अभक्ष्य होते हैं। कारण—एक सूई के अग्रभाग पर असंख्य शरीर होते हैं, और एक शरीरमें अनंत जीव रहते हैं, इसलिये सव अनंतकाय अभक्ष्य है। इससे श्रावक को उनका त्याग करना चाहिये। एक (जिह्वा इन्द्रिय) रसनेन्द्रिय की लोलुपता के लिये अनंत जीवों की हानि करना महान् अनर्थकारक है। इसलिये वत्तीस अनंत-कायका सर्वथा त्याग करना चाहियें। इससे अनंत जीवों को अभयदान प्राप्त हो सकता है। कितनेक वन्धु रसनेन्द्रिय के

वशीभूत होकर "सालमे ५–१० सेर कदमूल काममे लेना" ऐसा नियम करते है। परन्तु हमारे उन सुज्ञ बन्धुओ को जरा विचार करना चाहिये. कि–"अनतकाय न खाने से क्या आपका निर्वाह न होगा? अथवा क्या दुनिया मे दूसरी वनस्पति का काल पड गया है? अभक्ष्य का त्याग करने वाले वकचुल कुमार की और दृष्टि उठाकर देखियेगा। अपने पर मृत्युतक आने पर भी उसने अभक्ष्य वस्तु को अंगीकार नही किया। वास्ते ऐसे सत्त्वशाली, दृढ प्रतिज्ञ, आत्माको करोडो वार धन्यवाद है। अहोहो! कर्म के वशीभूत होकर लेशमात्र भी पापका डर रखे विना जो प्राणी अदरक, मूला, गाजर, प्याज, लसन आदि अनतकाय का भक्षण करते हैं, उनकी क्या गति होगी? इस मनुष्यभव के साथ जैन धर्म भी प्राप्त किया है, जिससे ससार का भ्रमण मिट जाय और मुक्ति प्राप्त हो। हे भाइयो! मै आप से नम्रतापूर्वक विनंति करता हू कि–बावीस अभक्ष्य और बत्तीस अनतकाय का त्याग करेंगे, और सच्चे जैन बनेगे।

बत्तीस अनतकाय के नाम

१ पृथ्वी के अदर जितने भी कद पेदा होते है उनकी सब जाति
२ गीली हल्दी,
३ हरा कचूर
४ सतावरी
५ विराली, लता, विशेष सोफानी–भोंय कोलु।

६ गीली अदरख
७ ,, सूरण
८ वज्रकंद
९ गिलोय (गुड़वेल)
१० लसण
११ वांस करेळी
१२ गाजर
१३ लुणी याने साजी वन-
स्पति
१४ लोढ़ी पद्मिनी कंद
१५ गरमर (गिरिकर्णी)
[कच्छदेशमें प्रसिद्ध है]
१६ किसलय पत्र
१७ खीरसुआकंद
१८ थेग
१९ कुंवार पाठा और उसकी
फली
२० थूवर सव जातिकी
२१ हरिमोथ
२२ लुण वृक्ष की छाल
२३ खीलोडा कंद
२४ अमृत वेली
२५ मूळा
२६ भूमी फोडा
२७ वाथवे [वथूला]की भाजी
२८ विरुढाहार
२९ पल्लंकाकी भाजी
३० सुअर वल्ली
३१ कोमल आंवकी
३२ आलू, रतालू, पिंडालू

१८ किसलय पत्र—कोमल पत्ते। जो केवल ऐसे विलकुल नये मुलायम निकलते हैं। तथा सव वनस्पतियों के निकले हुए अंकूर। ये सव अनंतकाय होते हैं। इस प्रकार की उगती हुई वनस्पति उगती हुई अनंतकाय होती हैं। वादमें प्रत्येक वनस्पति के थड, पत्र, अंकूरा, अंतर्मुहूर्त पश्चात् प्रत्येक रूप हो जाती है। और सव जीव च्यव जाते हैं।

परन्तु, साधारण वनस्पति के थड, पत्रादि हमेशा अनंत-कायपनेज रहती है। इन अनंतकाय पत्ते आदि का सर्वथा पच्चक्खाणकरनेवाले [अथवा कर लिया] हो, उन लोगोंने भाजी पत्ते को उपयोग मे लेते समय सावधानी मे काम में लेना चाहिये। क्योंकि दोप लगने की संभावना है। मेथी आदि की भाजी के नीचे के दो २ पत्ते अनंतकाय होते है। और वे दो पत्ते दूसरे पत्तों की बजाय जाडे होते है। साथ साथ वे कोमल भी होते है। और भाजी मे अनेक प्रकार के अनंतकाय के पत्ते शामिल हो जाते है। इससे भाजी काममे लेते समय बराबर ध्यान देकर जरूर देख लेना चाहिये, नहीं तो दोप लगता है।

१९ खीरसुआकंद—कसेर (खरसइयो); २० थेग—कंद-थेगी तथा थेग नामकी भाजी, थेगीपोंक, २१ हरिमोथ (लीलीमोथ) २२ लुण वृक्षकी छाल; २३ खिलोडा कंद २४ अमृतवेली।

२५ मूळा—देशी तथा विदेशी (लाल और सफेद) मूले के पाचो अंग अभक्ष्य है।

(१) मूलका कंद (कांदा.)

(२) पत्तो के मध्यभागमें जो कंदकी थाप है। जिसको टाडली कहते है, वो पत्ते सहित अभक्ष्य है।

(३) फूल

(४) फल, जिसको मोगरा कहते हैं वो, तथा—

(५) उसमें से निकले हुए बारीक बीज.

ये पांचों अभक्ष्य हैं। और इनमें त्रस जीवोंकी भी उत्पत्ति हो जाती है। इससे मूले के पांचो अंगका त्याग करना.

२६ भूमिफोडा—वर्षाऋतुमें छत्री के आकारकी वनस्पति है, वो।

२७ वाथले की भाजी।

२८ विरुद्धाहार—याने वीदल धान्य-मूँग, तूवेर, चने आदि रात्री को पानी में भिगाते हैं। और उनमें से अंकुर पेदा हो जाते हैं। वो अनंतकाय होने से अभक्ष्य हैं। इससे उन्हे प्रातःकाल ५ वजे या ६ वजे भींजवाना, और वो भी थोडी देर पानी में रखना, नहीं तो दो २ या चार ४ घंटे वाद उसमें अंकुर विलकुल पेदा हो जायगा। शाक वनाने के लिये मूँग, चने आदि को वाफ कर ही वनाना चाहिये। कोई के वहाँ जीमने जाना हो तो वहाँ पर भी ऐसा शाक वना हो, तो तलाश करलेना आवश्यक है।

[कोई कोई शोकीन मूँगके अंकुर फूटे वाद ही शाक वनाते हैं। ऐसा शाकका सर्वथा त्याग करना चाहिए।]

२९ पालकेकी भाजी

३० सुअरवल्ली—जो जंगल में वडी वेलडी के सदृश्य होती है, वह।

३१ कोमल इमली—जहां तक उसमें वीज पैदा नहीं होते हैं, वहां तक वह अनंतकाय है। कोमल फल में जहाँतक वीज पैदा नहीं होते है, वहांतक वह अनंतकाय है। इसहेतु से कोमळ फल नहीं खाना चाहिये।

-३१-३२ आलू, रताळू, बटाटा, पिंडालु (इंगळी) सक्करकंद, धोपातकी और करीर-केरडा, इन दो वनस्पतियों के अंकुर अनतकाय है।

तिंदुक वृक्षके कोमल फल, जिसमें गुटली नहीं बंधि हो ऐसे आम आदि फल, तथा वरण जातके वृक्ष विशेष, तथा बड़का झाड और निंबादि जातके वृक्ष के अंकुर ये अनतकाय होते है।

इस भाँति अनतकाय जाति के बत्तीस नाम है। और विशेष नाम भी अनेक है। उसमें भी कोई भी वनस्पति के पांच अंग, कोईकी झड (मूल), कोईके पान, फूल, छाल, काष्ठ अनतकाय है। इस भांति कोइका एक अंग कोईके दो तीन-चार और कोइके पांच अंग अनतकाय होते हैं।

अनतकाय पहिचानने का चिह्नः—

जिन वनस्पति के पान या फल आदि की नसो, संधि, मालुम न हो, ये गूढ-गुप्त हो, जो तोडने से समसर टूटे, तोडनेसें जिसका चूरा हो जाय, या इरदम बिखर जाय, काटने के बाद फिर उग जाय, पत्ते मोटे दलदार और चिकने हो, जिसमें बहुतसे फल, पत्ते, अत्यन्त कोमल हो, ये सब लक्षण अनतकाय के हैं।

---

१ कोनी भी विदेशी मूळा या पिंडाड की जात मालूम होती है, वो भी अनतकाय शाक मालूम पडता है।

उपरोक्त वताये हुए जितने साधारण वनस्पति के लक्षण हैं, वो सव के सवही में होना संभव नहीं। कोई में कम भी होते हैं, और कोईमें अधिक भी।

पोई (पद्म) की भाजी के पान तथा पिण्ह [ॲन्डीपेण्डी] अनंतकाय सुने जाते हैं।

अनंतकायके लिये कितनीक सूचनाएः—

१ दूधके मावे तथा घी में कितनेक दगाखोर लोग रताळू, सक्कर कंद, वटाटे का मिश्रण करते हैं। इसका ख्याल रखना चाहिये।

२ हरा अदरख तथा हलदी सूकेवाद (सूंठ और हलदी) के खानेके उपयोग में आते हैं वो भक्ष्य है। इसके सिवाय अनन्तकायकी सूकी हुइ शाक, आचार आदि त्याज्य है। निध्वंस (निर्दय जैसा मन) परिणाम। २ निःशुक (नफरत न होना, संकोच नहीं होना, वृतिकी चड़स, लोलुपता) ३, परंपरा वढे। ४ देखनेवाळा अधर्मी वने, आदि हेतु होने से कंद जैसी कोईभी अनंतकायवस्तु, उसके भुजिये आदि प्रासुक होने पर भी शास्त्रमें उन्हें लेनेका मना किया है।

३ कॉंदे, डुँगली आदि के भुजिये करते है, तथा दुकानदार ढोकले में अभक्ष्य—चीजोका मिश्रण करते है; वे वासी रखकर वेचने के लिये फिरसे गरम करलेते है। वाजारु

चटनी आदिमे लसनका स्पर्श तथा अदरक आदि अभक्ष्य चीजे डालते है। तथा ये चीजे वासी भी रहती हैं। इससे दुगुने दोषवाली होजाती है। इसमें त्रसजीव उत्पन्न होते हैं। इत्यादि कारणों से पापसे वचनेवाला आत्माको यह खाते समय रूयाल रखना चाहिये।

फाँदे आदिके भुजिये जो तेल में तळे जाते है और उसी तेल में यदि अन्य भक्ष्य जातिके भुजिये तळे गये, तो वो भी अपने उपयोग में नहीं लेना। दालमें कितनेक व्यक्ति सूरण, अदरक, आदि डालते है। उसमे भी डूँगली, कांदे आदि अभक्ष्य वस्तुएँ डाली होय तो उनको, तथा चटनी, दारु, कढ़ी आदिमे कोई स्थान पर कोमल इमली डालनेमें आती है, उसका मिश्रण तथा स्पर्शादि का अवश्य ध्यान रखना चाहिये। अथवा भेलसभेळ आदि की जानकारी विना, और दाक्षिण्यता का आगार रखना आगार का अर्थ यह नहीं है कि "जानते हुए भी आख के आडी कान करदे यह दोष सेवन करना।"

४ मेथी की भाजी मे अनतकाय थेग तथा लुणीकी भाजीकी टालिया आ जाती है। इससे उनको अलग कर देना। और यदि विना जाने आ जाय तो उसका ध्यान रखना। मेथी की भाजी के नीचे के दो पते अनन्तकाय है, इससे उनको पहेले से ही निकाल देना चाहिये।

५ बावीस अभक्ष्य के त्याग पर उपसंहार—

पुस्तकांतरमें बावीस अभक्ष्य है :—

पंचुंबरी चउ विगइ अणायफल-कुसुम हिम विसकरेअ।
मट्टि अ राइभोयण घोलवड़ा रिंगणा चेव ॥१॥
पंपुट्टय सिंघाड़य वायंगण कायवाणिय तहेव ।
बावीस दव्वाइं अभक्खणिआइं सड्ढाणं ॥२॥

अर्थः—१ गूलर २ प्लक्ष ३ काकोडुंबरी ३ वड और ५ पीपल। ये पांचजातिके फल। ६ मांस ७ मदिरा ८ मांखण और ९ मधु ये चार विकृति (महाविगई)- विकार करनेवाली विगइ। १० विना परिचय का फल ११ अपरिचित पुष्प १२ हिम (वरफ) १३ विष १४ करा १५ सचित मिट्टी १६ रात्रिभोजन १७ दहींवडे कच्चे, जो कच्चे गोरस के साथमें विदल मिश्र किये गये हों १८ रींगणा १९ पंपोटा-(खसखसके डोडे) [खस खसका त्याग करना] २० सिंगोंडे [जो कि अनंतकाय नहीं है तथापि कामवृद्धि जनक होनेसे तथा पानीमें होनेसे "जत्थ जलं तत्थ वणं" इस रीतिसे अनंतकाय सम्बन्धी होनेसे त्याग करने योग्य है] २१ वायंगण (?) अने २२ कायंवाणि (?)

पूर्व कहे गये वावीस अभक्ष्य के साथमें इस गाथा में के ११, १९, २०, २१, २२ नामवाले अभक्ष्य हैं। वो भी त्याग करना।

अभक्ष्य और अनतकाय अन्य के घर अचित्त हुआ हो तो भी निःशूकता, रसलोलुपता, प्रसगदोष इत्यादि कारणो से वर्जना। सूकी सुठ और हलदी नामभेद तथा स्वादभेद से अभक्ष्य नहीं है।

इन अभक्ष्यो में अफीम, भग आदिका जिसको व्यसन लगा हुआ हो तो व्रत-सोगन-पच्चक्खान करते समय उसके तोलमाप से जयणा करे। और रात्रि भोजन में चउविहार, तिविहार, दुविहार एक मासमे इतना करना, ऐसा नियम करे।

रोग आदिके कारण यदि कोई औपधि मे अभक्ष्य खाना पडे, उसका नाम, समय तथा वजनसे यतना रखनी पडती है। देखो, बत्तीस अनतकाय का सर्वथा निपेध है। तो भी यदि रोग आदि कारणो से लेना पडे तो उसकी जयणा रखे तो रोग आदिके कारण ओपधि मे लेना पडे या अजानपनेसे कोइ वस्तु मिश्र हुई खाने मे भी आवे, तो व्रत भग नहीं होता। आगे बीमारी में भी नहीं लेना ऐसा लिखा है, वह सिर्फ उत्कृष्ट नियमवालों के लिये है। जिससे नियम जिस तरह पालन हो, वो यथाशक्ति उसी तरह करना उचित है।

"श्रावक को अन्य धर्मावलम्बियो (अन्य मतवालों) के घर बरात में जीमने जानेके समय अधिक ध्यान रखना चाहिये, कारण-वहाँ बावीस अभक्ष्य और बत्तीस अनतकायमे से कितनेक दोप अवश्य लगनेका सभव है। इससे बने वहा

तक वहुत कम परिचय रखना। उसमें भी द्वादश व्रतधारी तथा विरतिवालोंने तो ऐसी जगह पर जाना ही नहीं चाहिये। कभी जाना भी पडे, तो पूरा ध्यान रखना।

वावीस अभक्ष्यका जो यह वर्णन दिया है, उसको वरावर समझ कर मनन करना। तथा जिनेंद्रभगवानने मना किया है, उनका त्याग करके परमात्माकी आज्ञाका पालन करना चाहिये।

भाईयों! आप नित्य पूजा करते है, उसके पूर्व अपने मस्तक पर खुद तिलक करते है। उसका मतलव यह है कि– "हे भगवन्! आपकी आज्ञा मैं शिरोधार्य करता हूँ।" उनकी आज्ञाका कभी भी उल्लंघन करना नहीं और उसे सादररीतिसे पालन करना, यही धर्म है।

यह अभक्ष्यों का वर्जन से असंख्य और अनंत जीवों को अभयदान मिलता है। शास्त्रमें कहा है कि–एक जीव को अभयदान, और मेरु जितना सुवर्ण का दान दो, इनमें अभयदान का फल वढेगा। जो पुण्यात्मा अनंत जीवों को अभयदान देता है, वो पाप फल नहीं पाता है! अर्थात् सव अच्छे फल पाता है। इसलिये चतुर भाईयों! मोक्ष प्राप्तिका यह सरल साधन है–"भगवान् के वचनका आदर व पालन करना!" इसके वारेमें अजित शांतिस्तवकी अन्तिम गाथामें कहा है कि:–

जेइ इच्छह परम पयं अहवा कित्ति सुवित्थड भुवणे।
ता तेलुक्कुद्धरणे जिण-वयणे आयर कुणह। ४०

मूढ और अज्ञानी पुरुष कहते है कि-"खाना, पीना और मौज उडाना, यही सच्चा सुख है, वास्ते भोगसामग्री का उपभोग करलो। और जब मोक्ष मिलना होगा तब मिलेगा।" ऐसे मूर्ख प्राणी के हितार्थ श्री पद्मविजयजी महाराजने तपपदकी पूजा में कहा है कि:-

तप करिये समता राखि घटमे॥ तप०
खाने में पीने मे मोक्ष जो माने,
वो सिरदार है बहु जटमें॥ ३॥

अर्थः—"खाना पीना ही मोक्ष है"। ऐसा माननेवाले पुरुष मूर्खोंके सरदार है, इससे हे भव्यो! जैनशासनका रहस्य समझकर "देहे दुक्ख महा फल" इसके अनुसार वर्तनेसे सानद मोक्षनगर पहुँच जा सकते है।

इस भाँति तीन प्रकरण मे बावीस अभक्ष्यका विचार पूरा करनें में आया है।

---

१ यदि मोक्षकी इच्छा रखते हो, तिन लोकम फेलनेवाली कीर्तिकी इच्छा रखते हो, तो तीन लोकका उद्धार करनेवाला जिन-बचनमें आदर रखों.

प्रकरण ४ था, ५ वा, ६ ट्ठा, ।

वावीस अभक्ष्य के अलावा अभक्ष्य वस्तुएं

फाल्गुण सुदी १५ से कार्तिक सुदी १५ तक अभक्ष्य वस्तु एं.

२ आर्द्रा नक्षत्रसे त्याग करने योग्य अभक्ष्य वस्तुएं.

३ असाड सुदी १५ से कार्तिक सुदी १५ तक त्याग करनें योग्य अभक्ष्य वस्तुएं

४ हमेशां त्याग करनें योग्य कितनीक वस्तुएं.

५ वहुत आरंभसे उपयोगमें न लेने योग्य वस्तुएं.

६ लोक विरुद्ध तथा जैन दर्शन विरुद्ध छोडने योग्य वस्तुएं.

७ त्रस जिवों की अधिक हिंसा होने के कारण त्याग-करने योग्य वस्तुएं.

इस भाँति ऊपर मुजव सात विभाग करने में आये है, और हर एक में समावेश होनेवाली मुख्य चीजों की यहादी भी साथ में दी गई है—



२ फाल्गुन शुदि (१५) पूर्णिमासे कार्तिक सुद (१५) पूर्णिमा तक अभक्ष्यकी गीनती में आती हुइ चीजें

१ खजुर	२० गेन्हारी [तादळजा]
२ छुहारा	२१ वनीआ के पत्ता
३ काजु	२२ फोदीना [कोत्थमिरी]
४ अगुर	२३ डाभेकी
५ सुके अजीर	२४ टाकेकी
६ चारोली	२५ रामतराइ
७ पीस्ता	२६ रुइलीकी
८ कीसमीस	२७ भोपाथरीकी भाजी
९ अखरोट	२८ लुणीकी भाजी (अनंतकाय)
१० जरदालु	२९ कलिमलीकी
११ सुकेखाइ बोर	३० हरएक प्रकारके पान
१२ चीनीया बदाम	३१ नागरवेलके ,,
१३ तेल	३२ अळवीके पेकरी पत्ता
१४ तील	३३ अडुके पत्ता
१५ तीलकुट	३४ कागीके ,,
१६ तील रेवडी	३५ मीठे नीवके पत्ते
१७ तीलके लड्डु	३६ पोइके
१८ सभी जातकी भाजी	३७ एलचीके
१९ मेथीकी भाजी	

३८ गीला मरीचके ,,
३९ तुलसीके
४० अजवानके
४१ फुलावर
४२ गुलाबके फुल
४३ राडा रुडिके फुल
४४ मुनगे [सरगवा] कीसिंग
४५ कोवीज
४६ कोंकणी केळें
४७ सुकी रायण
४८ खसखस

२ आर्द्रा नक्षत्रमें छोडने लायक–
आम और रायण

३ अशाड शुदि (१५) पूर्णिमासे कार्तिक सुदि (१५)
पूर्णिमातक छोडने लायक अभक्ष्य चीजें–

१ सुखुआ
२ जवारीका पोंक (वाले)
३ कोपरे–गडी
४ वाजरीके (वाले)
५ घऊंकी ऊंबी–तथा पोंक
६ जुवारके लोये
७ वाजरी के डुंडे
८ चने के ओळे
९ सेकी डुइ मकाई
१० पापडी
११ चोला
१२ भिंडे
१३ कंटोले
१४ कारेले (करड़ली)
१५ तुरीआ

४ हंमेश छोडने लायक चीजें

१ भडथे
२ उंबीआ
३ परदेशी (मिलका) मेंदा
४ मीठे काजु

५ डिनेका दूध	२७ चौरुठ
६ सोडा	२८ जरदा
७ लेमन	२९ गाजा
८ जींजर	३० चरस
९ रोझबरी	३१ माजम
१० पिकमिअप	३२ भाग
११ निल्कास	३३ अफीम
१२ एलूटॉनीक	३४ दारु
१३ कोल्डड्रींक	३५ कोकीन
१४ कोल्डक्रीम	३६ स्तभक दवाऐं
१५ जींजर एलआइम	३७ वीलायती दवाएं
१६ लीथीआ	३८ युनाईनी दवाऐं
१७ अमरीक	३९ देशी दोषयुक्त दवाऐं
१८ चेरीमीडर	४० देशी–गुड
१९ चेम्पेइन सीडर	४१ परदेशी मोरस
२० ग्रीनार्इन टॉनीक	४२ केसर
२१ क्रीम सोडा	४३ अरसी कटोळ
२२ बीडी	४४ हरेक प्रकार के बीस्कीट
२३ साफी	४५ नानखटाइ
२४ हौका	४६ देशी केक
२५ चुगी	४७ विलायती केक
२६ सीगारेट	४८ पाउ

४९ डबल रोटी
५० टुथ पावडर
५१ शरवते
५२ आइस्क्रीम
५३ आइसवॉटर
५४ होटल की हरेक चीजें
५५ चहा पार्टी
५६ गार्डन पार्टी
५७ इवनींग पार्टी
५८ दोषित पानी
५९ वेजीटेबल घी

५ वहोत आरंभसे नहिं वापरने लायक चीजें

१ ईख [शेरडी]
२ सीताफल
३ रायण
४ रामफल
५ खलेले
६ पक्के गुंदे
७ जांबू
८ रावणां
९ करमदे
१० बोर
११ गीले अंजीर
१२ सेतुर
१३ फालसे
१४ सिंहाला [सिंगोडा]
१५ मुंग आदिकी शिंग
१६ वालोल-सेंम

६ लोक विरुद्ध ओर जैन दर्शन विरुद्ध अभक्ष्यकी गीनती में आती हुई चीजें –

१ पंडोरा
२ हरा फणस
३ तपकीरी कोला
४ कोला हरा
५ कडवी तुंबडी
६ दुधी
७ पक्के कंटोले
८ पक्के कारेले-करइली
९ पक्के टींडोरे, कुनरी
१० पक्के टमेट
११ पक्के कंकोडे
१२ मधुक-महुवा

७ त्रस जीवोंकी बहुत हिंसा होनेसे छोडने लायक-
१ बीली २ बीला ३ गीलीवांस

ऊपर बताइ हुइ हरएक चीजें की विशेष समज-

१ से ४८ तक सख्या, उन सभी चीजों बीगडनेका और उनमें जीवोंकी उत्पत्ति होनेसे हिंसा होनेका संभव है. वास्ते फाल्गुन शुदि (१५) पूर्णिमासें कार्तिक शुदि (१५) पूर्णिमा तक अभक्ष्य है उनका जरुर त्याग करना चाहिए.

१ खजुर-दोनो प्रकार की ऋतु बदलनेसे फाल्गुन शुदि (१५) पूर्णिमासें अभक्ष्य होजाती है। कितनेक देशमें ऐसा रीवाज है की होलीके दीनोंमे अपनी बेटीया. मित्रों, सगेवहालों वगैरह को खजुर, खारीक आदि का हारडा लेने देनेका रीवाज है। परन्तु वो खारीक खजुर फाल्गुन शुदि १४ के बाद वापरने योग्य नहिं है। और अपने पास उन्होंने भेजा हो तो फाल्गुन शुदि १४ के बाद अपने काम मे नहिं आ सकता है।

२ खारीक-उपर मुताबीक यह भी सादी मे फाल्गुन शुक्ल १४ पीछे भी, कहीं कहीं बाँटी जाति है। वो भी जैन श्रावकों को अभक्ष्य होने सें बाटना अनुचित है.

३ सें १०, काजुसें लगा के जरदालु तककी चीजें–

यह सभी सुका मेवा है। और उनमें मिठाश है। वो फिका होजानेसे अंदर वोही रंग के जीव पडतें है। यही कारनसे उन्हींको अभक्ष्य कहा जाता है. ताजी छुली हुइ वदाम (वीगर छीलकेकी) और पीस्ते वोहि दिन वापरने में काम आवे. लेकीन वदाम, पीस्तेका तैयार वी आते है, वो काममें नहि आ सकते है। कीसमीस में वहुत दफा अपनी आंखोसे प्रत्यक्ष जीव देखा है. [खुल्ली की हुइ वदाम आदि कितनेक मेवा अशाड चोमासा सें दूसरे दिन अभक्ष्य होनेका प्रचार भी मालूम पडता है.]

पीस्ते, चारोली–वहुत वेपारी पीछले वर्षका पडा हुआ माल वेचते हैं. तो खरीद करते वख्त वडी चालाकीसे ख्याल पूर्वक वैसा पुराना मालका त्याग करके ताजी चीजें खरीदनी.

१३ सें १७ तक–तील, वगैरह फाल्गुन चातुर्मास पहले अपने लीए जरुरीआत जीतना माल खरीदना चाहिये। और उनको बराबर संमालके रखना चाहिए. संमालने में गल्ती रे जावे तो उनमें भी जीवोंकी उत्पत्ति हो जाती है, तीलकी चीकी, तीलके लड्डु, और तीलकी रेवडी वगैरहका भी त्याग करना जरुरी है. फाल्गुन महिने वाद तिलको जरुर हो, तो पहिले सें गरम पानी में हीलाके नीचो करके सुका देने से जीवोंकी उत्पत्ति नहिं होती है.

१८ से ३० तक-भाजी पाला-वगैरह में आठ महिने तक जीव पडने से उनका जरूर त्याग करना चाहिए, भुजीया, मुठीया, वडा वगैरह में भी उनका उपयोग न करना चाहिए.

३१ नागरवेल के पान-आठ महिने तक नहिं वापरना। क्योंकि उनमे सूक्ष्म जतुओंका सभव तो है, और हमेश पानीमें रहने से लील, फुल, सेवाल आदि अनतकाय की हिंसा होती है। कोइ वख्त तबोलीआ सर्पकी उत्पत्तिका भय होने से अपनी और उनकी, उभय की हिंसा हो जाती है। असे प्रत्यक्ष दाखले बने हुने है। वास्ते आठ महिने तक तो जरूर छोडना।

बहुत लवा वख्त तक जलमें रहनेसे सचित्त भी है। फिर भी विलास और विकारोंकी वृद्धि करनेवाले होनेसे ब्रह्मचारीयों को सादाइकी नजरसे त्याग करने लायक है.

आज के जमानेमें जहा पान-सुपारी की दुकान होती है। वहा बीडीको बिक्री भी शुरू हो जाती है। फिर चहाकी होटेल, फिर उनमेंसे शरबते, और उनमेंसे देशी दारूका प्रचार हो सकनेसे शराबके पीठों की स्थापना होती है। ऐसा क्रम देखने मे आता है। वास्ते लिखनेका भावार्थ यह है की- भविष्य मे होनेवाली अपनी भावि प्रजा को दारू वगैरह आदतोंसे बचाने के लीए उनकी प्राथमिक भूमिका रूप पान सुपारी की दुकानो को उत्तेजन नहि देनेकी दृष्टिसे भी पानका खास त्याग करना चाहिए। कीतनेक लोग वानर का मास हडीमें पका के खाते है, वो गरीब लोग वो हडी में कत्था भी पकाते है, असा मालुम हुआ है।

३५ मीठा नींब–दाल और खटीया याने कढीमें आठ महिना तक नहि डालना. शियालेमें भी हर एक भाजी–पाला बराबर ध्यान लगा के काममें लेना चाहिए.

२ आर्द्रा नक्षत्रसें त्याग करनेलायक वनस्पतिआँ–पक्की केरी (आम) और पक्की रायण–आर्द्रा नक्षत्र सें पके हुवे आमका जरूर त्याग करना. यह चीज बहुत प्रिय होने सें कीतनेक लोग आर्द्रा नक्षत्र होजाने के बाद भी वापरते है. उन्हों को ज्यादा क्या कहना? "भगवंतकी आज्ञाका इन्कार करके अपनी इच्छाओ तृप्त करना। क्यों की जिंदगी–भरमें कभी ऐसी चीज देखी न हो, वास्ते खाओ, पीओ, और वापर लो, फिर ऐसी चीज मीलेगी नहि." ऐसा सोचके युवक बन्धुओ तो क्या? लेकीन जिनका वृद्धापन आया है वैसे कीतनेक वृद्धों भी इन चीज के स्वादमें लुब्ध हो के खूब आनंदसें उनका स्वाद लेते हैं. अफसोस तो यह है की, असंख्य जीवोंका संहार करने सें जरा भी खेद नहि होता! विचार करना हि दूर रहा, अपना मन रंजन करने के लीए महान् अनर्थोंका सेवन करके दुर्गति में पडनेका रस्ता शोधतें है.

अब यह ममता रूपी दासीका त्याग करना चाहिए. नहिं तो वो ही लज्झत के कडवे विपाक अनुभवते वख्त "हाय! हाय! कोइ छुडाओ! कोइ बचाओ!" ऐसे त्रासदायक पोकार करते भी कोइ छुडाने को समर्थ नहि होंगा. वास्ते अब

सविनय प्रार्थना रक्के कहना पड़ता है की अपना और अन्य जीवों के हितार्थ वो चीज आठों नम्बर से अवश्य वर्जन करना। और उनमें थुड़भी बातोंका आगार रखना नहि [पर्व की साथ रक्के आमका भी त्याग समजना]

३ अषाड शुदि (१५) पूर्णिमासे कार्तिक शुदि (१५) पूर्णिमा तक त्याग करना।

१ सुकवनी-सुकवणी याने गीली तरकारी वगैरह को सुखाके रखते हैं। पर्व तिथिओं और सचित्त त्यागी व्रतधारी के लीए वापरने में आती है जैनोका आहार सीधा या आड-कतरी हिंसा जिगरका होता है। वो भी स्वहस्त-कारित और अनुमोदित न होना चाहिए लेकीन जिसका त्याग नहि किया होता है, उतनी हिंसा तो अनिवार्य लगती ही है। वास्ते स्वाभाविक रीतिसें मीलता अचित्त खुराक निर्दोष गीना जाता है। और त्यागी मुनिमहाराजाओंको तो त्याग सवका होता है। मात्र ग्राम जरूर पड़नेमें खुराक लेते हैं। और वो भी स्वहस्त-कारित-अनुमोदित और सचित्त न होना चाहिए। स्वाभाविक रीतिसें अचित्त और दुसरे दोष जिगरका लेनेका रहता है. उन्होंका वैसी खुराक लेने जाना, आना, वापरनेमें और जितनी अपवाद मार्गका सेवन किया हो, उतनी हिंसा लगती है। ज्यादा हिंसा व असंयम लगता नहि।

जैनोंमें खुराक का प्रकार-साक्षात् हिंसा करने का त्याग

में से हुआ हैं. जहांतक बने वहांतक ज्यादा त्याग रक्खा जावे, वैसे ही ठीक. लेकीन कमती त्यागीओंको भी जहांतक बने वहांतक कभी हिंसा न लगे, यह ही सिद्धांत पर मुखवा का वापरना प्रचलित हुआ हैं. और वो बराबर हैं. यद्यपि त्याग मार्गमें आरोग्य अनारोग्य की चर्चाका प्रधान अवकाश नहीं है आरोग्य दृष्टि से क्या वापरना और क्या नहि वापरना ? वो अलग प्रश्न है । परंतु, त्याग, अहिंसा, और संयमकी दृष्टि से क्या वापरना ? क्या नहि वापरना ? वो ही विचार करना अत्र जरुरी है. आरोग्यकी दृष्टिसे मुखुआ वापरनेकी टीका करनेवाले इतर अनारोग्यकर अनेक चिजें वापरते हैं. और प्रवृत्ति भी ऐसी बहुत करते हैं, उनका त्याग करते नहि. यानि आरोग्यका बहाना आगे धरके उन्होंका उद्देश अपना प्रचलित खानपानकी शैलीकी टीका करनेका होता हैं. अलबत्त, सबकाम विवेक पूर्वक करना चाहिये, और शास्त्रकार भगवंतोका भी वैसा ही उपदेश है, कीसीमें दुराग्रह रखनेकी आज्ञा है भी नहीं । परंतु, खोटा लक्ष्यसे टीका करने वालों आधुनिक प्रचारकोंको उत्तेजना मिलनी न चाहिये । यह खास ख्यालमें रखना चाहिये ।

त्याग दृष्टिसिवाय साधारण सभ्यताकी दृष्टि भी नहिं वापरने लायक चीजें अपवाद यानी रोगों वगैरह कारणसें वापरने की जरूरत पडती है । वास्ते जैनों के मुखवा वापरने के सामने प्रचार करनेवालोंकी टीका व्यर्थ और जैन जिवनकी मर्यादाओ व सिद्धांत समजने बीगरकी है । चातुर्मासमें

सुकवणीमें नील-फुग होनेका और सूक्ष्मजीव वगैरह या कुंथुआदि होनेका, सूक्ष्म त्रस जीवो घुस जानेका, संभव है। गरमीकी ऋतुमें भी बराबर उनकी रक्षा करनेमें न आवे, याने संभाल से नहि रखी जावे तो उनमें जीवो पडनेका संभव होता है। फिर भी, वेपारीयों के पाससे सुकवणी लेनेसे, उन्होंने हलकी चीजें वापरी हो, विना देखरेखसे सुधराइ हो, वगैरह हिंसाका दोष विना समज लग जाता है।

" हरी वनस्पति का त्यागवालोंको तिथि और त्यागके दिनके अगले दिन हरे वनस्पति लाके उनकी चटकी, आचार, संभारी किया हो, तो वो भी काम आता नहि। क्योंकी उनमें हरी सचित्त चीजें वापरनेका हेतु गर्भित रहता है। वास्ते ऐसी युक्ति नहि करना-करवाना। सुकवणी खास करके बहुत सज्जड बरतनमें भरना, उनमें हवा एवं बारीक जंतु भी न जावे। और दूसरी रीतिसे भी बहुत युक्तिपूर्वक संभालना चाहिये। चातुर्मासमें सुकवणीका त्याग करना ही उचित है।

२ खोपरा-चातुर्मासमें नरीयल तोडके गीला गोलीगडी खोपरा नीकाला हो, वोही दिन भक्ष्य है परंतु उनको कतरके नीम भुंज लीया हो, तो दूसरे दिन वापरने में हरजा नहि

३ से १२ तक, पोंक-पापडी, घउकी उंबी, और बाजरी के डुंडे, जुवारके पोंक, चने के ओळे, मकाइ (शेकेली) और चोलेका सुडीआ [मटकीमें रखके अग्नी वाफेली] वगैरह का अवश्य त्याग करना चाहिए। क्योंकी यह पदार्थों बहुत त्रस जीवोंके विनाश से होते है.

४ हरदम त्याग करने योग्य चीजे–

१ हरेक वनस्पतिका "भडथा" करना नहि, एवं–किया हुआ भडथा खाना भी नहिं.

२ उंधीया–हरएक प्रकारकी वनस्पतिका मटकोमें रखके उपर खुल्ली आग जलवा के कंइ वनस्पति ओंका एकही दफा लहजतका अनुभव करनेमें आता है. उसीमें भयंकर आरंभ होता है। और भक्ष्याभक्ष्यका विवेक नहि रहता है। वास्ते उनका त्याग करना उचित है.

३ परदेशी मेंदा याने पसोली–कलकत्ता, अहम्मदाबाद, बम्बई वगैरह जगोंपे आटेकी मीलें चल रही है। उन मीलोंमें मेंदा बनता है, वेपारीयों को फिर अपने लीए जत्थाबंध माल लेते हैं. उनको भेजनेसे रस्तामें खूब वख्त होता है। वेपारीओंके वहां भी महिनाओं तक वो ही माल पेक पडा रहता है। फिर पडतर होजानेसें, उनमें बहुतसी इयळ हो जाती है। अब वो मरा हुआ जीवका स्थूल कलेवर रह जाते है। वैसे परदेशी [मीलका] मेंदेका भक्षण कैसे कर सकें? दीलगीरी तो यह है, की यह बात मांसाहारीयों के सुनने में या देखने में आवे, तो वे अपनी दिल्लगी क्यों न करें?[1] की–"धन्य है! श्रावक बन्धुओं! और हिन्दुओ!

१ बात यह है की मांसहारीयो को अपनी हांसी करनेका वास्तविक अधिकार नहि है. क्योकी अपना विवेक के बराबर वो लोगमें कीसीतरहसे विवेक आना हि दुर्लभ है.

यह तुमेरी अहिंसा कीस 'तरहकी ?' अरे भव्यो ! किसका भक्षण हो जाता है ? वह बराबर सोचो

हमलोगोंको बाईस अभक्ष्यके त्याग करनेमें उभय लोगका भय रखके परदेशी मेदेका बिलकुल त्याग करना युक्त है. मीठाई वालोंसे वैसी मीठाई लेनी नहीं. और उन्हों के पास-भी बनवानी भी नही. और उनका व्यापार भी करना नही, वैसी चीजें वापरने वाले के व्हा उस चीजका भोजन भी करना नहीं, मिलके मेंदेके साथ परसुलीका आटा, एन रवा, मिलका आटा, भी खाना योग्य नहिं है। और चलित रसकी लीखी हुई सूचनाए वाचके-ख्याल पूर्वक कितने दिनका और कीसी तरहका आटा भक्ष्य है ? वो समझ लेना। जहासे अपन लोग (प्रमादि) आलसु हो के वैसी चीजोंका उपयोग करने लग गये, व्हासे उनके लीए बडीबडी मीले, फेक्टरीए खुल गई, उनसे बहुत जीवोंका घात हो रहा है। परदेशी मेंदेकी मीठाइयाँ—परसुली की पुरी, घारी, मीठे फीके खाटे, सुतफीन, गणगण गाठीये, नानखटाई, हिन्दु बीस्कीट, सेव, जलेबी वगैरह

४ मीठे काजु—मीठाइ वाले लोग मीठे काजु बनाते है, वो प्रायः बिगर देखे बनते है। जीनमें त्रस जीवोंका होना संभवित है। इसलीए वो नहि खाना। मानो की खाने की मरजी हुइ, तो काजु के दोनो विभाग अलग अलग करके साफ कर, जीव को बचा कर, बाद घरमें बना के उपयोग में लेना। फिर सादे काजु खाना पडे तो भी उसी तरह देख के

वापरना। परंतु जिस ऋतु में वो अभक्ष्य है, तब बीलकुल काज़ु वापरना नहि। इतना जरूर ख्याल रखना.

९ (वीलायती) डिबेमें पेक किया हुआ दूध—एवं नेसल्स मीलक, मीलक मेइड मीलक, वगैरह दश बारहसें भी ज्यादा जात के नाम पर विक्री हो रही है। मुसाफरीमें, चहा बनाना हो, तो दूध के सबब वो डिबेमें से दूधका उपयोग किया जाता है।

सीसे में पेक की हुइ केरी, मुरब्बा, गुलकंद वगैरह और विलायती बीस्कीट आदि अभक्ष्य है। वास्ते जरूर उनका त्याग करना चाहिए।

उनका उपयोग अपन न करें, तो भी ऐसी परदेशी—एवं देशी भी अभक्ष्य चीजों की प्रतिज्ञा करनी। जीससें आश्रव खुला न रहें। जबतक हरेक चीजपरसें मूर्छा न गइ हों तबतक बराबर फल नहिं मीलता है। इसीलीए शास्त्रकार महर्षिओ ने कहा है की "मरू देशमें जैसे की तांबूल न मीले" तो भी प्रतिज्ञा नहिं करनेसें उन के त्याग का फल न पावें। वास्ते जरूर नियम करना। नेसल्स मीलक वगैरह जो विलायतसें आती है, वो प्रत्येक अभक्ष्य है, उनका विशेष विवेचन लिखनेकी जरूर नहिं है। बन्धुओं! अपने शरीर में रोग, शोक, दारिद्र्य, दौर्बल्य वगैरहका बहुत प्रवेश हो गया है, उनका सबब यही—तुच्छ भ्रष्ट चीजें वापरनें का बदला है। क्यों की "आहार वैसा ही ओडकार" वो दृष्टांत सें समज लेना।

[अब अपने देश में भी परचुरन ताजा दूध मीलनेका

आस्ते आस्ते-वध हो के, डिवेमें पेक किया गया दूध लेनेका मोका उपस्थित होने की तैयारीया हो रही है। क्यो की परदेशी मुडीवालों से डेरी-कपनीआ खडी होनेकी शुरूआत बडे पायेपर हो रही है। शेठ शातिलाल आशाकरण जैसे बडे बडे लोक प्रजाको अच्छा घी या दूध कैसे मिले ? उनके लिये जो प्रचार कार्य कर रहे है, वह प्रचारका मुख्य ध्येय डेरी कपनीया की जाहिरात और विकासमें फायदाकारक है। वास्तवमें-अपनको कुच्छ फायदे मिलनेवाला नहीं है।

५ से २१ तक, सोडा, लेमन, जीन्जर, रोझवरी पीक मी अप, बीस्कास, एल टोनिक, कोल्डड्रीन्क, कोल्डक्रीम जीन्जर, एल लाइम, लीथीओ, अमरीक चेरी चेम्पेइन सीटर, क्वीनाइन टोनीक क्रीम सोडा वगैरह कीतनीक जात शिशामे पेक की हुइ आती है। यो सब वापरने योग्य नहीं है। क्यों की गोटली मुसलमान, पारसी और इतर लोगोने मुहमे डाला हुआ होता है यो ही गोटले अपने लोग मुखपे रखो। इसे स्पष्ट धर्मभ्रष्टता होती है। फिर भी जीवाकुल और बीगर छाना हुआ पानी उसमें वापरने में आता है। और बहुत दिन के वासी एव उतरती जातिवालोंसे बनाया हुआ होता है। इस तरह बहुत दोषयुक्त ऐसी चीज अभक्ष्य है। वास्ते अवश्य त्याग करना। आरोग्य दृष्टिसे भी हानिकारक है।

higher education हायर एज्युकेशन प्राप्त कर के सुधारक की गीनती में आते हुए जैन युवकों अब हृदयमें

कुछ सान रख मर्यादामें रहें तो ठीक है। नहिं तो उनके कटु विपाकका स्वाद लेना पडेगा तब उपाय नहीं रहेगा.

[जैन जाति में जन्म लिया हुआ कितनेक युवकों इतने वहुत आगे वढ गये है—की आरोग्य के तत्त्वो को वीना समजे आरोग्य के नामसें जैन खान—पान विधिकी चेष्टा उडाने वाले अज्ञानी पडें है।]

२२ सें ३५ तक बीडी, होका, चीलिम, चुंगी, चीरूट, तमाकु, गांजा, चडस, माजम, अफीम, कसुंबे भांग, कोकीन, दारू, वगैरह व्यसनों अनाचरणीय है, जीवहिंसा और अनर्थ का कारण, और पैसों का दुरुपयोग है। अलावा इन के कोइ लाभ नहिं। वो चीज कभी न मीले तो, चैतन्य व्याकुल होता है, और उसे क्षयादि महा रोगों की उत्पत्ति होती है। कभी मरण होने का भी संभव है। उनमें आग और पवन के और दूसरे त्रस या स्थावर जीवों की हिंसा होती है। वास्ते ऐसी कैफी पदार्थों का सर्वथा त्याग करना।

[सीगारेटका प्रचार के लीए, होके और चीलीम की नाटकादिमें चेष्टा—करके प्रजासे त्याग करवाने के लीए बीडीयांका वपराश वहुत प्रमाणमें वढ गया है। अब उनके वडेवडे कारखाने तैयार होनेका समय आ चुका है और होते रहे है. बीडीका प्रचार और उनके पर लाइसन्सद्वारा अंकुश, यह सब अवश्य सीगारेटके प्रचारकी प्राथमिक भूमिकाके लिए था और है. इस देशमें सीगारेट के वडेवडे कारखाने निकलने लगे है.] में

[३६ स्थभक दवाऐं—बहुधा—झहरीली, केफी, और रासायणिक, औषधिओका मिश्रणसे होती है, जुठी उश्केरनी और जुठी उत्तेजनासे भविष्य मे नामर्दाई उत्पन्न करके आयुष्यका ह्रास करते है. धतुरा, आक, वन झहर कोचला, सोमल, वच्छनाग, गंधक, पारा, वगैरह विषप्राय औषधोका उनमें संभव है. वास्ते प्रसिद्धि में आती हुइ बहुत जाहिरात सें लुभाके वैसी दवाऐं नही वापरनी चाहिए। स्त्रीओ के लिये भी गर्भ न रहनेकी वैसीही जाहिरात होती है. वो सब नुकशान कर्ता है विषप्राय होनेसे अभक्ष्य और आरोग्य बिगाडने वाली है।]

३७ विलायती दवाए अभक्ष्य है, अच्छी बात तो यह है की-रोगादि कष्टो होते हुए भी न लेना चाहिए। आत्मबल मजबूत होवे तो क्या न हो सकता है? यदि यही आत्मा वैतरणी नदी (नारकीमें) प्राप्त करता है, और यही आत्मा स्वर्गादि सुखोका भोक्ता भी होता है. आखीर, यही आत्मा सिद्धि गतिपे जाता है.

कीतनेक उच्छृंखल, स्वछंदी, शोखीनों, विलायती दवा के डोझ आनंदसे पीते है वो प्रत्यक्ष अनाचरणीय एव दुर्गति के सरल कारण है वैसे मनुष्योंको कभी कोइ उनका-भला-के लिए उपदेश करने जावे, तो उनका परिणाम कीतनेक वख्त खेदकारक आता है. नीतिशास्त्रकारोंने फरमाया है, की—

उपदेशो हि-मूर्खाणां प्रकोपाय न शान्तये ।
पयः पानं भुजङ्गानां केवलं विष-वर्द्धनम् ॥१॥

भावार्थ—दीवानों को उपदेश करनेसे, वो लोग उपदेश सुनके. शिक्षा लेनेके बदलेमें क्रोधीष्ट हो जाते. है. जसे सर्पको दूध पाना केवळ झेहरी वृद्धि के लीए होता है. वास्ते वैसेको प्रतिबोध करनेसे क्या ?

४० गुड—गुडमें जीवकी उत्पति होजाती है, कीतनेक वेपारीयों ज्यादा नफा प्राप्त करनेके लिए गुडके अंदर वेशन, खारा, मट्टी इस तीन प्रकारसे यानी दूसरी चीजोंका मिश्रण करके वेचते हैं. गुडमें उनके वर्ण जैसा (लालरंगके) कीडे हो जाते है. वास्ते वैसा गुड अभक्ष्य है. इसीलिए वो काममें नहि लेनेका उपयोग रखा जावे. गुडमें बहुधा मिश्रण करते होंगे, वैसा अनुमान होता है । वेशन और खारा मीलानेका कारण—गुड दिखने में अच्छा लगे. मिट्टी मीलाने से सौ मण गुड में चार मण मिट्टी मिलानेसे वजनमें ज्यादा होता है । अैसा दगा होते हुवा सुना है । वास्ते वैसा हल्का माल बीलकुल लेना नहि । लेकीन, देशी, माल भी परीक्षा करके लेना. "जीतना सस्ता उतनाहि मेंहगा—बाहरसे शुशोभित वो अंदरसें दोषित" यह सूचना अवश्य उपयोगी है । जो माल खरीदना वो सस्ता देख उनका भपकेमें लुब्ध होके न खरीदना, उनके गुण दोषकी परीक्षा करके अच्छा माल खरीदना व्याजबी है ।

४१ परदेशी मोरस—वो शुद्ध करने में अशुद्ध पदार्थ वापरते है। उनकी चर्चा बहुत जगह हो गइ है। उनका ज्यादा अहेवाल नहि लीखते है। कहना यह है की वैसी मोरस एव सक्कर वापरने से शारीरिक तन्दुरस्ती बीगडना और धर्म भ्रष्टता यही दोनों बडे दुर्गुण है। इसलीए त्याग करना। अब कितनेक मनुष्यों उनका त्याग करके, काशी प्रमुख की देशी चीनी वापरते है। *

लेकीन यह जमाने मे दगलबाज वढ गये है। कितनेक वरत देशी के नामसे परदेशी माल खुब ज्यादा भाव से दिया जाता है। और जहा देशी बनावट होती है वहा भी परदेशी चीनीका मिश्रण होता है। वास्ते ख्याल करना।

इन के अलावा, देखने में जहा दगा होता है। उनका पहिले ही उपयोग रखना। और जबसे खात्रीपूर्वक न हो, यानी शक्ता मालुम पडे, तबसे वो चीज वापरनी नहि। और नियम ले के उनमे दोषित न होनेका बराबर ख्याल रखना।

४२ केसर—अपने देश मे काश्मीरमें बहुत किंमती केसर होता है एव परदेशसें भी केसर अच्छा भी आता है। जहा तक बने काश्मीरी केसर वापरना हर एक प्रकार से उत्तम है लेकीन देशी केसर के नामसें एक तरहका कतरण को ऐसा कोइ रंगका पट लगाके बनावटी केसर बेचने वाले बेचते

---

* चाय आदिक की टेवसे रोज नियमित मोरस पेटमें जाति है। जररीयात पर खाने की चीज अतियोग होने से शरीर में बिगाडा करे उनको पतला करे यह सब स्वाभाविक है।

हैं। और वो रू.२) का रतल सें लगा के रु. १०, १५, २०, तक का रतल मीलता है। वास्ते उससे खूब सावधान रहना। केसर समालने में ख्याल रखना, क्युं की उनको हवा लगने सें सूक्ष्म जंतुओ पडते है, और भी जीवजंतु हो जाता है।

४३ अखी कठोळ—हरेक प्रकारकी अखी कठोळ न खानी चाहिए, प्रत्येक कठोळकी दाल करके खाना सर्वोत्तम हैं। क्योंकि—अखी कठोळ में त्रस जीवों की उत्पत्ति होती है, वो साफ करने पर भी जीवो नीकलते नहीं। और अपनी दृष्टि भी भीतर पडती नहि वास्ते जीवहिंसा हो जावे, इसी लीए कठोळ की ताकीद से दाल बनवा लेना. कठोळका ज्यादा वख्त रहनेसें जीवोकी उत्पत्ति होती है। अखी कठोळ त्याग न हो सके, तो चातुर्मासमें और पर्व तीथि के दिनोंमें तो जरूर त्याग करना। कठोळमें मिठाश होने के सबबसें बहुत जीवोंकी उत्पत्ति होती है। वास्ते वो अवश्य वर्जने योग्य है।

४४ से ४९ तक, हिंदु-दिल्ही-बीस्कीट, जो दिल्ही, पुना, वडोदरा वगैरह जगोंपे बनाने में आते है। वो अपने कीतनेक बन्धुओं वापरते है। परंतु वो बनानेमें परदेशी मेंदा का उपयोग किया जाता है, और उनके हलवे के माफक दो तीन दिन पानीमें हीलाते है। पीछे उनके बीस्कीट बनाते है। वास्ते उनमें असंख्य संमूर्छिम और द्वीन्द्रियादि जीवोंका घात होता है।

केइ बीस्कीट तैयार करने में भी चरबी लगानेमें आती

है, जीसे वो बीलकुल छोडने योग्य है। नानखटाइमें परदेशी मेंदा वापरते है। इसे वो भी त्याग करने योग्य है। विलायती बिस्कीट में इंडोंका रस मीलाते है वैसा सुनने में आया है, और बिस्कीट फुलाने के लिये आटेमें खट्टा जामण-खमीर नाखने मे आता है। कीतनेक माता, पीताओं अपने बच्चों को लाड लडाने के लीये, एव शोख के मवनसे छोटी उमरमें वैसी चीजे खीलानेका आरभ कर देते है, फीर बडी उमर होनेसे बच्चों ऐसी चीजे कैसे छोड सके? और आगे बढते चोकलेट वगैरह खाने की आदतका आरंभ हो जाता है।

८० टुथ पाउडर यानी दंत मजन, टुथ ब्रश.

[दात साफ करनेका ब्रास] विलायती दंतमजन तेयार आते है। वो वापरने लायक नहिं है। न मालूम वो भक्ष्या भक्ष्य कोन पदार्थमें से होते होंगे? इस वजह से वो काममें न लेते ही, बदाम के छीलके की मषी याने उनके साथ कपूर, बरास, चाक [सचित्त के त्यागीओंको चाक को गरम पानीमें हिला के सुकाने बाद अचित्त होने पर वापरा जाता है।] हरडे, बेहे, आंबळे, मस्की दाडम के छीलके, सोनागेरु, कत्था, मोचरस, हीरा दखण, छोटी हरडे, दाडम के सूके फूल, काटाला माया, चणकबाब, वगेरह दातको फायदा करनेवाली बहुत चीजों मे बना हुवा देशी मंजन वापरना युक्त है। दात, हटी यानि दूसरी कोइ अपवित्र जात के हाथोवालों, हरकोइ जानवरोंके बाल, एव रब्बरके टुथ

ब्रशों हिन्दुओं और खास करके जैनोंका मुंहमें डालकर भ्रष्ट होना वो कीतनी शर्म की बात हैं ? फीर वो ब्रशों कीतनी वख्त दांतोमें पोल पाडके बहुत बीगाडा करता है। यद्यपि वो बहुत फायदाकारक नहिं है, और मान लो की कभी होवे तो भी अपन लोग कहां साधनहीन है ? अर्थात् दांतकी शुद्धि, मजबुताइ और दूसरे फायदेकारक बहुत तरहका इलाज है। इस वजह विलायती टुथ पावडर और टुथ ब्रश को काममें लीया जाते होवे, तो बंध करना चाहिये। और उपयोग न किया जाते हो तो, फिर नहि वापरने की प्रतिज्ञा करनी। ऐसी चीजो की प्रतिज्ञा करनेसें फायदा होता है।

[सब लोगोकों सस्तेमें भी दंत शुद्धि के लीये सभीको मुफत मीले, वैसी सगवड सिर्फ दातन ही है। देशी वैदामें आवळ, बावळ, बोरडी और लीमडा के दातनमें कोहचाट दूर करनेका फायदा बताया हैं। कुदरती उत्पन्न हुवेहुए दांत नीकलवानेका बहुत भयंकर रिवाज शुरु हुआ है पेटकी खराबीसे दांत के रोग होता है। यद्यपि पीछे से दांतका रोग पेटका भी बीगाडा करते हैं। लेकीन सबसे सीधा रास्ता यही है की, पेटकी खराबी दूर करनी चाहिये। वो करनेका बिनअनुभवी वैद्य–डाकटरों दांत नीकलवानेकी बात बातमें सूचना करते हैं। जरासा दांतमें या दाढमें दुःख हो जाय की–तावडतोब दर्दीओंको फुसलाते ही अचानक दांत या दाढ नीकाल डालनेका दृष्टांत देखे है। मामुली इलाज कर-

नेसे मीटे वैसा हो, तो भी नीकाल डालते है। अहा! कुदरतकी वक्षीस हुइ चीजका ऐसा मामुली कारणसे विनाश करना, वो कीतनी अज्ञानता!? पीछे वो उत्पन्न कर सकते हि नहि। संभव है कि–परदेशी कृत्रिम दातोका विक्रयके लीये डॉक्टरोंका गुरुओं युरोपीय डॉक्टरोने यह चाल चलाइ हो। वास्ते अच्छे मनुष्यों उनका असल कारणो दूर करके दातकी सफाइ रखना। यहा थोडी यादि देना जरुरी है। की कीतनेक मुनिमहाराजाओं भी इसी तरह निपमाशनादि कारणोंसे दातके रोग के भोग होते है। और केइ केइ दंत संस्कार के प्रयोगमें जा रहे है। इनमें भी डॉक्टरोने चलाइ हुइ उपर मुजबकी बहुत गेरसमज है। दंत संस्कार मुनि धर्मको दूषण रूप कहलाती है, और दातकी वास्तविक शुद्धि भी नहीं होती है। वास्ते उनका मूल कारण हटानेका प्रयत्न करना, वोहि सर्वोत्तम इलाज है। जिन्होका पेट बराबर साफ है उन्होंको दातन करनेकी भी जरुरत नहि रहती क्यों की उन्होंका दात और जीभ साफ रहती है। इसलीए उनको जीभका मैल उतारने की भी जरुर रहती नहि। दात और जीभ साफ करना पडता है, उतनीही पेटकी खराबी मान लेना कीतनेक ऐसे मुनिमहाराजाओं देखे है की जीन्होंका दात चमकते है और मुहका श्वास सुगंधित होता है। जिसके मुखमें सवेरे पतला और सुगंधी पाणी होता है, उनका दात जीभ विना प्रयत्न साफ रहेंगे। और जिसके मुहमें सवेरे

घट्ट, दुर्गंधी, खट्टा, खारा, कडच्छा पाणी होता है, उनका दांत मलिन होते है। क्यों कि–उनका पेटमें मैल है। खाना बराबर पाचन होता नहीं, ऐसा मानना चाहिये। उसका उपचार करनेसे दांत भी अच्छा हो जायगा।

५४ होटेल–विश्रांतिगृह–आनंदाश्रम–भोजनगृह–वगैरहमें बनती हुई हरेक चीज शुद्ध ब्राह्मणीआ कहलाती है। ब्राह्मणीया शब्दका उपयोग जाहेरातके तौरपे किया जा रहा है। पहिला तो यह विश्रांति गृहोंकी मुलाकात लेनेवाले ब्राह्मण-वनीआसे लगाके, लोहाना, कडीआ, ऐसे उत्तरोत्तर ऊंच नीच प्रायः सब हिन्दु होते है! और उनके मालीक कौन जाति के है? वो तो पूरा तपासकरने से मालुम होवे. व्हां चहा, दूध, पूरी, दुधपाक, वासुदी, शीखंड हरेक चीज ब्राह्मणीया के नामसे हर वख्त मील सकती है।

फीर भजीये, कचौरी, आइसक्रीम, कुलफी, आईसवोटर, कंदमूळ, वगैरहकी तरकारी याने शाक, तरह तरहकी चटनीएं, वहमनीआ होवे, और नानखटाइ,

---

१ तमासा देखनेका तो यह है कि–भारतकी आर्य जाति की, और भोजन की व्यवस्थाये तोड डालने के पहिलेसेहि परदेशीओ के प्रयासो में कोन्ग्रेस मारफत प्रचार करवा के आर्योंकी छेल्ली मुख्य स्पर्शास्पर्श व्यवस्था की दिवाले भी अन्त्यजोको होटलोमें फरजीयात प्रवेश करनेका कायदा अमलमें लाके सरकारने भी तोड डालनेका आरंभ करने में मदद दी मालूम होती है।

बिस्कीट, सोडा, वगैरह जीन्होंकी जो इच्छा होवे वो ताजी ब्राह्मणीओं मील सकती है। कहो, कैसी सगवड ?। ओ जैन बन्धुओं ! आर्यो ! यह होटेल वगैरहका प्रचार होने का सबब अनार्योका परिचय है। और उनके सहवाससें हम लोगभी अनार्य जैसा ही हो जाते है। होटलो में बनी हुई सब चीजोंकी विवेकपूर्वक तपास करनेमे आवे, तब ही मालुम पडे, वहा, क्या हाल है ?। लेकीन वो तकलीफ किन्होंको लेनी है ? "हिन्दुभोजन गृहोंमें चीज तैयार हुई वह शुद्ध पवित्र ही होगी." सबबकी-विवेकका विचार, भक्ष्याभक्ष्यका विचार करे, तो फीर खाना पीना कीस तरहसे हो सके ? ऐसे हम विवेक विकल, अर्धदग्ध, जीव्हा इन्द्रियकी रस लपटतामे क्या क्या अकार्य न कर रहे है ? स्पर्शास्पर्श याने भक्ष्याभक्ष्यका विचार नहि करते भोजन करके आनदित होते है। अबीर मुसल्मान तो क्या लेकिन युरोपीयन होटेलमें से मक्खन, पाउं (बिस्कीट) डबलरोटी वगैरह मगवाके खाने वाले भी क्वचित् मिलनेका संभव है। अफसोस ! यह सस्कार भ्रष्टताका विवेचन करते ही कपारी पैदा होती है। वैसे कार्यों को करनेवाले यह कलियुगमे बढ रहा है हमको ऐसे प्राणीओ प्रति अनुकपाकी दृष्टि होती है। उन्होको कैसे बुरे विपाक अनुभवना होगा ? और उन्हो को कैसा कैसा त्रास होगा ? अब भी हे भाइओ ! कुछ समजों, और भ्रष्टतासे अटक जाओ ! ओह जैन युवकों ! यह श्रमण भगवत श्री महावीर देव

के शासनमें मनुष्य जन्म पाये हो तो यह तुम्हारी मुसाफरी सफल कर लो दश दृष्टांतसें मुश्केल पाये हुये मनुष्य जन्म फीर मीलना दुर्लभ है।

"काग उडावण काज प्रिय ज्युं डार मणि पछ-तायारे" असा वख्त आने न पावे। वास्ते उक्त तीन हर्फो (विवेक) की कमिना हो तो, उन विवेकरूपी दोस्तको जगाओ और आत्महितार्थे भ्रष्टाचारको तिलांजली दे दो।

५५-५६-५७ भिन्नभिन्न तरहकी पार्टीए-यह पार्टीआं बहुधा रातके समयमें ही होती है। जिसमें जैनोको जानाहि अनुचित है, यह तो खुल्ली बात है। यह पार्टीओंमें भक्ष्याभक्ष्यका विवेक संभालने के लीये खास व्यवस्था नहि होती है। यह विवेक समालना अपवादरूप और अनिच्छाओं का विषय है यह पार्टीआंका खाना बहुत भारी दामका होता है। एक रुपयेसें लगाके दोसो तककी एक एक डीश होती हैं। और उनमें जुठा भी बहुत छोड देते हैं, सिर्फ जमानेका मोह शिवा उनमें कुच्छ भी फायदे के तत्त्व दिखनेमें नहि आते है। पुराने वख्त के सादे और अल्प खर्च एवं स्नेहभाव-नायें वगैरह अनेक सुतत्त्वोसें रचा हुआ भोजनो की वडी भारी टीकायें शुरु हो रही है। वह टीकायें सुधारा, वधारा, और परिवर्तन करानेवाली तो नहि है। ऐसे शब्दप्रयोगें तो निमित्त मात्र है, किंतु यह सादा-भोजन व्यवहार के अलावा

अवकी पार्टीओंका भोजनका आरमको इस देशमें उत्तेजन देनेके लीए ही टीकाये की जाती हैं।

सादा भोजनकी अपनी पद्धतिमें सबको सरळतासे मील सके, वैसे मिष्टान्न के साथ, प्रत्येक मनुष्यको चार आने खर्च आता है। याने थोडीसी रकममें अधिकव्यक्ति लाभ ले सकती है। तब पार्टीआमे कार्डसे अमुक आमन्त्रित संख्या ही लाभ ले सकती हैं। और वो भी केवळ व्यक्तिया ही रहती वरन्त उनके स्रीया, बाल बच्चे तो घरपेही रह जाते हैं। उन्हो के लीये पार्टीआ भी नहि, और सादे देशी जिमणोंका भी निषेध तो वो लोक कर रहे हैं। कमाल! दोनो तर्फसे बराबर कमबख्ती।

धर्म, मार्गानुसारिता, और आर्यसंस्कृतिके समजनेवालों एव चाहनेवालेको ऐसी पार्टीआ रचना नहि। इतनाहि नहि, किंतु सिद्धान्तकी रक्षाके लीये उसमें जाना भी नहीं। धार्मिक विवेक समाळनेका कुछ भी साधन उसमें नहीं है। लेकिन स्वच्छंदीजनोको यह जमानेमें कोन पूछ सकता है? क्यों कि उन्होंका ही यह जमाना तो है। उन्हों के विचार से तो उन्होंको उत्तेजन देना, वह इस जमानेका भूषण है। धर्म और सामा-

१ छोटी मीजलसो में भी अल्पाहार (सपूर्ण आहार खर्चाळ) होनेसे मु केत्र होता है) टीकोनको इसाफ देनेकी प्रवृत्तिआ भी पार्टीपद्धतिकी भूमिका स्वरूप समजना।

जिक कानूनो एवं नियमोंसे स्वतंत्र रहना इच्छने वालों पर प्रतिवर्ष धारासभाकी बेठकोमें नये नये कानूनों के ढगले डाले जाते है। और गुलामीके भावि कारागृहे उत्पन्न होते है। वो भी इस जमानेका हि विलास है।

शहर के आलीशान मंजिलोंकी खोलीयों में सिकुडकर पडा रहनेका भी आरोग्यशास्त्र इस जमानेकी ही भेट है। लेकीन आज यह बात ख्याल में नहि आवेगी। बन्धुओ! अपना भला किसीमें है? वो सोचो, और परमज्ञानीयों के पवित्र सुमार्ग में स्थिर रहकर अपना भला प्राप्त करो]

९८ पानी—इस कलिकालमें वडे वडे केइ शहरोंमें, स्टेशनोपे पानीके नळ—मशीन—वडीवडी टांकीआं वगैरह बहुत बन गये है। जीसे मुसाफरी वख्त, और हवा लेनेको फिरते वख्त, अगर रास्तेपें कहीं भी प्यास लग जाय, उसी वख्त बीना छाना पानी पीया जाता है। वो बील्कुल अनाचरणीय है। बीना छाना हुआ पानी शास्त्रकारोंने दारू मुताबीक फरमाया है। इसलीए पानी मजबूत जाडे कपडेसें बराबर छानके काममें लेना। और पानीके बरतनमें जुठा ग्लास—जीनको मुंहकी लाळ लगी हो, वैसे बरतन डुबानेसें असंख्य समूर्छिम जीवों पेदा होते है। ऐसा न बनने पावे इसीलीए एक अलायदा लोटा लेके उनके गलेमें मजबूत लोखंडका जाडा तार लगाके तैयार रखना। जीस वख्त पानी लेनेकी

जरूर पडे उसी वख्त उस लोटेका उपयोग करना। और जिसलोटा या ग्लाससे पानी पीया हो, उसे भी मुहकी लार्ड लगनेसे कपडेसे साफ करना। जब पानी पीना पडे तब हरेक वरत वो ग्लास देखना की–" उनमें सूक्ष्म जीव जतु या कचरा तो नहीं है?" देखके ही पानी पीना। खुल्ला रखा गया पानी पीनेमे बहुत दोष है।

पानी छीछरा ग्लास से पीना। क्यों की "उनमे क्या है?" वो देख सकते है। (लबा और गहरा) प्यालेमें देखनेमें नहीं आने वैसे प्याले काममें नहि लेना। वो कपडेसे बराबर साफ भी नही हो सकते है। सामान्य रीतिसे ही (लबे गहरे) प्याले बराबर देखा नहीं जाता। उनकी भीतरकी कीनारीके नीचे राख, मैल, कचरा वगैरह रह जाता है। क्योंकी ये बराबर साफ नही हो सकते है। वैसे ही छीछरे प्यालेके भी गोल काठे के नजाकमें मैल भरा रहता है, जीसे गोल काठे वाले छीछरे प्याले भी काम के नहि है।

श्रावकोंने मुहके दूरसे–उपरसे पानी पीनेकी वैष्णवोंकी तरह आदत रखनी ठीक नहि है। क्यो की दूरसे मुहमें पानी डालते वख्त "सपातिम जतुओ" मुहमें गीर पडते है, अगर पानीमें जीव हो तो वो भी मुह में आजाता है। किन्तु मुहको ग्लास लगाके पीनेसे दात और होठ के स्पर्श होते ही उन्हे बचा सकते है। और अपने लोग भी ऐसी जतुओंसे बच सकते है। स्वपर उभयकी दया और रक्षा होती है।

वर्तमानमें नल होजानेसे पानी छाननेके संबंधमें और संखारा संभालनेकी बाबतमें बहुत अराजकता चल रही है। इस वजह दया प्रेमीओंके इस संबंधमें बने वहांतक बेदरकार न रहना वैसे ही गटरों होजानेसें पानी फेंकनेमें, वापरनेमें और उनमें यद्वा तद्वा डालनेमें भी विवेक रखनेमें नहि आता हैं। यह बहुत अयोग्य है। दया दृष्टिसें यह बात उपेक्षा करने जैसी नहि है। गटरो में हरेक चीज जानेसें वो सड जाती है। फीर उनमें बहुत जीवोंकी उत्पत्ति होती है। उससे हर तरहसे हवा बीगड कर आरोग्यको नुकसान करती है। गटरों के विष्टा मिश्रित पानीसे तरकारी, फळ, फुल वगैरह तद्दन फीके और स्वादहीन होते है। और एकदम सूक्ष्म रीतिसें गंधका अनुभव करनेवालों को उनमेंसें भी विष्टाकी वास आती है। सच्ची म्युनिसिपालिटी सूर्यका धूप, कुत्तो, काग, गधा, वगेरह है। वो कुच्छ भी गंदकी रहनें नहि देते। लेकीन नळों, गटरों, विगैरह परदेशी माल की विक्री-करनेंका और प्रजा जीवन को काबु (हाथ)में रखने के लीए बडे आडंबर सें "म्युनिसीपालीटी" की स्थापना करके परदेशी लोगोने हिंसा के वडे मत्थकें चालु कर दीये है। श्रावक वर्गको विवेक रखना। स्वच्छता के नामसें मुनिमहाराजाओं के लीए भी यह कृत्रिम म्यु० ने मुश्केली खडी कर दी है।

थोडासा प्रमादसे असंख्य जीवोंका नाश हो जाय वो कैसा अनर्थ है? जीसे हरेक भाइओ और भगिनियां पानीके लीए अवश्य ध्यान देंगे, अैसी हमारी प्रार्थना है।

"श्रावकोंने प्रत्येक पहोरमें यानी तीनतीन घंटेके बाद पानी छान कर पीना।" उनमें जीतनी आलस्य उतना हि पाप है। नल होजाने से अन पानी पीने, और वापरने में बहुत अराजकता चल रही है।

"यत्र यत्र प्रमादः तत्र तत्र हिंसा" प्रमाद छोडने वीगर धर्मका पालन कहा सुलभ है? धीरजसें उपयोग पूर्वक चलना वो हि धर्म है। उभय लोकका डर रखके. जो सज्जनों "अष्ट प्रवचन माताको"–हृदय में रखते चले उन्होका ही कल्याण और पृथ्वी पे आना सारभूत है, एव बाकी के सब ही इस जमीन को भारभूत ही समजना. धन्य है! श्री कुमारपाळ महाराजाको की जिन्हेंने अठारा देशमें "अमारी (अहिंसा) पडह" बजवाया। जीन्हों के वरतमे गाय, भैंस, बैल, घोडे, वगैरह जानवरों को भी पानी छानकर पीलानेमें आता था। और उन्हीको 'परमार्हत' पद्वी कलिकाल सर्वज्ञ श्री हेमचन्द्राचार्य महाराजने दीया था। वो कुमारपाळ महाराजा भविष्यकी आनेवाली चौवीसी के प्रथम तीर्थ कर श्री पद्मनाभ प्रभुके गणधर होनेवाले है। उनका यशवाद आज भी प्रवर्तता है। और आगामि भवमे भी प्रवर्तेगा]। वैसे महापुरुषों सदा जयवंत रहो। अरे! अपन लोग कब प्रमाद रूपी चादरको दूर कर पाप रूप मलिन शय्यामें सें उठ कर वैसे परमार्हत हो के शिवबधूकी साथ आनंद लेने को भाग्यशाली होंगे? जिससे भवाटवी रूप प्रचंड तापका उपशम हो।

५ बहुत आरंभसे उत्पन्न होनेसें नहि वापरने योग्य चीजें, ओर उनका त्याग करने का सबब-

१ इक्षु (शेरडी)—बहुत खानेसेही इच्छा तृप्त होती है. और उनके छोतरे बहुत नीकल्ते हैं। चुसने से मुंह की लाळ में समुर्च्छिम पञ्चेन्द्रिय मनुष्योंको उत्पत्ति होती है। और मिठान होनेसे मुंगाआं वगैरह चढती है उनके पर पांउ पडनेसे एवं जनावरों के खाने से बडी हिंसा होती है।

२ से १० तक. सीताफल, रायन, रामफल्ल, खलेलां, पके गुंदे, जांबू, करमदे, बोर, वगैरह। यह चीजों के बीज फेंक देना पडता है। वोह मुंहमें से नीकाल के, बाहर डाल्या जाता है उनमें भी समुर्च्छिम मनुष्योंकी और उक्त मुताबीक दूसरे त्रस जीवोंकी हिंसा होती है। बोरमें से कीडे वगैरह जंतुअ नीकल्तें है, उससे भी वो अभक्ष्य हैं।

बराबरकी समाल तो यह कहलाती है की—हरेक चीजमें से निकाल्या हुआ बी, आमकी गोटीआं वगैरह को राखमें लपेट कर साफ करके फीर बाहर छोड़ना चाहीये।

गीले अंजीर, सेतुर, फालसे—ज्यादा बीज वाले पदार्थ होनेसें त्याग करने लायक है।

शींगोडे—विकार वृद्धिके निमित्त होनेसे वर्जना। वो तलाव के पानीमें होता है, उनके आजुबाजु बहुत त्रस जीवों की उत्पत्ति होती है। जीसें सींगाडे छीनते वख्त बहुत त्रस जीवोंका घात होता है। और पानीमें पैदा होनेसें उनकी

चारों तर्फ लील, फुल, शेवाल हो जाती है। वास्ते अवश्य त्याग करना।

वालोर—श्रावकातिचार में भी लीखा है की "वासी वालोळ, पोरू पापडी खाधा" जो वालोर आजकी उतारी हुइ हो, वो रात वासी रहने से उनमें त्रस जीवोंकी उत्पत्ति होती है, इसीलीए दुसरे रोज अभक्ष्य हो जाती है। उसी दिनकी उतरी हुइ हो तो भी उपयोगपूर्वक देख के वापरनी युक्त है। क्यों की उनमें कीडे वगैरह त्रस जीवों रहते है। यदी उसी दिनकी ताजी वालोरें मीलनी ही मुश्केल है। और इस तरकारी वीगर चले ज नहि, वैसा तो कुच्छ नहि हैं। तो फीर उनका त्याग करना वोही सर्वोत्तम है। तो भी ममता न छुटी जाय तब, पूर्ण समालके ख्यालपूर्वक और भक्ष्याभक्ष्यका विवेक समालके काममें लेना। और सर्वथा त्याग हो जाये तो सबसे ठीक है।

"६ दर्शन विरुद्ध और लोग विरुद्धके सबसे त्याग करने योग्य वनस्पतिया"

पडोरा—ये सर्पके आकार जैसा होनेसे और-अशुद्ध परिणामके हेतु होनेसे त्याग करना

फणस—दर्शन विरुद्ध होने से (मांस पिंड सरिखा दिखता है) अनाचरणीय है।

भुरुं कोळुं—अन्य दर्शनीय वगैरह उनको देवी आदिकी पूजामें पेटं की कल्पना करके उनका बलीदान देते है। इससे वो वर्जना (औपवादि कारणोंसे प्रमाण रखा जाता है.)

कोळु—वडा फल होनेसे कीतनेक नहि वापरते।

कडुं तुंबडी (कडु दुधी)—कोसी वख्त झेरी नीकल जाय तव आत्मघात होता है. वास्ते अनाचरणीय है।

पक्के कंटोले, कारेले, टांमेटे, कंकोडे—उनके प्रथम रंग हरा होता है, और पकनेसे लाल हो जाता है। उनमें और कंटोले और कारेलेमें जीवांत वहुत पडती है। टींडोरे में वीज खूव रहते है, वास्ते यह चीजोंका अशुद्ध परिणाम होनेके सववसे और त्रस जीवोंकी हिंसा होनेके लीए त्याग करना. इनकी ज्यादा समज "श्राद्ध विधिमें" दिया है।

मधुक—महुडेके झाड के फळ, जीनको महुडे किया जाता है। उनमें से दारु वगैरह वनता है। वो नीशेवाली चीज और अशुभ परिणाम करनेवाली होने से वर्जनीय है। फीर त्रस जीवोंसे व्याप्त रहता है।

७. त्रस जीवोंकी वहुत हिंसा होनेसें वर्जने योग्य वनस्पतियां.

१–२. वीली, विलां....यह वनस्पतियांमें कीडे और क्षुद्र जीवों उत्पन्न होनेके सववसे सर्वथा वर्जनीय हैं। तव उनका वोल ओचार करके वापरना, वो कितना त्रासदायक

कर्तव्य है ? प्रसूति वगैरह भयंकर रोग का कारण हो, तो भी यह चीजें बीलकुल दृष्टिसे दूर रखने योग्य है। स्त्री वर्ग में हरेक वस्तुओं खानेकी (जीभको स्वाद लेनेकी) लालसाए ज्यादा रहती है। उन्होने पापका भय समजके अवश्य वर्जना चाहिये।

३ सरगवेकी सेम—फाल्गुन, शुक्ल पूर्णिमा बाद उनके बीजमें त्रस जीवो उत्पन्न हो जाते है, उसे आठ महिने तक उनका त्याग करना।

४ कोयीज (कर्मकलो)–उनके पत्तेमें उनके जैसे रंग के ही त्रस जीव होते है. और वो मालूम नहि होता–जीससे वो आठ महिना तक वर्जनीय है. और योग्य ऋतुमें भी सभाल पूर्वक पत्तोको देखके वापरना युक्त है. उनकी वास और पत्ता दोनो देखते ही प्याजकी जातिका याद दिलाता है. वास्ते वो त्याग करना युक्त है.

बरसादकी ऋतुमे (अशाड शुक्ल १५ पूर्णिमा से कार्तिक शुक्ल १५ पूर्णिमा तक) त्रस जीवोंकी उत्पत्तिका सबबसे अवश्य त्याग करने योग्य वनस्पतिआः—

१ से ४ भींडे, कटोले, तुरीए–दूसरी ऋतुओंमें उनमे भी जीव तो होते है. चातुर्मासमें ज्यादा कीडों वगैरह जीवोंकी उत्पत्ति होती है. और करेले वगैरह बाहरसे कुछ थोडा भी सडा हुआ नहि दिखता. और उनको समारते वख्त

अंदरसें कीडे देखनेमें आते है। ख्याल रक्खो तो भी यह जीवोंकी हिंसा हो जाती है, इसीलीए बरसादकी ऋतुमें खास करके उपयोगमें नहि लेना।

करेले, तुरीए-वगैरह उपरका विभाग खडेवाले-खडब-चडे होनेसें उनमें कुंथुंओं वगैरह बारीक त्रस जीवों घुस जाते है, वास्ते वैसी वनस्पतिआं पुंजनीसें ख्याल पूर्वक पुंजकर समारना चाहिए, और वनस्पतिओंकी तरकारी शुद्ध करके वापरना युक्त है।

ठंडी ऋतुमें भी भाजी पान वगैरह उपयोग पूर्वक चाल-कर शुद्ध करके वापरना ठीक है। उनमें भी सब जातकी भाजी छानके वापरना। क्योंकी उनमें कीडे कुंथुं वगैरह त्रस जीव नीकलतें है। तब उनका ख्याल आता है, और तीन वख्त छांननेसें जीव नीकल जाय, तब वो फेंक देने योग्य रहता है। वापरना न चाहिए।

प्रकरण ७ वां

चालु वापरनेमें आती हुइ वनस्पतिआं और-उनके बारेमें विवेक रखने की आवश्यक्ताएं. तरकारि-मेसें काममें लेनेके योग्य और कच्चा-पक्का फलमेंसे काममें लेने योग्य-

शाक-	फल-
१ काकडी, बिगर मूल पानकी	तरबुच

२ करेले ,,	मीठा लींबु
३ कटोले ,,	पोपैया
४ गल्के ,,	सफरजन
५ गुवारकी सेम ,,	पीचीज
६ कच्चे गुटे ,,	चीकु
७ हरे चने ,,	केरीकी जात
८ रागुच (आरिया) विना मूल पानकी,	जमरख
९ चोली ,,	अनेनस
१० कच्चे टमेटे ,,	कोठफल
११ टींडोरे (सुफद) ,,	केळे
१२ डाळा ,,	दाडीम
१३ डोडी ,,	आवले
१४ तम्बीयु–खुजीयाँ, सकरटेटी	नारगी, (सतरा)
१५ तुरीआ ,,	नरीयल, कच्चा–पक्का

१ कच्चे गुदे को तोड क उनम का बीज उसी वरत रास में डाल देना क्यु की वो ग्वानका पदार्थ समज के उनके ऊपर मक्खी बेठती है और उनकी पाग चीपट म अटक जान से वो ऊठ सकती नहि है। फीर वो मर जाती है, जीसें ग्यास उपयोग रखना.

२ कितनेक मुनिमहाराजों कच्चे टमेटे भी ज्यादा बीज वाले होनेमें अभक्ष्य होने का फरमाते है। देशी वयक मे बेगनकी जाति कहनेकी बात भी सुनने में आई है। बहुश्रुत पुरुषोमे नक्की कर लेना।

१६ तुएरा — पपनस

१७ दातन (वावळ, वोरडी, झील, आवळ) — हरी द्राक्ष

वीजोरें

———o———

१८ परवर — २४ मोवरी

१९ पांदडी, पापडी, — २५ खटा-नींबु

२० फणसी — २६ मटर

२१ भींडा — २७ आलकुल

२२ मीरची — २८ परवर

२३ मरवा — २९ मीठी दूधी

[और दूसरे देशोंमें होते हुए पहिचानवाले एवं अभक्ष्य न हो वैसी तरकारीयां और फळ उपलक्षणसें वापरने योग्य समझना किंतु उनकी भक्ष्याभक्ष्यता गुरु (मुखसें) गमसें नक्की कर लेना] उक्त लीखी हुइ वनस्पतिमें सें भी यथाशक्ति त्याग करना। और वहुधा हर वख्त मील सकती हो, याने काममें लेने में आती हो, जैसेकी केळे अलावा हरेक हरी चीजें जो रखना हो, सो अमुक वख्त तक खाना, इनके अलावा त्याग करना जैसेकी कार्तिक महिनेमें कभी कभी ही खाना. वैसे हरदमके लीए प्रतिज्ञा कर लेनेसें वाकीके समयमें "विरति" का लाभ मीलता है। सववकी-केरी शित ऋतु पीछे मील सके, जीसे फल्गुन या चैत्रसें आर्द्रा नक्षत्र तक काममें आवे। पीछे त्याग। वैसेही संक्षेप पूर्वक

प्रतिज्ञा लेनेसे बहुत लाभका कारण है. और-प्रतिज्ञा लेली हो, वहासे प्रत्येक वर्षमें कुछ-२ वनस्पतिओंकी बील्कुल छोडनेकी भी प्रतिज्ञा करनी। जैसेकी-१९९७में कुछ २ हरी चीजोकी प्रतिज्ञा की, उसी वरत साथमें असी प्रतिज्ञा करना की-"१९९८ से मुजे नोलकोल, मोगरि, पपनस, चीकु पांचीजका बील्कुल त्याग, १९९९ से डालीं, हरीमरीच, मरवा, वगैरहका सर्वथा त्याग उसी मुताबीक, अगले वर्षो के लीए स्वशक्ति मुताबीक प्रतिज्ञा कर लेनी, जीसे उसीही वरत अमुक वस्त पीछे त्याग करनेकी भावना होनेसे उसीही वस्तसे अभयदान देनेका फल मील जाता है। इस मुताबीक नीयम करनेसे केइ हरी वनस्पतिओंके जीवोंको अभयदान देनेका फल मीलता है। और जबतक प्रतिज्ञा न की गइ हो तबतक काममें लेना न हो तो भि कुछ फल मील्ता नहि है। और हिंसाका पाप लगता है।

फीर भी श्रावकोंने "छ-अट्ठाइओ" में वनस्पतिका जरूर त्याग करना. जघन्यसे पाचपर्वी तिथिओमें-शुक्ल पचमी, दो अष्टमी, और दो चतुर्दशीमें-उत्कृष्टसें-

---

१ पर्युषण महापर्व की अट्ठाइ भादरवा वद १२ सें लगाके भादरवा शुद ४ तक। इस तरह ७ अट्ठाइ मनाइ जाती है। वो दिनोंमें सचित्तका त्याग वनस्पतिओं का त्याग, ब्रह्मचर्य का पालन अमारि का प्रर्वतन, जिनपूजा, गुरुवदन, व्याख्यान श्रवण, सामायिक, पौषध, अतिथि संविभागादि नियम और प्रतिज्ञा अवश्य अच्छी तरहसें करना.

बारापर्वी तिथिओंमें दो बीज, दो पंचमी, दो अष्टमी, दो चतुर्दशी, अमावास्या और पूर्णिमामें, और मध्यसें सात आठ या दश तिथिओमें अवश्य हरी वनस्पतिओंका त्याग करना चाहिए। वो तिथिओंमें केवल पक्के केळे कीतनीक व्यक्तिएं उपयोगमें लेते हैं, सबबकी वो अचित्त है। तो उनके अलावा बाकी सब वनस्पतिओंकी अवश्य प्रतिज्ञा कर लेनी चाहिए।

फिर सामान्य नियमसें कहा है की, वीन पहिचाने फळ, नहि शोधी हुइ तरकारीआं, पत्र, सुपारी वगैरह आखे फळ, गांधीकी दुकानके चूर्ण, चटनी, मैला घृत, और विना परीक्षा कीये लाए हुए दूसरे कंइ पदार्थों, के खानेसें मांस भक्षण समान दोष प्राप्त होता है। उनमें भी, सुपारि चातुर्मासमें आजकी कटी हुइ आज ही उपयोगमें लेनी, दूसरे दिन लिल फुग होनेके कारण सें वो नहि वापरना। वैसेही इलाचि जब वापरनी हो, तब उनका छीलटा नीकालके अच्छी तरहसें तपास करके वापरना युक्त है। चातुर्मासमें पिपरि मूळके गंठोडे, सुंठ वगैरह

२ चैत्र और आसो महिने की दो अट्ठाइओ शाश्वती है. वो चैत्र शुक्ल ७ से १५ पूर्णिमा तक, और आसो सुद ७ से १५ तक समजना.

३ तीन चौमासी की तीन अट्ठाइआं वो एक कार्तिक सुद ७ से १५ पूर्णिमा तक, दूसरी फाल्गुन सुद ७ से १५ पूर्णिमा तक, तीसरी अशाड शुक्ल ७ से १५ पूर्णिमा तक. ऐसे अट्ठाइ मानना.

लील फुग, कुंथु आदिकी उत्पत्ति होनेके सबब नहि खाना। चुनेकी फाकमें रखनेसे सडते नहि दवाइ प्रमुखमें वापरना हो, तो उनको अच्छी तरह देखके वापरना युक्त है। बने वहातक तरकारी वगैरह नोकरोंसे नहि खरीद करवाना, स्वयं खरीदके उनको स्वयं ही समारना याने सुधारना। जीससे यतना का अच्छा उपयोग रहता है।

प्रकरण ८ वां

सचित्त त्यागी, द्वादश व्रतधारी, और, चौदह नियम धारनेवालों को सचित्त के बारेमें ध्यान में रखने योग्य कईक खुलासे।

सचित्तका बीलकुल त्याग कीया हो, उन्हे कौन कौन चीजे सर्वथा याने सचित्त रहे वहातक वो छोडना? और कौन कौन सचित्त पदार्थ है? कैसे अचित्त बने?

गेहूँ बाजरी जुवार मेथी	आटा करनेसे और भुजनेसे या पकानेसे अचित्त होता है।
कठोळ वगैरह अनाज, भुना हुवा चना जुवार की धानी	भरडने से, दाल या आटा करने से और रेतीमें भूंजने से अचित्त होता है।

हर एक अभक्ष्य पदार्थ	महा सचित्त है
धनीआ जीरा सौंफ अजवान	} कूटनें से या अग्नि का प्रयोग करने सें
वडी सोंफ	सुकी को भी भुंजना चाहिए
नीमक "सिंधालुन	} कुंमारकी भट्ठोमें या खूब अग्नि की भट्ठीमें पकानेसें
चौंक खडी कॅम्फर चोक	} पानी में उबाळने सें अचित्त होती है।
चॅलित रसमें कहलाती चीजें	} महा सचित्त है।
[बोल अचार	} महा सचित्त है।

१ छांछ में या करंबादि में डाला हो, तो भी जीरा अचित्त होता नहि (हीर प्रश्न में)

२ सफेद सिंधव सचित्त है।

दंत मंजन में वापरते हैं, लेकीन अचित्त कीये वीना वापरा हुआ सचित्त के त्यागीओ को काममें न आवे। कॅम्फर चोक की बनावट भी अपन लोग नहि पैछानते, जीसे सचित्त त्यागीओने नहि वापरना.

४ इनमें दो इन्द्रिय जीवो की भी उत्पत्ति होती है। वास्ते

तीन उबले चीगरका पानी	तीन उबले आनेसे बराबर अचित्त होता है। और ऋतु भुजन के काल तक अचित्त रहता है।
शरबतें गुलाबजल केवडाजल	नहि वापरना. सचित्त है.
विलायती प्रवाही दवाई	केइ प्रवाहि शिवायके दवाऐं अचित्त हो, तो भी अपवित्रादिक के सबब नहि वापरना. पवित्र वापरनी पडे, तो भी अचित्त पानीमें डालके भूकी वगैरह वापरना. एकदम प्रवाही दवाएं नहि वापरना.
बरफ करे	अभक्ष्य होनेसे महा-सचित्त है.

महा सचित्तमें है। सचित्त के त्यागीओंने वो सबका त्याग करना होता है।

५ पानी ठंडा करने के बरतन पर ढाकनेका ध्यानमें रखना. नहि तो उनमें से गरम बराळ नीकलनेसे, मक्खी, मच्छर, और दूसरे सपातिम जीवों गीरे, तो हिंसा होती है वास्ते अवश्य ख्याल रखना.

हरे दांतन — सुके होजाने से अचित्त.

नागरवेल के पान — घी शुद्ध करने में वापरने से अचित्त हुआ हो, तो वो वापर सकते.

नीम के पत्ते — कढी में डाला हुआ हो, तो वापर सके.

तुलसी के पान, ईलाची के पान—गरम उकाळा वगैरह में वाफ लीआ हो, तो वापर सकते हैं।

नीम के महोर, आंबा के महोर—नहि वापरना।

गुलाब के फुल—मीठाइ वगैरह में डाला हो. और अचित्त हुआ हो, तो वापर सकते।

चटनी–हरा धनीआकी, फोदीनेकी—उनमें नीमक सचित्त पडता है, ऐसे दोनो सचित्त हो तो भी उनको खूब घुंटने से परस्पर शस्त्र लगने से दोनो दो घडी बाद अचित्त हो जाता है।

गुवार के आचार—इनमें बीज है, वो दो घडी बाद अचित्त होता नहीं।

दाडम—बीजसहित होनेसें दो घडी बाद भी अचित्त होता नहीं, रस नीकाला हो तो, वो दो घडी बाद अचित्त होता है।

---

१ त्याग के दो भेद है। फक्त सचित्त सर्वथा त्याग और दूसरा-वस्तु-सर्वथा त्याग याने जिनको सचित्तका सर्वथा त्याग है, उनको अग्नि आदिसे अचित्त कीया हो, तो वापर सकते है। परंतु जिनको

पेरू—[जमरुख] वो भी, दो घडी बाद अचित्त होता नहि। अग्नि का शस्त्र लगे तब अचित्त होता है। तो भी शाक वगैरह पकानेसे पेरू काफी नक्कर होनेसे पकता नहि, और सचित्त रहता है। वास्ते उनका सर्वथा त्याग करना।

ईख—[शेरडी] मात्र रस नीकालने बाद दो घडी पीछे अचित्त होता है।

सेतुर—सचित्त है। इसलीए सर्वथा त्याग करना।

सीताफळ—सचित्त ही रहता है। बीजसे गर एकदम अलग नहि पडता।

जांबु, रायण, बोर, खलेला, गीली बदाम, द्राक्ष, गीली—बीज नीकालने बाद दो घडीसे अचित्त होता है।

बिज सहीत पक्के केळे—सोनेरी केळे कलकत्ते तरफ होता है। वो पक्का होनेसे बीज उनमें भी रहता है। अचित होनेका चोकस नहि कह सकते। संदिग्ध होने से नहि वापरना। बिना बीजके सोनेरी या हरकोई पके केळे छीलटा नीकालने बाद तुर्त ही अचित्त होता है। हरा वनस्पति

दाडम, जमरुख, वस्तुओंका त्याग है, उनसे सचित्त या अचित्त कुछ नहि वापरा जावे, यह स्पष्टीकरण करनेका सबब यह है की—अर्थ का अनर्थ न होवे, क्यु की अपने में अकर्ता और जटताने बहुत स्थान लीया है, इसीलीए हरएक बाबत स्व मतिसे समजनेका निषेध कीया है॥ वास्ते गुर्वादिसे समजना। नहि तो अनेक प्रकारसे अनर्थ हुआ देखनेमे आता है।

त्यागी को केळें भी वापरने योग्य नहीं है।

पक्के खडबुच, सकरटेटी-जीतने वीज हो वो सब खात्री पूर्वक नीकालने वाद दो घडी पीछे अचित्त होता है।

काकडी-वीज अलग नहि पड सकतें। पकानेसें शाक वगैरह अचित्त होता है।

केरी-याने आमका रस-गुटलीसें अलग होने वाद दो घडीसें अचित्त होता है।

नरीयल-वीज नीकालने के वाद पानी और कोपरा अचित्त होता है।

पक्की इमली, छुहारा, खजुर-वीज नीकालने के वाद दो घडीसें अचित्त होता है।

सुपारि [कच्ची]-तोडने वाद दो घडीसें अचित्त होती है।

वदाम-अखरोट-वीज नीकालने के वाद दो घडीसें या दूर देशांतर सें आया हुआ हो, तो अचित्त होनेका संभव है।

पीस्ते, जायफल-ऊपर के छीलटेमें से नीकालने के वाद दो घडीसें पीछे अचित्त होता है।

लाल-काली-द्राक्ष-वीज नीकालने के वाद दो घडीसें अचित्त होती है।

जरदालु-वीज नीकालने वाद दो घडीसे अचित्त होती है

उनकी वदाम-वीज नीकालने वाद दो घडीसें अचित्त होती है।

शुंदर–श्राड परसे ताजा नीकालने बाद दो घडींसे अचित्त ।
सुके अजीर–अचित्त नहि होता है, जीसे सर्वथा त्याग करना।

सक्करका पानी, राखका पानी दो घडी बाद अचित्त होवे। गरम (उकाळेला)पानी न मीले तो वैसा अचित्त करके वापर सकते है।

त्रिफळेके चूर्णका पानी–दो घडी बाद अचित्त होने के बाद भी दो घडी तक रहता है।

अनाजके धोवन के पानी–दो घडी तक अचित्त रहता है।

फल के धोवन के पानी–एक प्रहर तक भी अचित्त रहता है।

सामान्य धोवनके पानी–दो घडी अचित्त रहता है।

तीन उभरासे गरम कीया पानी { गरम ऋतुमें ५ प्रहर। शित ऋतुमें ४ प्रहर। वर्षाऋतुमें ३ प्रहर।

पीछे वापरने के लीए रखना हो, तो कली चूना डालके हीलानेसे शित ऋतुमें वापरने के काममें ८ प्रहर तक अचित्त रहता है।

पालीतानेकी तळेटी पर और वरघोडा वगैरह अवसरोपे रखाहुआ सक्करका पानी पीपमेंसे सब एक ही प्याला डुबा के पानी पीते है। उनमें एक दूसरों का जुठा प्यालेमें मुहकी लाळके सबब संमूर्छिम पञ्चेन्द्रिय मनुष्यों होते हैं। और उनकी

हिंसा होती है। जीसे खास ऐसी योग्य व्यवस्था करना, की जीसे ऐसी हिंसा होने न पावे।

कीतनीक दफा सामुदायिक ऐसे मोके पे ऐसा होता भी है। सामान्य श्रावकों को उपयोग रखने जैसा है। तो फीर सचित्तका त्यागीओं के लीए प्रश्न ही क्या है?

इस तरह सचित्त चीजें कीस तरह अचित्त होवे? उनका थोडा परिचय दिया है, ज्यादा गुरु आदि से समज लेना। सचित्त के त्यागी उपरांत एकासणादि व्रतोमें भी सचित्त लीया न जावे। जीसे उनमें वापरने के लीए अचित्त ही चीज होनी चाहिये। वो अचित किसतरह प्राप्त कीया जाय? वो इस प्रकरण से मालूम होगा।

उपसंहारः

बावीश अभक्ष्योंका श्री जिनेश्वर देवोने निषेध कीया है। जीससे उनका त्याग करना और, और भी अनाचरणीयका त्याग करना। और वनस्पति आदिका अवश्य प्रतिज्ञा करने से विरति का लाभ मीलता है। विरतिका फल वडा भारी है। कहा भी है की "ज्ञानस्य फलं विरतिः" ज्ञान [पढने-जाणपने] का फल विरति है। और जो वैसा न हुआ, तो सिर्फ ज्ञान (अनुभव) से क्या? वो तो जब रहनी में आवे तब सारभूत है। चिदानंदजी महाराजश्रीने भी कहा है की–

शुक रामको नाम वखाने, नवि परमारथ तस जाने
या विध भणी वेद सुणावे, पण अकळकळा नहिं पावे॥

कथनी कथे सब कोई, रहणी अति दुर्लभ होई ॥१॥
षट्त्रिंश प्रकारे रसोई, मुख गणतां तृप्ति न होई ॥
शिशु नाम नहि तस लेवे, रसस्वाद सुख अति लेवे ॥
जब रहणीका घर पावे, कथणी तब गिणती आवे ॥
अब चिदानंद इम जोई, रहणी की सेज रहे सोई ॥

भावार्थ—यह कहना है कि कथनी जब रहणी के रूपमें हो जाय, तब उनका उत्तम रस प्राप्त होवे। अन्यथा, छत्तीस जातका पक्वान्न का नाम मात्र गीनने सें क्षुधा शान्त होती नहिं। वैसे ही ज्ञान संपादन करके उनका यथायोग्य अमलमें लेना चाहिये. जो विरतिवंत क्रिया रुचि जीवों शुक्ल पाक्षिक कहलाते है। मन, वचन, कायका व्यापार नहि चलता हो, तो भी अविरतिसे निगोदिया वगैरह जीवोंकी माफक बहुत कर्मबन्ध होता है। कहा है कीः—

"जो भव्यात्मा भावसे विरति [देश या सर्वसे] अंगीकार करते है, उनकी, विरति पालनेमें असमर्थ देवों बहुत प्रशंसा (गुण ग्राम) करते है। एकेन्द्रिय जीव कवलाहार बीलकुल करते नहि, तो भी उनको उपवासका फल प्राप्त नहि होता. वो अविरतिका सबब मानना। एकेन्द्रिय जीवों मन, वचन और कायासे सावद्य व्यापार करते नहिं, तो भी उनको उत्कृष्ट अनन्त काळ तक वो गतिमें रहना पडता है, और जो भूतपूर्वके भवमें विरतिकी आराधना की हो, तो तिर्यंच जीवों यह भवमें चाबुक, अंकुश, लकडीकी तिक्ष्ण आर इत्यादि

से सेंकडों दुःख सहन करने की आवश्यक्ताएं नहिं रहती है। सुज्ञो! अविरतिसें महा दुःखों, पराधीनतासें तिर्यंच. नारकी वगैरह भवोंमें सहन करना पडता है। जीस लीए विरतिका अंगीकार कर लो, थोडासा कष्टमें बहुत फलप्राप्ति करानेवाली होती है। और वो कष्ट-दुःख (अज्ञानीको) बाहरसें दीखता है। लेकीन भविष्यमें सुखका निमित्त होनेसें (विरति) सुख रूप ही है। जिससे सकाम निर्जरा होती है। और वो नहिं अंगीकार करेंगे तो दूसरे भवमें तिर्यंच और नारकीमें व परमाधामी वगैरह क्रूर मनुष्यों और देवोंसे आती हुइ भयंकर व्याधियां पराधीनतासें सहन करनी पडेगी। उससें ज्यादा अब क्या दुःख है। सारांशमें-प्राणान्त कष्टोंसें भी तीर्थंकर महाराजाने निषेध की हुइ वस्तुओंका भक्षण करना नहीं. और उनमें भी अमुक शेरकी छुट अगार वगैरह न रख के कायरता का त्याग करके बावीश अभक्ष्यका सर्वथा त्याग करने उपरांत दूसरा भी अनाचरणीय-अभक्ष्यका भी त्याग-नियम अवश्य करना।

नियम (प्रतिज्ञा-व्रत) कैसे लेना? और कीस तरह पालना? व्रतके अतिक्रम, व्यतिक्रम, अतिचार और अनाचार. यह चार भेदसें दोष लगता है। जैसेकी चौविहार (चार आहारका त्याग) कीया हो। बहुत प्यास लगे जब पानी पीनेकी इच्छा मात्र करे, वो अतिक्रम, जिस जगहपे पानी हो वो जगह पानी पीनेके लिये जावे, वो "व्यतिक्रम" दोष

लगता है। पानी पीनेके लीए पानीके बरतनमेंसें प्याला भरके मुहपे लगावे, लेकीन पीवे नहिं तबतक अतिचार लगता है। और जब वो बिन धास्तीसें पानी पीवे. तब उन्हे अनाचार [महा दोष पाप] कीया, कहलावे। तब तो उन्हे दूसरे भाव का भी डर न रहा, ऐसा समजा जावे।

[कायदेमें अपकृत्य और कसूर [गुनाह] मे जो भेद है, वो भेद धार्मिक जीवनमें अतिचार और अनाचार दोनोके बीचमें है। अपकृत्यका दीवानी दावा होता है, और कसूरका फोजदारी दावा होता है। उस मुताबीक अतिचार और अनाचार दोनोही दोषके निमित्त होते भी अतिचारमे सुधारके अवकाशकी संभावना है, तब अनाचारमे असंभावना समजनेमें आती है। जीसें वो अधर्म कृत्य माना जाता है। और अतिचार तक दोषवाला होते हुवे भी वो धर्मकृत्य माना जाता है] जब परमा धामीओं गरम जलते सीसेका रस जबर जस्तीसें उनको पीलाते है, तब वो अत्यंत दुःख अनुभवते है, और उनमेंसें छुटनेकी कोशीष करते है, लेकीन कीया हुआ कर्म अनुभवने बीगर नो बीचारा कहा से छुटे ? ऐसा समजकर अतिक्रम दोष भी न लगे, वैसे भवभीरु होकर व्रतका पालन करना चाहिये। धन्य है व्रत पालनेमें दृढसिंह श्रेष्ठिको, की-जिनोंने नियमका स्वीकार कीया, लेकीन अति विकट स्थिति मेंभी व्रत-खंडन नहिं करके अनशन करके केवलज्ञान प्राप्त कर मोक्षको प्राप्त किया. शरीर (पुद्‌गल) की-जिसका

स्वभाव. सडन, पडन और विध्वंस पानेका है. उनके पर मोह नहि रखते ही उभय लोगमें सुखरूप जो व्रत, उनको प्राणसें ही अधिक प्रिय गीना । अग्निमें प्रवेश करना अच्छा लेकीन लीया हुआ व्रतका कभी खंडन नहि करना । (Sacrifice Money, Even give rather than Principle) वास्ते, सत्य प्रतिज्ञावंत होना । सुज्ञेषु किं बहुना ?



९ वाँ अध्याय.

श्रावकके घरमें नित्य व्यवहारमें लाने लायक कतिपय आवश्यक नियम ।

१. घरमें दस स्थान पर छत (चंदरवा) अवश्य बांधना चाहिये ।

१ चूल्हे पर, २ पाणियारे पर, ३ रसोई घर में, ४ घंटी पर, ५ ऊँखल पर, ६ मट्ठा (छाछ) करने के स्थान पर, ७ शय्या पर, ८ स्नान घर में, ९ सामायिकादि धर्मक्रिया करनेके स्थान पर (पौषध शालामें), १० जिनगृह में ।

इस प्रकार दस स्थान पर छत बाँधना नितान्त आवश्यक है। जिनमें छः भोजन सम्बन्धी है। भोजन के स्थानमें छत बांधनेका आशय यह है कि हमें भोजन विषयक बहुत ध्यान रखना चाहीये । इससे शारीरिक तंदुरस्ती को बहुत लाभ पहुँचता है और अहिंसाका पालन होता है।

२ सात छनने रखने लायक ।

१ पानी छाननेका, २ घी छाननेका, ३ तेल छाननेका, ४ दूध छाननेका, ५ छाछ छाननेका, ६ अचित्त उष्ण जल छाननेका, आटादिक छाननेकी छाननीयाँ ।

इस तरह ७ छानने जरूर रखने चाहिये, जिससे चींटी, कंसारी, मच्छर, मक्खी आदि त्रस जीव छाननेसें अलग हो जाते है । पानी और आटा छाननसे त्रस जीवकी रक्षा होती है । पानी छाननेका कपडा घट्ट और मजबूत होना चाहिये । इस रीतिसे जीवरक्षा करनेवाले भव्य प्राणियों को उसका प्रत्यक्ष लाभ मिलता है । जल तो प्रत्येक प्रहरमे छानना चाहिए । इस विषयमे महाराजा कुमारपालका सुचरित्र वारवार मनन करने योग्य और यथाशक्ति अमलमें लाने योग्य है । ऐसे आत्मार्थी परमार्थी पुरुषोंकी बलिहारी है । वे ही धन्यवाद के पात्र है वे ही पुण्यवत और महंत है, वे ही महान् सुखी हैं, तथा वे ही महान भाग्यशाली है कि जिनके हृदय–पट पर दया–यतना का चित्र चित्रित है । जैन शासनकी सदा जय हो ।

३ कैसे वर्तन काममें लाने चाहिये ?

"अब कैसे पात्रमें तथा किस प्रकार भोजन करना ठीक है ? उसे संक्षेपमे कहते है" जो दोष रात्रि भोजनमें है वैसेही दोष अंधकार युक्त स्थानमें खानेपीने और सकडे मुखवाले

पात्र (जिनमें दृष्टि नहीं पहूँच सक्ती ऐसे सुरई, लोटे आदि) काममें लाने से लगते है।

समयानुसार कॉसेके अथवा कलईदार तांवे-पीत्तलके वर्तन सामान्य रूपसे अच्छे माने जाते हैं।

फिर हाल इस दुनियाका वेग विचित्र गतिसे चल रहा है। न जाने किस प्रकारकी हवा वह रही है, समझमें नहीं आता। यहाँ तक कि हम अपने पूर्वजों की पद्धति और मार्ग को तिरस्कार भरी दृष्टिसें देखते हुए उसे मिटाकर अव टीन-लोहे के पात्रोंका आदर करते हैं। ऐसा पात्र जैन या हिंदु वंधुओंको उपयोग करना मुनासिव नहीं। सामायिक पत्रोंसे पत्ता चलता है कि ऐसे पात्रोंमें ग्लेज के वास्ते अंडों-का रस काममें लिया जाता है। और जीवित वैलोंको मारकर उनके आंतड़ियो के तरल भागका भी उपयोग कहते हैं। वस्तुतः यह वात त्रासजनक है। वास्ते ऐसे वर्तनोंका शीघ्र त्याग कर देना चाहिये। ऐसी सस्ती व चडकीली भड़कीली चीजें परिणासरूप वहुत मँहगी और निरर्थक हो जाती हैं। इस प्रकारकी वस्तुओंका इस्तेमाल करने से हम थोडे समयमें ही कैसी निर्धन अवस्थाको पहूँचे हैं? कि जिस वस्तुकों खरीद कर काममें लेने के वाद उसकी कुछ भी कींमत उपज नहीं सक्ती! परन्तु कांसे अथवा तांवा-पीत्तल के वर्तनोंकी फूटे टूंटे वाद कभी कभी मूल कींमतसें आधी अथवा उससे भी कहीं ज्यादा रकम अवश्य उपज जाती है।

अहो ! हमारे पूर्वज कैसे दीर्घदृष्टि व अगम बुद्धिवाले तथा व्यवहार व धर्मकार्यमें कितने कुशल थे ? और अब हम कैसे हुए ? कि उनके वचनोंका अनादर करके स्वच्छन्द होकर और अपने आपको श्याने समझकर हमारे पूर्वजो द्वारा उपार्जित उत्तम शास्त्रको भी खो बैठे है !

अब तो हम "विनाशकाले विपरीत बुद्धिः" के अनुसार अपने समस्त सुवर्ण समान पदार्थको लोहा समझ उसे बेचकर और उसके स्थान पर जो लोहा है उसे सुवर्ण समझते हुए हर्ष पूर्वक (उसमें कितनेक मिथ्या लाभोंकी कल्पना करके) अपनाते है। देखा जाय तो कैसी दयाजनक स्थितिमें हम हमें पाते है ? यह अपने ही कर्मका दोष है। वस्तुतः अभी भी यदि हम नहीं समाले गे, तो इससे भी बद्‌ तर खराब दशाको हम पहूँच जायँगे। वास्ते हे सुज्ञ बंधुओ ? अभी भी समालो ! और ऐसे अपवित्र भाजनोंका त्याग करके कांसे अथवा तांबे-पीतलके ही पात्रोंमें आहार करो। रसोंई तथा भोजन करनेके पीतल्के सब वर्तन कल्ईदार होने चाहिए। वैसेही पत्तल-दोनेके आश्रित भी त्रस जीव रहते है उससे उन्हे तथा केलेके पत्तों पर भी भोजन करना मुनासिब नहीं। अन्य-दर्शनिओं के वहा इसका खास ध्यान रखना चाहिए।

दिनमें भी अंधरेमें भोजन करना ठीक नहीं. वास्ते दिनमें जहा ठीक उजेला हो वहीं बडे और स्वच्छ पात्रमें, भक्ष्या-

विचार करके स्थिरचित्तसें, मौन रखकर
हेये।

जू० से बात करनेसे एक तो ज्ञानावरणीय कर्मका बंधन होता है। दूसरा, बातोंमें ध्यान जानेसे भोजनमें मक्खी आदि त्रस जीवके गिरनेसे उस जीवकी हिंसा होती है। मक्खी खानेमें आ जाय तो वमन हो जाता है। वैसेही सरस-निरस भोजनकी प्रशंसा व निन्दा भी नहीं करनी चाहिये। इसलिये मौनपूर्वक भोजन करना उचित है। कदाचित् बोलनेकी जरूरत पड़े तो जलसे मुख-शुद्धि करके बोलना चाहिये।

भोजनमें कोई भी सजीव-निर्जीव कलेवर न आ जाय वैसे स्थिरचित्तसे निगाह रखकर, बराबर देख-भाल करके उपयोग पूर्वक हित-मित (पथ्य और परिमित) व समय पर ही भोजन करना उचित है।

भोजन करने समयकी धोती पृथक् ही होनी चाहिये।

---

१ साथमें बैठकर भोजन करनेकी प्रवृत्ति अनुचित है। क्योंकि किसीके दाद, खुजली, फोडे, फुन्सी आदि संक्रामिक रोग होते हैं, दूसरेके साथमें जीमनेसे उन रोगोका पीप लगना संभव है। फिर भी एक दूसरेका जूठा खानापिना भी बुरा ही है साथमें जीमनेसे जूठन भी बहुत पड़ती है और जूठनसे जीवोत्पत्ति होती है आदि अनेक बुराइयाँ है।

फिर हाथ-पैर की शुद्धि होना भी, जरूरी है। उनमें भी-जो नित्यप्रति प्रभुपूजा करते है उन्हे चाहिये-की वे राख आदि पदार्थसे उपयुक्त हस्तशुद्धि करे, क्योकि ऐसा न करनेसें, केसर या घृत आदिका अंश अपने हाथमें होनेसे उनका पेटमें जाना संभव है। और यदि ऐसा हुआ तो देवद्रव्य-भक्षणका महादोष भी लगना संभव है। अतएव शुद्धि बराबर करनी चाहिए। (प्रसंग वश यहा यह लिखदेना भी उचित है कि हस्तशुद्धि करते समय कभी सचित्त मिट्टि भी काममे ली जाती है, उससे जीवहिंसा होती है, वास्ते राख आदि निर्जीव पदार्थों से हस्तशुद्धि करना ठीक है।

खुले छत पर अथवा मैदानमें जहाँकि उपर छत न हो वहाँ भी भोजन करना उचित नही है। घी, गुड, दूध, दहीं, छाछ, दाल, शाक और पानी आदिके पात्र कभी क्षणभरके वास्ते भी खुले नहीं छोडदेने चाहिये।

श्रावकने अपनेको चाहिए इसीसें भी कम भोजन लेना अर्थात् जरूर जीतनाहि लेना और जूठा बील्कुल नहि छोडना। अपना बरतन-थाली वगैरह धोके पी लेना जीससे एक आयं-बीलका लाभ मीलता है। इसी तरह हमेंश प्रथम शुद्ध मान

२ देवद्रव्य-ज्ञानद्रव्यादिके भक्षकका तथा देव-गुरु-धर्मके निंदक का अन्न-पानी कभी नहीं लेना चाहिये।

आहार निर्ग्रन्थ मुनिराजों को व्होराने वाद उपयोग पूर्वक भोजन करने सें वो अमृत तुल्य फल देते है। अलावा उनके विष तुल्य फले-अवश्य चखना पडता है। वैसा जानकर भव्य वन्धुओं! अष्ट-प्रवचन माता को हृदयमें रखके यह

१ शुद्धमान आहार में प्रथम न्यायोपार्जित द्रव्यका आहार करना चाहिए। अन्यायसें प्राप्त किया हुआ धनका आहार तुच्छ है जीनका न्यायपूर्वक व्यापारादिमें से प्राप्त कीया हुआ धन हो उनका ही उत्तम और शुद्ध भोजन है। वैसा और श्रावकसें लगता हुआ दोष न लगाकर निर्दोष आहार व्होराना वो शुद्धमान आहार है। वैसा ही न्यायोपार्जित अल्प धन में "पुण्या" श्रावक एक दिन खुदही उपवास करते थे, और दूसरे दिन उक्त महानुभावकी पत्नी उपवास करतीथी. ऐसा करके दररोज एक साधर्मिक भईयोंकी भक्ति करते थे। हमलोग भी वैसी तरह न्यायसें धन कमाना उचित है। नहि तो जूठ, कपट, कर अन्याय मार्गसें प्राप्त कीया हुआ धन यहां ही छोंड कर हाय! द्रव्य! हाय द्रव्य! करके मर कर उनका फल भोगना पडेगा. अन्याय, अनीति जहां तहां चल रही है। कोई विरले आत्मा न्याय मार्गपर चलनेवाले होंगे। उनका अनुकरण होवे तो उत्तम है। देशावरो के धंधादारी हरीफो की सामने हरीफाई करनेमें वहुत मुश्केलीआं खडी हुई है। अपने धंधेकी वीच पडने का भयंकर अन्याय वो लोग कर रहे है। वो स्थितिमें अपने देशी व्यापारीयों का अनीति आदि की कीतना अन्याय गीना जावे? वो विचारना जरूरी है।

मनुष्य जन्म सफल करो । की जिससें अष्ट कर्मका नाश से अल्प भवों मे शिव–संपद–सुख प्राप्त करे ।

भोजन कीया हुआ जूठा और रसोइ के वरतन कलाकों के कलाक तक पडा रहनेसें उनमें त्रस जीवों पड कर अपना प्रिय प्राण गुमाते है । और जूठे वरतनों में दो घडी अंदाजन में सम्मुर्छिम जीवोंकी उत्पत्ति होती है । जीससे शिघ्रही मांज के मुखा कर रख देना । पानी छानना, चूला साफ करना, तरकारी शाक आदि साफ करना, लकडी कंडे, वगेरे देखनेका काम नौकर या रसोया के विश्वास पर छोडनेसें अनेक जीवोंकी नित्य हानि हो जाती है । जीसें गृहिणी (स्त्री) ने खुद ही स्वय करने जैसा हो वो बने वहातक प्रमाद छोडकर स्वय करना और नोकर के पास कराना हो तो भी बने वहातक पासमे खडा रह कर समाल पूर्वक कराना–और नोकरोंको भी उपदेश देकर खूब कालजी पूर्वक कराना उचित है । सुज्ञेषु किं बहुना ?

अध्याय १० वॉ

" सुज्ञ श्राविका बहिनों को अवश्य ध्यानमें रखने योग्य सूचनाएँ "

जैसाकी राज्यमें मत्री प्रधान होता है, वैसाही घरमें स्त्रीका प्रधान स्थान है । जीससे स्त्री वर्ग "अभक्ष्य अनंतकाय" वर्णन

मननपूर्वक खास वांचके या कीसीसे समजकर उस मुआफीक चलनेकी आवश्यकता है।

सुज्ञ श्राविका बहिनों! आपही घररूपी राज्यके सुधारने चाहो तो, तब ही ठीक रहेवे, नहिं तो पुरुषसे होना मुश्किल है। क्युंकी पुरुष दिनभर उनके व्यापार धंधेसे लपटे हुए ही रहते है। जीसे नीचे लीखी हुइ सूचनाएं ध्यानमें रखकर उसी तरह अमलमें लाना ध्यान में रखोंगे तो आप स्व और परका (दूसरोंका) कल्याण रूप होंगे।

१ सूर्यके किरण जबतक न दीखाइ देवे, तबतक चूलेका आरंभ करना नहि

२ सब जगह परसें यतना पूर्वक कचरा साफ करने बाद सब कामका आरंभ करना.

३ सुबहमें सबसे पहिले पुंजनिसे दररोज प्रत्येक बरतन चूले वगैरह ख्यालसे पुंजना और वो जीवोको सूखी जगहपर रखना की जहां मनुष्य या जानवर आदिका आना जाना न हो

४ लकडी, [1]कंडे, कोयला, सगडी आदि रसोईके साधन पुंजने बाद उपयोग में लेना. उनमें भी चातुर्मासकी ऋतुमें दो तीन वख्त खूब संभालपूर्वक पुंजना. कारणकी—चोमासेमें जीवोंकी उत्पत्ति बहुत होती है।

---

१ कंडे तोडके वापरना. चातुर्मासमें कंडे या नारीयलके छीलके जलाना नहि। क्युंकी उसमें त्रस जीवो उत्पन्न होते है। और उसमें भरा रहते है

५ लकडेमें भी कीसी ही जातके अंदर बडे जीव होते है, जो लकडेमेंसे आटे जैसा भूसा नीकालते है। तो उस परसें लकडेमे वेसे जीवोंकी उत्पत्ति है ऐसी खात्री होती है, फीर भी वो झाटकनेसें नहि नीकल सकते है। जीसे वो जीव अग्निमें जलके भस्म होते है। तो जैसे लकडे एक बाज़ रख देना और वो बातका बहुत उपयोग रखना।

६ जलाउ चीजोमे जीवजतु कम भरा रहे वैसा खरीदना और वैसी तरह रखना व यतनापूर्वक वापरना।

७ रसोडे के वरतन और मसाला, घी, तेल, दूध, दहिं, फुल्के, बाटी और पानी, जूठका वरतनादिका उपयोग रखके बीलकुल खूला रखना नहि।

८ जूठन दोघडी पहिले जनावरों को पीला देना या धूप पडता हो वैसी जगहमे छाट डालना। ऐसा नहि करनेसें उसमें असख्य समुर्च्छिम जीव पैदा हो जाते है।

९ नमक, मीरची, वगैरह मसाला रखनेका साधन स्वच्छ रखना और ढाकना।

१० प्रस्तुत चीजे एकडे के खाने बनवा के उसमें कीत नेक लोग रखते है। उसें भी मजबूत बूच वाली बाटली या सीसेमें रखना युक्त है। कारण यह है कि-चोमासेंमें हवा लगनेसें उसमें तद्वर्णी लाल सूक्ष्म कीडे पडते है। और कुंथु, लील, फुग होती है। और एकडे के खानेंमें भी त्रस जीव

चड जाते है। वाद रसोइ करते वख्त जल्दी के कारणसे विना देख भाल—वापरनेमें आवे, जीससे ऐसे प्राणीयों का विनाश हो जाता है।

११ मसाला दाल शाकमें, सक्कर चीनी प्रमुख दूधमें, घी तैलादि दाल या शाक या रोटीमें वापरने पहिले खूब सूक्ष्म दृष्टिसे तपास करना, जीसमें सजीव या निर्जीवका कलेवर तो नहि है न ? नहिं तो थोडे प्रमादसे वडा अनर्थ होगा।

१२ सांजको सूर्यास्त पहिले चूला ठंडा कर देना।

१३ वो भी सचित्त [कच्चा] पानी छांटके ठंडा करना नहि। कारणकी—उसें अग्नि और पानी के जीवोंको अति तीव्र दुःख होकर उसका दोनोका नाश होता है।

१४ वासी वीलकुल नहि रखना। छोटे वच्चें के लिये सुवहमें ताजा वना देना। जीससें शारीरिक और धार्मिक दो वडे लाभ है।

१५ छोटे वच्चों को शुरूमें ही अभक्ष्य अनन्तकाय के लीए उपदेश करते रहना, जीससें वो वडी उम्मर होने पर भी वैसी चीजोंसें दूर रहे। मुलायम डाली जैसी वालने की ही, वैसी वल सकती है। किन्तु वो जड होने वाद वलती नहि जीससें शिशुवय के वच्चोंका स्वार्थ सुधारने या वीगाडने का उनकी मातापर विशेष आधार रहता है।

१६ जो आप श्रीमंत होंगे तो वो भी पूर्व पुण्योदयसें ही, जीसे नोकर को हुकम करके काम करानेमें भी खास मर्यादा रखना।

१७ जो- कार्य स्वय यतनापूर्वक होता वो नोकर कभी कर सक्ता नहि ।

१८ नोकर को तरकारी सुधारने को दी हो ते शाक के साथ दूसरे जीवोंका भी नाश कर डालता है। पानी छाने वो भी ठीकाने बीगरका और उनका सखारा नीचे डाल देवे, या खारे पानीका भी मीठे पानीमें डाल आवे, पानीके जूठे बरतन मटकेमें डाले ।

१९ आप नोकर पर विश्वास छोड़के आपके जीमे हुए जूठे बरतन वैसे ही छोडकर हींडोले खाटपे या सुखशय्यामें आराम करो, पीछे दो दो कलाक तक वो बरतन पडा रहे, और उसमें टपोटप माखी वगैरह जीव पड तडफडाकर अपना प्राण छोड देवे ।

२० वास्तविक श्रावकोंका यही धर्म है की थाली आदि धोके पी जाना चाहीए। कारण की उसमें दो घड़ीमें असंख्य जीव उत्पन्न होते है ।

२१ प्रमादसे पनियारे के पास, मटके के आसपास लील भी हो जाती है। ऐसे अनेक दोष अपने प्रमादसे होता है। आपसे ऐसा काम होना अशक्य हो तो पासमें खडे रहकर नोकर के पास यतना से कराना वो भी योग्य है। नहि तो पुण्य-रुपी मुडी व्याज सहित खा जाओंगे । तब दूसरे भवमें कहा से सुख मीलेगा ? अजरामर सुख लेनेका अवसर आया है, तो भी क्यु विषय-कषाय और विकथामें लीन हो जाते हो ?

प्रमाद छोड़ों और मनुष्य जन्म सार्थक करो ! दुष्ट प्रमाद हि दुर्गतिमें ले जानेमें वडा तस्कर समान है, जीससें चेतो !

२२ चार महाविगयका अवश्य त्याग होता ही है।

२३ आइस्क्रीम, वरफ, वगैरह परसें ममत छोड़ दो।

२४ आपके वच्चोकों अफीम और वालागोली के व्यसनोंसें छुड़ाओ।

२५ कच्ची मीट्टी, कच्चा नमक का त्याग करो।

२६ प्रमाद छोड़के अचित्त नमक तैयार करके वापरो।

२७ रात्रि भोजनका आप त्याग करो, जीससें आपके पुत्रादि आपके अनुकरण करें।

२८ तील, खसखसका त्याग करो।

२९ वोलका अचार आदिके स्वाद छोडो और छुडाओ (वास्तविक, स्त्रीओं ही ऐसी अनेक चीजें विचित्र प्रकारकी वनाकर पुरुषोंको रसनेन्द्रियके आधिन करती है।)

३० विदलका खास उगयोग रखो, क्यों कि उसमें आपका ही उपयोग काम आ सकता है। यह आपके हाथकी वात है। कभी पुरुष विरतिवंत न होवे, तो भी आप उनको ऐसे दोषमें से अटका सकते हो।

३१ वेंगन आदि के शाक करनेका त्याग करो।

३२ वोर खानेका त्याग करो।

३३ विकथाका भी त्याग करो "क्षण लाखेणी जाय" जरा विचारो। धर्मकार्यमें प्रवृत्त हो जाव।

३४ चलित रस,वासी वगैरह नहि वापरनेका उपयोग रखो।

३५ आटा, मुरब्बा, आचार, सेव, वडी, पापड, प्रमुख के लीए आगे लीखी हुइ बाबत पर ध्यान दो, वैसा स्वयं चलो और जीनको उपयोग न हो उनको नम्रता से सीखाओ।

३६ अनतकायका त्याग करो।

३७ यह मनुष्य जन्म सफल करने के लीए हरी हलदी, आदु, लसन आदि चाहीए जीतना रोग हो तो भी उनको काममें मत लो। अपना अनादिका कर्मरूपी रोग नाश होगा तभी सच्चा सुख-शाश्वत् सुख प्राप्त हो सकेगा।

३८ फाल्गुन चोमासा आते पहिले तेल आठ माह तक अछे बरतनमें भरके रखो।

३९ अशाड चातुर्मासमें, खाड, काजु, बादाम, पिस्ता, द्राक्ष वगैरहका उपयोग नथ करो।

४० कुकनी अशाड चातुर्मास पहिले वापर डालो, और बादसे कार्तिक चातुर्मासतक उनका त्याग करो।

४१ हरायास, वीली, नीला केरडे और नागरवेलके पानको काममें लेना छोट दो।

४२ परदेशी मेंदा, परछंदीका आटा खास बाजारमेंसे मगवाना बध करो, कुछ कष्ट पडेगा, लेकीन उसे अनेक जीवोंका आशीर्वाद प्राप्त होगा।

४३ पानी घीके तरह वापरो।

४४ मजबुत कपड़े से दिनमें दो तीन बार छनने का कष्ट उठाने से भवान्तरमें दुःख भोगना न पडें, अर्थात् सुख प्राप्त होता है। और क्रमानुक्रम शिवसंपदा मिलेगी अर्थात् सुखी बनोंगे। और अनुक्रमशः शिवसंपदा को भी प्राप्त करोंगे।

४५ विशेषतो तुम्हारे घर के प्रधानपणे में तुमही जाणकार हो, इसलिये प्रत्येक कार्य उपयोग, विवेक, तथा जयणा पूर्वक करो।

४६ तिथियों के दिन दलने, खांडने, पीसने, धोने, माथा गुंथने, नहाने, गोबर लेने जाना, गार करना इत्यादि आरंभ समारंभ करना, तथा अनुमोदन करना नहीं।

४७ तथा ३ चौमासे की, २ आयंबिल की ओलीको, तथा १ पर्युषण पर्वकी इस प्रकार ६ अट्ठाइयो में उपर लिखे कोइ भी आरंभ समारंभ त्रियोग (मन, वचन, काया) से करना नहीं।

४८ **मिथ्यात्वि लौकिक पर्वः**—जैसे कि दिवासा रक्षा–बंधन, श्राद्ध, नोरतां (नवरात्रि–व्रत), होली संक्रांति, गणेशचतुर्थी, नाग–पंचमी, रांधण–षष्ठी, शील–सप्तमी, (बाशी न खाना), दुर्गाष्टमी (गोकलअष्टमी) रामनवमी (नोली नोमी), अहवा–दशमी (विजया–दशमी); भीमअग्यारशी (जेठ शु. ११) वत्स द्वादशी, धनतेरशी, अंनत–चौदश, अमावास्या, सोमवती, बुद्धाष्टमी, दशहरा, तावूत, वकरीईद, [रिंटियाबारस, राष्ट्रीय–सप्ताह महावीर आदि जयंतीओ,

जीवदया दिन, नाताल:) इत्यादि पर्व मिथ्यात्व का हेतु तथा अनर्थकारी है, इसलिये इन सबका त्याग करना।

४९ अपने को दूध-पाक, वासोदी, लड्डु-इत्यादि करके खानेके क्या दूसरा दिन नहीं है? कि-उन्ही मिथ्यात्वी पर्वो के दिन खाना या उत्तेजन देना? ऐसे मिथ्या आचरणोंका त्याग कर, अपने सत्य आचरणों को जानने या पालन करने में प्रयत्नशील बनिये। धन्य है उन सुलसा श्राविकाको, कि जिनका सम्यक्त्व अत्यत दृढ था। इससे वह श्राविका आगामी चौवीसी मे, इस भरतक्षेत्रमे पद्रहवें श्री निर्मम नामक तीर्थंकर होवेगी।

५० प्रातःकाल जल्दी उठने की आदत डालो।

५१ सुबह जल्दी ऊठकर प्रतिक्रमणादिक करो। देव-दर्शन, गुरु-वदन, तथा स्नान-पूजा करो और पश्चात् अपने गृह-कार्य में लगो।

५२ घर के मनुष्य-बालक बालिका तथा नौकर चाकर आदिको भी जल्दी उठनेकी टेव-आदत पडावो, और धर्म-ध्यान में, अपने नित्य नियम में, लागू रहे, ऐसी व्यवस्था करो।

५३ सुबह जल्दी ऊठकर प्रत्येक काम शांति-पूर्वक बिना किसी खड़बड़ाहट के करना चाहिये। जिससे दूसरे अड़ोसी पड़ोसी अपने द्वारा किसी पाप कार्य में प्रवृत्ति न करे।

५४ आवाज करने से छिपकिली वगैरह अधर्मी जीव, तथा मच्छीमार इत्यादिक अधर्मी मनुष्य जाग आते हैं। व हिंसा इत्यादिक पाप-प्रवृत्ति में लग जाते हैं।

५५ अपने घरमें जगह जगह जहां जहां जरूरत हो वहाँ वहाँ जीव-जंतू की जयणा के लिये छूट से पूजणीयां रखो।

५६ रसोई इत्यादिक भोजन-कार्य-अपने स्व-हातोंसे ही उतावल या वे परवाई विना भली भाँति पकाना और स्वादिष्ट वनाना।

५७ मुनि महाराजाओं को वहोराने के लिये, अपने घर के मनुष्य द्वारा बुलाने के लिये भेजने का रिवाज अपने घर से हंमेश कायम रखो।

५८ अपने घर के वालक-वालिकाए और पुरुष पूजा सेवा में प्रमाद न करे, इस वातको उन्हे भोजन करने के पहिले सें ही सावचेती दिला दो।

५९ अपने घरकी वहू-और वेटियाँ भी, दर्शन, गुरु-वंदन तथा प्रत्याख्यान (व्रत पच्चक्खाण) इत्यादिक में प्रमाद न करे, इस वातकी भी पूरी खवरदारी रखना।

६० तिथिओं के दिन हरा-शाक इत्यादि के वदले अन्य सूखे शाक इत्यादि की योग्य व्यवस्थासें संतोष-दायक प्रवन्ध रखते रहना।

६१ जीमने वाले प्रत्येक पुरुष एक ही साथ एक ही पंक्ति मे जीमने बैठे या प्रत्येक मनुष्यको हरएक प्रकार की व्यवस्था मिले, इस बातकी पूरी कालजी रखो।

६२ रसोई तथा जीमनेका कार्यक्रम हमेशा के नियमानुसार नियमित समय पर ही चालु रखो।

६३ भोजन मे अभक्ष्य, अनतकायादिक तथा स्वास्थ्य को हानिकर हो ऐसी वस्तुए मत बनाओ।

६४ घर के सब मनुष्य तन्दुरस्त रहे इस बातकी पूर्ण सावधानी रखो।

६५ घर मे प्रकाश, स्वच्छता, नियमितता, व्यवस्था, रखना। तथा जो चीज जिस जगह पर रहती हो उसे उसी जगह पर रखना। इत्यादिक योग्य गोठवण की कालजी रखना।

६६ घरमे फजूल खर्च न हो इसलिये योग्य करकसर करनेकी भी पूरती कालजी रखो।

६७. जिस वख्त जिस चीज की जरूरत पडे, उस वख्त वह चीज घर मे से ही आसानी से मिल जाय, इस प्रकार जमाओ और उस का बराबर ध्यान रखो।

६८. अनाज इत्यादिक खाद्य पदार्थो की खरीदी, सावचेती, सभाल, और उसको वापरने में यतना, योग्य करकरस, ठीक चिजकी पसदगी, योग्य समय पर खरीदी, जरूरत के

अनुसार उस को वापरना। इत्यादि बातों की पूरी काळजी रखना।

६९. रात्रि के समय में प्रत्येक स्थान पर योग्य उजाला पडे, उस प्रकार दीवे की व्यवस्था रखनी, विना जरूरत के और ज्यादा टाइम तक दीवे रखना नहीं।

७०. शामको, जल्दी भोजन इत्यादिक से निपटकर, प्रतिक्रमण इत्यादिक के लिये तयार हो कर उस में भाग लो। (गुजरात में यह रिवाज खूब व्यापक है). स्त्रीयों, पुरुषो वगैरह सबको प्रायः ६ बजे के लगभग फुरसद मिल जाती है, इसलिये वे धार्मिक क्रिया कर रात्रि में बडी शान्ति का अनुभव करते है।

[इधर अपने मालव इत्यादि देशमें इस बात की बहुत खामी है।]

७१. घर में शान्ति का संचार हो। तथा एक-दूसरे में परस्पर प्रेम की वृद्धी हो इस प्रकार की आदतें डालो।

७२ छोटे दूध पीते बच्चों को उन्हाले में दो पहर को जल-पान कराने में मत भूलो।

७३ जीवों को जीवांत खाना (पांजरा पोल) इत्यादिक में भिजवाने में प्रमाद मत करो।

७४ बर्तन थोड़ी राख-मिट्टी और पानी से बराबर साफ करने की आदत रखो।

७५ बने वहाँतक किसी भी कार्य को स्वच्छ, व्यवस्थित और योग्य समय में ही सम्पूर्ण कर डालने की आदत डालो।

७६ भोजन करते वक्त बीदल का खास उपयोग रखो।

७७ खाल, मोरी, चाँदनी, परिंडे इत्यादिक पानी ढोलने की जगहों का बने वहा तक उपयोग ही कम और उन को स्वच्छ रखना।

७८ रात्रि में नियमित समय पर सोने की आदत डालो।

७९ दोपहर कोतो सामायिक करने की आदत चालू रखो।

८० धार्मिक पर्व और तिथियो की आराधना घर में आग्रहपूर्वक बराबर चालू रखो। तो ही धर्म घरमें टिकेगा, नहिं तो घरमें अधर्म अपना साम्राज्य चलावेगा।

८१ पतिव्रतापनमेंहि स्त्री जाति की समस्त शिक्षा का समावेश होता है उसे बराबर प्रचलित रखो और पुत्रियों को उस में दृढ करोगे, तो उनका सम्पूर्ण जीवन सुखी, योग्य स्वतन्त्र और सत्कारी बनेगा ही।

८२ और उस धर्म को सिखानेवाले, तथा उसके गूढ रहस्य को समझाने वाले देव, गुरु, तथा धर्म की भक्ति हमेशा यथाशक्ति करने में चूकना नहीं !

८३ स्त्रियोंको अपना ऋतु–धर्म बराबर पालना चाहिये. गूमडे फूटने के समान उसको मत समझो। शुरुआतका रजस् अत्यन्त मलिन पदार्थ है। ऐसा सूक्ष्म विचार करनेवाले

ज्ञानी पुरुष और पूर्वके महान् वैद्योने कहा है। इसलिये किसी भी प्रकारकी आशातना न हो और पवित्रता रहे उस प्रकार के वर्तन में बेपरवाही मत रखो। अनार्य और अन्य नीच जाति की प्रजा के विचार-तथा अनार्य विचार वाली आर्य प्रजाकी समझ में भी अपनी इन सूक्ष्म बातों का रहस्य अभी तक नहीं आया है। इसलिये वे ऋतुधर्मको पालते नहीं है। और उलटी अपनी मश्करी उडाते है. परंतु इसमें उनकी महान् मूर्खता और वे समझ हैं। इसलिये उन लोगों की एसी असभ्य बातों पर ध्यान नहीं देना।

८४ स्कूल इत्यादिक में पढने में, मोटर, ट्राम, रेल्वे इत्यादिकमें, तांगे में तथा अन्य एसे प्रसंगो में, स्त्री-पुरुषों के परस्पर स्पर्शास्पर्शकी व्यवस्था को उपयोगपूर्वक साचवनी और एक दूसरे से दूर रहने में ही शास्त्रोक्त कथित नव वाड़ो का पालन हो सकता हैं। और पवित्र एवं महान् शियल धर्म की रक्षा के लिये इस बातकी सावधानी रखने की पूरेपूरी आवश्यकता है।

पूर्वापरकी स्पर्श्यास्पर्श्य जातिओंसाथकी स्पर्शास्पर्श की व्यवस्था समालना। वो तोडने से परिणामे अपनी प्रजाका नाश है। वास्ते अन्योंका अंध अनुकरणसें या अज्ञानसें स्पर्शास्पर्श व्यवस्था तोडने की बातका अमलकर उत्तेजन नहि देना.

८६ अपने पूज्य मुनिमहाराजाओं अलावा कीसिकाही उपदेश सुनना नहि चाहिए, आजकल जाहिर भाषण सुननेकी

कुरूढि वढती जा रही है, वो अंतमें उलट मार्गपर ले जा कर धर्म से भ्रष्ट करानेवाली है।

सुन बहिनीएँ! उपर की सूचनाएँ वाच विचार उस तरहसे वर्तन करनेमें तयार रहोंगे, तो अवश्य अपने को कम से कम गेरफायदा (नुकशान) होगा, वल्कि-कुच्छ ने कुच्छ लाभ होगाही।



अध्याय ११ वॉ

समूर्छिम जीवों की दया

मनुष्यो के लीए समूर्छिम पञ्चेन्द्रिय जीवो के उत्पन्न होने के निमित्तभूत बारह द्वार-

२ आँख
२ कान
१ नाक का मूल छिद्र
१ नाभि
१ मूँह
१ मूत्र द्वार
१ मल द्वार

स्त्रीओंको ३ अधिक द्वार है—

१ जन्म द्वार
२ स्तन

इन बारह द्वारों से प्रवाहित होते विविध रसों, धातुओं, पित्तों, श्लेष्मो, वीर्य, ऋतु, मल, पिशाब, गर्भों के मळो और रसों, खून, पीप, मल, थूंक, रिटोडा, खँकाट इत्यादि सरस अथवा निरस (शुष्क) जो जो बाहर आते हैं, उनमें से प्रत्येक में दो घड़ी (४८ अडतालीस मिनिट) के बाद संमूर्छिम (बिना मन वाले) जीव उत्पन्न हो जाते हैं। और वे दो घडी (अडतालीस मिनिट), बाद ही मृत्यु को प्राप्त होते हैं।

इस हिंसा से बचने के लिये श्रावकों को कैसा वर्ताव रखना चाहिये? उस के लिये कितनिक सुचनाएं यहाँ दी जाती हैं।

१ जो छोटे ग्रामों में रहते हैं, अथवा जिनके नजदीक में नदी. तालाब, समुद्र, तट, वन क्षेत्र अथवा पडत भूमि होवे, उन्हें जहाँ तक हो सके वहाँ तक उपरोक्त उचित स्थानो पर ही मल त्याग के लिये जाना आवश्यक हैं।

क्योंकि बनी हुई टट्टीयों में प्रकाश की कमी, हवाका अभाव तथा दुर्गन्धी रजःकणों इत्यादि से शारीरिक तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी हानि अवश्य उठानी पडती हैं।

धार्मिक नियमानुसार खोज करने पर उस में अनेक प्रकार के जीवों की उत्पत्ति तथा नाश होता है। असंख्याता संमूर्छिम पंचेन्द्रिय मानव जीवों की उत्पत्ति तथा नाश होता है। कोई किसी प्रकार के रोगी के मल अथवा पेशाब पर

लघुशङ्का अथवा दीर्घशङ्का करने से उसी प्रकार के कई भयङ्कर रोग हमारे गले लग जाते हैं। तथा कई प्रकार के संक्रामक रोग भी कईयों को हो जाते हैं। इत्यादिक कई प्रकार से स्वास्थ्य सम्बन्धी तथा शारीरिक और धार्मिक हानियां होने के कारण से इन शङ्काओ के निवारणार्थ खुले स्थानों पर ही जाना योग्य है। जहां चींटी इत्यादि के नगरे (चींटीओं के नगर) न हों। हरियाली (नन्ही नन्ही हरी दुर्वा तथा काई फूलन आदि) रहित हो, कीचड से परिपूर्ण न होते हुए घटी भूमि हो, ऐसी भूमि पर जावे, जिस से शारीरिक स्वास्थ्य ठीक रहता है। तथा अनेक जीवों की रक्षा होती है सच्चे अहिंसक होने का दावा कर सकें, और उन जीवों को अभयदान प्रदान करे, अतः इसलिये इन बातों का ध्यान रखना अत्यन्त ही आवश्यक है।[1]

---

१ भारत वर्ष के प्राचीन महान् शहरो के वर्णन में शहरों की बड़ी बड़ी खाड तथा उनके साथ मोहल्लो की जुदी हुइ गटरो तथा उन्से सम्बन्धित मकानो के छुटी छुटी नालो का वर्णन भी प्राप्त होता है। उन्परसे इतना तो अवश्य मानना पड़ता है कि—उस समय भी आज से सकडो वर्ष पूर्व भी हमारे देश में गटरों की व्यवस्था थी—लेकिन उन गटरों का उपयोग मुख्य रीतिसे वर्षा ऋतु का पानी तथा स्नान आदि का जल बाहर निकालने के लिये ही होता होगा।

मल–मूत्र तथा जूठ का पानी इत्यादि का पानी गटरोंसे बाहर निकालने में असम्भवित प्रतीत होता है। क्योंकि भारतीय संस्कृति–भारतीय वैद्यक शास्त्रीय विज्ञान तथा धर्म-शास्त्र–उनसे विरुद्ध है। इसलिये मुख्य रीति से जनता इन शंकाओ के निवारणार्थ तथा जूठे पानी को फेंकने आदि का कार्य खुले में–प्रकाशमान हवा धूप वाली तथा मिट्टीवाली भूमि पर ही विशेषतः करती होगी। पाटण अमदावाद जैसी गुजरात की महान् समृद्धिशाली नगरियों में प्रथम से खास इस भांति की गटरों का न होना ही जैन भावना का फल मालूम होता है। तथा संमूर्छिम पंचेन्द्रिय जीवों के बचाव के लिये जैनों की अहिंसा का ज्वलन्त उदाहरण है–इस प्रकार हजारों वर्षों के पूर्व भी जैन लोग अपनी अहिंसा के पालन में कैसे सचेत थे? वह दृष्टिगोचर हो सकता है। तथा जैन लोग राज्यों के दीवान, नगर शेठ तथा शहरों तथा ग्रामों के मुख्य व्यक्ति होने के कारण उनका प्रभाव इस ही जनता के उपर कितना पडा है? इस समस्या पर विचार करने से भी वही पूर्व की व्यवस्था ही दूरदर्शिता पूर्ण उच्च प्रतीत होती है.

आजकल की म्युनिसिपल कमेटिये कि जो यहां की प्रजामें परदेशी व्यापार, संस्कार तथा सामाजिक जीवनभर-नेका एक साधन मात्र है। लेकिन यह होते हुए भी यहाँ

की जनता को उस का जीवनकी आवश्यकताओं की पूर्त्ति कराने का एक साधन समजाया है। मानव शरीर से उत्पन्न हुए तमाम 'मैल' तथा 'मल, बाहर दिखाई नहीं देते हुवे जमीन के अन्दर ही अन्दर भी गटर द्वारा बरार चले जाते है। लेकिन इसमें अहिंसा की दृष्टि को अश मात्र भी स्थान नहीं है।

पानी का अधिक दुरुपयोग तथा अन्दर ही अन्दर विकृत होते कई पदार्थ तथा उनमे उत्पन्न होते हुए अनेक प्रकार के कीटाणु (jerny) तथा समूर्छिमजीवो का तो कोड हिसाब ही नहीं रहा है। अस्तु, इस गन्दे पानी को खातर रूप में काम में लाकर इसमें शाक–तथा भाँति भाँति के फल उत्पन्न किये जाते है, जिसमें इस गन्दे पानी के तत्व उन शाको तथा फलो मे प्रकट हो कर स्वाद रहित तथा दुर्गन्धपूर्ण फल जनता के स्वास्थ्य के लिये हानि प्रद होते है। तथा इस प्रकार गुप्तरीति से बडा भारी पाप का ढेर इकट्ठा होता है

इस लिये हमारी अहिंसापूर्ण व्यवस्था से हमारे शरीर से उत्पन्न होते मैल तथा मल खूले तो अवश्य दिखाई देते है, लेकिन हवा, धूप, तथा प्रकाशके प्रभाव से वे रोजका रोज नष्ट हो जाते है। जिससे उनका सग्रह न हो कर उनसे उत्पन्न होता हुवा बूरा प्रभाव जनता के स्वास्थ्य के उपर नहीं होता

है। आजकल की गटरों से उत्पन्न होते कंई प्रकार के कीटाणु जनता के स्वास्थ्य के उपर प्रभाव पाडतें हैं, जिससे कंई प्रकार के रोग फेलते हैं। जिनका नाम तक सुनकर आजकल भोली भाली जनता को आश्चर्य होता हैं और वह कहने लगती है कि ये रोग तो पहिले नहीं होते थे. लेकिन इनका मूल मात्र कारण है अर्द्ध पाश्चात्य व्यवस्था। वे कीटाणु हमारे भोजन तथा हवा द्वारा शरीरमें प्रविष्ट होते हैं और हमारे स्वास्थ्य पर अपना प्रभाव डाल कर हमें रोगी बनाते हैं

जिनके निवारणार्थ हमें कंई प्रकार की उंची दवाइयें तथा उग्र मशीनों द्वारा जन्तुनाशक आविष्कारो की सहायता से इन जीवों का नाश किया जाता है। यह दूसरी हिंसा हुई। गटरों द्वारा मैल चाहे जितना दूर ले जाया जावे, लेकिन किसी खासस्थान में 'मल' के संग्रह सें उत्पन्न जन्तु मानव समाज के उपर प्रभाव (effect) डालेविना रहते ही नहीं। प्रजा को आज की गटरों सें स्वास्थ्य-सम्बन्धी हानि अवश्य उठानी पडी है। पहिले के समान शारीरिक शक्ति अब नही रही हैं। और इसका प्रभाव भावी पीढी पर भी पडेगा ही। लेकीन आजकल हमारे उपर और हमारे दूसरे साथियों के उपर पश्चिमीय अनुकरण की ऐसी छाप पडी है कि आज हम इस समस्या पर विचार करते ही नहीं, लेकिन अगर कोइ कहे तो हम उनकी मजाक उडाने को तैयार हो जावेंगें। तब आर्थिक

हानि की तो बात ही क्या है? किसी संस्था विशेष के चुनाव में अधिक मत प्राप्त (to get majority) करदेनेमें एक आदी राज्य प्राप्त कर लिया हो, ऐसी हास्यास्पद मनोवृत्ति अपने भाईयों की हो गई है, कि—इन्हें एक तसु भूमि प्राप्त करने की भी तो शक्ति नहीं है, फिर नया ग्राम अथवा देश प्राप्त करने की तों बात ही क्या? हमारे पूर्वज राज्य निजित करते थें, तब भी अपने बडाई की इतनी डींग तो नहीं मारते थे। मत प्राप्त करने पर अपने पौरूष पर गर्व होता है। वास्तव मे यह हमारी दीन मनोवृत्ति का महान् ज्वलन्त उदाहरण है।

आजकलकी म्युनिसिपालिटियो के अधिकारों की वृद्धि होने से जैन नियमानुसार जीवन व्यतीत करने की तीव्र इच्छावाळे मुनियो तथा धार्मिक पुरुषोकी कठिनाईयोंमे भी वृद्धि ही होती आ रही है, म्युनिसिपालेटिया कत्लखाने चलाती है, और शहरोंमें निजी अथवा गुप्त स्थान पर 'मटन मार्किटो' को प्रोत्साहन देकर चलाती है। जिसमे कई ज्ञान हीन जैनो को भी किसी हाल्त में सहायता देनीही पडती है और उसके पास होकर आना जाना पडता है, इसी प्रकार की चीजोको प्रोत्साहन तथा सहायता देने के लिये हमारे भाईओं विना विचार किये आगे बढ रहे हैं।

२ लघुशंका का निवारण (पेशाव) करना वह भी खुली और सूखी जगह में कि जो शीघ्र ही सूख जाये. पेशाव के उपर पेशाव करने सें प्रत्यक्ष शारीरिक हानि होती है। तथा मोरी और गटर आदि में पेशाव करने से असंख्य संमूर्छिम पंचेन्द्रिय मानव जीवों तथा कीडे इत्यादिक त्रस जीवों की उत्पत्ति और विनाश होता है। इसीलिये ऐसे स्थानों का परित्याग करना आवश्यक है शास्त्रों में मोरी आदि स्थानो में पेशाव करने वाले को चेला (दो उपवास) का प्रायश्चित्त कहा गया है–तब फिर बन्धी हुइ टट्टीयों में (Latrine) टट्टी जाने सें कितना अधिक पाप लगता होगा? इसलिये लघुशंका (Urine) दीर्घशंका आदि जहां पर सूर्य का प्रकाश पडता हो ऐसे स्थान पर करना आवश्यक है।

३ मुंहसें खेंकार डालते, नाक साफ करते, थूंकने, वखत करते, कान का मेल निकालते. मेल (खून–पीप आदि) फेंकते समय–ऐसे सूखे स्थान में फेंकना अथवा करना चाहिये जहां शीघ्र सूख जावे–दिन के समय सूर्य के प्रकाश (धूप) में फेंकना चाहिये। ऐसा स्थान अगर घर से दूर भी होंवे तो

प्रत्येक जैनको अवश्य समझना चाहिये–की भलेही वास्तव में इसके तात्कालीक परिणाम नहीं आते है। लेकिन–समय व्यतीत होनेपर इसके भारी भारी परिणाम अवश्य आनेका है। इसमें रतीमात्र भी संशय नहीं है।

चढ़ा जाना चाहिये। और उपर राख डालना चाहिये। इतनी बातोंका ध्यान-ख्याल धर्मात्मा और विवेकी मनुष्य को रखना अत्यन्त आवश्यक है। तथा इस प्रकार अगर विचारे, तो प्रत्येक मनुष्य अपने को इस व्यर्थ पाप (sin) से बचा सकता है।

इस प्रकार वर्तन नहीं करने से अनजान में असख्य संमूर्छिम जीवो की उत्पत्ति तथा विनाश होता है। तथा मक्खी चीटी इत्यादि प्राणी उसे अपना भोज्य पदार्थ समज कर उसे खाने को चीपक जाते है-और उसका स्पर्श करने ही उनके पेरु उपरोक्त पदार्थ से चिपक जाते है। इस प्रकार अनुपयोग (carelessness sin) अनेक प्राणियों के प्राणों के हरण का कारण भूत बन जाते है।

इत्यादि कई प्रकार के दोष उत्पन्न होते है-इसलिये उपरोक्त पदार्थों को सूखे अथवा धूप वाले स्थान पर फेंक कर शीघ्र राख से ढक देना चाहिए-नहीं तो सिर्फ ४८ मिनिट (दो घडी) के ही क्षुद्र समय मे समूर्छिम पंचेन्द्रिय जीवो की उत्पत्ति हो जाती है-इसलिये इस तरफ विवेकी श्रावको को अपने कोमल हृदय में दया को स्थान देते हुए उपयोग रखना चाहिये।

४ शरीर को (मर्दन) मालिश कर अथवा विना मालिस के भी अगर स्नान करना होवे, तब भी मोरी में स्नान नहीं करना चाहिये-क्योंकि उस जल-के अन्दर शरीर का मेल

तथा तेल इत्यादि सम्भालित रहता है, और वह जल वेसे का वेसा ही रहने से उसमें 'संमूर्छिम जीवों की उत्पत्ति हो जाती है। तथा अधिक समय तक या कई दिनों तक एक ही स्थान में रहते ही दूसरे भी कई प्रकार के 'त्रस' जीवो की उत्पत्ति तथा विनाश होता रहता है। इसलिये जब स्नान करना होवे तब किसी निर्जीव स्थान पर रेती इत्यादि में तथा जो धूप में शीघ्र सूखने मिट्टी होवे, ऐसे स्थान स्नान करने के योग्य है।

श्रावक को कभी नदी, तालाब, कुण्ड इत्यादि में स्नान करना नहीं चाहिये। क्योंकि उससे अनेक जीवों की हिंसा होती है। तथा जल का परिमाण तो रहता ही नहीं. चउदह नियम वाले श्रावक को तो कभी जलाशय में स्नान करना ही नहीं चाहिये। कई वार जहरीले जन्तुओं के कारण प्राणों के हरण भी हो जाता हैं। तथा पानी में डूब जाने से अथवा तैरना नहीं आने से तथा कोइ स्थान में फँस जाने से प्राणो से हाथ धोने तक की नोवत आजाती है। इस प्रकार कई कारण होने से कभी भी एक योग्य श्रद्धालू श्रावक को किसी भी जलाशय में स्नान नहीं करना चाहिये.

स्मशान जाने के समय भी विवेकपूर्ण श्रावक जल छान कर स्नान कर सकता है। श्रावक सचित्त पानी से स्नान इत्यादि नहीं कर सकता है तब तो जलाशय में स्नान करना क्रीडा करना—दोषों का कारण है? इस तरफ

अधिक विवेचन न कर के यही लिखना पर्याप्त होगा कि-जिस लिये मोरी तथा जलाशय में स्नान न कर के पूर्ण रीति से जयणा (जीव जन्तुओं की रक्षा) करते हुए सूखे रेती वाले अथवा धूप वाले स्थान पर करना ही विशेष श्रेयस्कर है।

--इतना खास ध्यान रखना आवश्यक है कि-लघुशंका अथवा दीर्घशंका का निवारण जिनमंदिर से एक सो हाथ करीब दूरी पर करना चाहिये। इसी प्रकार नाक का सेंभडा, खेकार, इत्यादि जिनमंदिर के चोक में भी तथा आसपास नही डालना चाहिये। कई स्थानों पर जिन मंदिर के पास में ही कोई कमरा स्नान करने के लिये होता है-जिसका पानी एकत्रित हो कर गटर में जाता है। ऐसे स्थान पर मुँह साफ करना, खेकार डालना-नाक साफ करना, साबुन इत्यादि से स्नान करना भी अनेक दोषों का कारण है। इसलिये इन बातों को जानते हुए भी जो लोग अनजान बन कर जो इस काम को चलाते है, अथवा प्रोत्साहन देते है, वह भी इस दोष के जवाबदार है-इसीलिये जिन से बने उन्होंने यथाशक्ति उपाय खोज कर इन दोषों को दूर करने का भरचक प्रयास करना योग्य है।

५ शास्त्रों में कहा गया है कि-भोजनमे से जूठा (ऐंठा) रखना नहीं। इनका मतलब-भोजन करते समय हमारी थाली में अथवा पात्रमें जिसमें हम भोजन कर रहे है, उसमे से भोजन करते करते बाकी नहीं छोडना क्योंकि दो घडीमें असंख्य संमूर्छिम जीव उत्पन्न हो जाते है। इसीलिये

भोजन करने की थाली अथवा पात्र उसी समय धोके पी जाना चाहिये। इस ओर बड़ी बड़ी रसोइयों में बडी बेफिक्री की जाती है। इसके फल स्वरूप लोग जूठा बहुत डालते है और इस ओर कोइ भी ध्यान नहीं देता इसलिये नियमवान् श्रावकों को तथा दूसरे भी श्रावक भाईयों को ऐसे समय ध्यानपूर्वक जरूर अपनी आवश्यकता अनुसार खाने की सामग्री लेना, जिससे जूठा डालनेका प्रसंग ही आवे।

६ इसी भांति जल (पानी) के बांटने में भी समजने का है। किसी बेड़पात्र सें पानी काम में लाने के लिये उसमें से पानी निकालने के लिये एक अलग ही पात्र रखना चाहिये। क्योंकि जूठे पात्र पानी के अन्दर डालने सें भी वही दोप लगता है, जो भोजन जूठा छोडने सें लगता है। इसीलिये-इस ओर भी खास ध्यान देना आवश्यक है। काठीयावाड–गुजरात–मालवा तथा दूसरे प्रान्तों में यह दोप बहुत अधिक प्रचलित है इसलिये उपरोक्त स्थानों के सभ्यों को अधिक फिक्र लेना चाहिये। ताकि वे अधिक तीव्र आलोचना के पात्र न हो सके. इस प्रकार उनके सम्हलने की पूरी आवश्यकता है–

आखिर इस पुस्तक में बुद्धि हीनता, उत्सूत्रता–इत्यादि सें जो कोई दोप लगा हो, तो उसकी क्षमा प्रार्थते हैं। इति शुभम्

सर्व–मङ्गल–माङ्गल्यं–सर्व–कल्याण–कारणम्।
प्रधानं सर्व–धर्माणां जैनं जयति शासनम्॥१॥

प्रकरण १२ वां

परमार्हत महाराजाधिराज भूपाल श्री कुमारपाल गूर्जरेश्वर के बारह व्रतों की संक्षिप्त नोंध—

महाराजाधिराज कुमारपाल की राजधानी गुजरात स्थित अणहिल्लपुरपाटण (Anhilwada) थी। उनके आधीन उस समय सब से अधिक प्रदेश था–उस समय समस्त भारत के गुजरातेश्वर ही सब से बडा शासक था–इतना होते भी "परमार्हत महाराजा निद्धान और धर्म के पालनमें कितने कट्टर थे–और जैन धर्म का किस भांति पालन करते थे? वह आज भी जानने से कई जीवों को आज भी उससे लाभ हो सकता है–क्योंकि वे इतने बडे महान् शासक होते हुए भी, कई जवाबदारियाँ होते भी इस प्रकार धर्म का पालन करते थे–तब तो हम उनके सामने कुछ भी नहीं है–तब फिर हम आलस्य को त्याग कर क्यों धर्म का पालन क्यों न करना चाहिये? हमारे पास उनके समान बन्धन और कठीनाइयां कहां? तथा उसी प्रकार उनके समान वैभव तथा सुविधाएं कहां? तब फिर किस कारण आलस्य मे पडना योग्य है??

* यह नोंध और इस अभक्ष्य अनन्तकाय के मूल लेखक—जुनागढनिवासी शा. प्राणलाल मगलजी है [दीक्षा अंगीकार करने के बाद उनका नाम मुनि पुण्यविजयजी था] यह नोंध उन्होंने मुनि अवस्था म ही लिखी थी उसमें कुछ फर्क करके, आवश्यकता पूरती ही हमने यहां दिया है।

इस प्रकारके विचारों से आदर्श आत्माओं के जीवन का अनुकरण करने की इच्छा आजकल के श्रावकों की हो सकती है। और वे आत्मकल्याण के मार्ग में अग्रसर होने की सफल चेष्टा कर सकते हैं। इस भावना से परमार्हत राजर्षि के धार्मिक व्रतों संक्षेप में यहां देने में आते हैं।

१ सम्यक्त्व व्रत

श्री कुमारपाल महाराजा समकित मूल बारह व्रतों को धारण करते थे। सम्यक्त्व यह एक अपूर्व वस्तु है। संसार-सागरमें भ्रमण करती हुई आत्माओं की बडी कठिनाइपूर्वक बहुत समय के पश्चात् प्राप्त हो सकती हैं। इस प्रकार बिना सम्यक्त्व के कार्य्य, बिना नमक के व्यञ्जनों के समान हैं।

१ अठारह दोष से रहित बीतराग श्री जिनेश्वर भगवान् वही सर्वोत्तम देव।

२ पांच महाव्रतधारी संवेग रंगरूपी तरंग में झीलने वाले शुद्ध प्ररूपणा करने वाले वही सर्वोत्तम गुरु है।

३ तीर्थङ्कर महाराजा द्वारा कहा हुआ अहिंसा धर्म वही सर्वोत्तम धर्म है।

इन तीनों रत्नों में दृढ़ विश्वास रख करके प्राणान्तक कष्ट होने पर भी चलायमान नहीं होना।

अष्टमी तथा चतुर्दशी को पौषध और उपवास।

पारणा के दिन सेंकडो मनुष्योंमें से जो दृष्टि में आवे, उनके आवश्यकता पूरती आजीविका बांध देना।

साथ में पौषध करने वालों को अपने घर पारणा करवाना।

धन हीन हुए प्रत्येक स्वधार्मिक बन्धु को एक एक हजार स्वर्ण मोहरे देना।

एक वर्ष के अन्दर स्वधार्मिक भाइयों को एक क्रोड स्वर्ण मोहरे दान में देना। इस प्रकार चौदह वर्ष में चौदह क्रोड स्वर्ण मुद्राओं का दान दिया।

इट्ठयासी लाख का द्रव्य योग्य दान मे दान दिया।

बहोत्तर लाख का द्रव्य कर्जदारों को देकर उन्हे कर्ज मुक्त किया।

इक्कीस ज्ञानभण्डार लिखवाया।

प्रतिदिन श्री त्रिभुवनपाल विहार में स्नात्रोत्सव करवाये। श्री हेमचन्द्राचार्य्य के चरणों में द्वादशावर्त वन्दन करने के बाद क्रमानुसार सर्व साधुओं को वन्दन करनेका था।

प्रथम पौषधादि व्रत अंगीकार करने वाले श्रावक को वन्दन तथा योग्य आदर आदि प्रदान किया।

अठारह प्रान्तों में अहिंसा का पालन करवाया (अमारीपडह) न्याय की घण्टी बजवाई। तथा दूसरे चौदह प्रान्तों में धन तथा मित्रता के अधिकार से निरपराध जीवों की रक्षा करवाई।

बारसो चुम्मालीस नये जिन मदिरों का निर्माण करवाया।

सोलहसों जिन मंदिरों का जिर्णोद्धार करवाया।

तथा सात तीर्थयात्रा की।

प्रथमव्रत—:१ "मारो" इस प्रकार जो अक्षर मुंह से निकले तो भी उपवास करना।

द्वितीयव्रतः—भूल से अथवा दूसरी भांति अगर झूठ बोला गया तो आयंबिल इत्यादि तपश्चर्या करना।

तृतीय व्रतः—मृत्यु पाये हुए लावारिस का भी द्रव्य लेना नहीं।

चतुर्थ व्रतः—कुमारपाल महाराजा ने जैन बनने के बाद नये विवाह न करने का नियम लिया था। चातुर्मास में मन वचन और काया से शीयल-ब्रह्मचर्य का पालन करते थे। मन से शीयल भङ्ग होता, तो उपवास, वचन से भङ्ग होता, तो आयंबिल, तथा काया से भङ्ग होता, तो एकासना करते थे। उनको 'परस्त्रीभाई' की उपाधि थी। भोपालदेवी इत्यादि आठों रानियों की मृत्यु के बाद प्रधानादिकों ने बहुत कहा तथापि शादी करने के लीए उन्होंने नियमों का उल्लंघन नहीं किया। आरति (आरात्रिक) के समय स्त्री को

---

१ हम लोग 'मर' 'मरना' 'मर क्यो नही गया'—'जा डूब मर' 'मूर्दा' इत्यादि शब्द बोलते है, इनमें सत्यता तो बिलकुल नही है, और जिसे ये वचन कहे जाते है, उसके हृदय में तो इससे भी दुःख होता है। इससे हिंसा का पाप लगता है। जिसके परिणाम स्वरूप भयंकर कष्ट सहन करना पडते है।

साथ रखने के लिये भोपालदेवी रानी की स्वर्ण की प्रतिमा बनवाई थी। श्री गुरु महाराजाने–वासक्षेप सहित महाराजा कुमारपाल को 'राजर्षि' की उपाधि प्रदान की थी।

उपर लिखे अनुसार महाराजा कुमारपाल चतुर्थ व्रत के पालन में त्रिविधे त्रिविधे दृढ प्रतिज्ञापूर्वक शियल का पालन करते थे। परस्त्री तो उनके लिये सदैव माता अथवा भगिनी के सदृश्य थी।

पञ्चमव्रतः—करोड स्वर्ण मोहरे आठ करोड चाँदी की मोहरे, एक हजार कीमती मणि रत्न, इत्यादि। बत्तीस हजार मण घृत, बत्तीस हजार मन तेल, तीन लाख मन चावल, तथा चणा, जुवार, और मुँग इत्यादि प्रत्येक धान्य के पाचलाख मुडा। घर, हाट, तथा जहाज, गाडी, पालखी, इत्यादि ग्यारह सौ हाथी, पचास हजार रथ, ग्यारह लाख घोडे, अठारह लाख सैनिक, इस प्रकार सम्पूर्ण रखने का सग्रह परिग्रह मे खुला था।

षष्टमव्रत'—वर्षाऋतु के अन्दर तो श्रीपाटन की हद के बाहर गमन करना नहीं।

सप्तमव्रत'—कुमारपाल महाराजा को मद्य, मास, मधु, मरक्खन, बहु बीजा फल, पाच जाति के उदुम्बर फल, अभक्ष्य, अनन्तकाय, नेवर, इत्यादि का नियम था। देव के पास नहीं रक्खे हुए वस्त्र फल तथा आहार इत्यादि का त्याग था। देव के सन्मुख रखकर बाकी का बाद में काम में लेते

थे। एक पान सचित्त और उसकी भी एक दिन में आठ वीड़ी काम में आसकती थी।

रात्रिको चारों प्रकार के आहार का त्याग रखते थे। वर्षाऋतु के समय घृत की एक विगय छुट्टी थी। हरी शाक का त्याग रहता था। नित्य प्रति एकासना रहता था—पर्व के दिन विगय तथा सचित्त का त्याग करते थे।

अष्टमव्रतः—महाराजा कुमारपाल ने देशमें से सातों ही व्यसनों को दूर करवा दिये थे।

नवमव्रतः—महाराजा कुमारपाल को दोनों समय सामायिक करना तथा सामायिक करते समय श्रीमद् आचार्य हेमचन्द्राचार्य को छोडकर दूसरों से वोलने तक का त्याग था। प्रतिदिन 'योगशास्त्र' के वारह प्रकाश तथा 'वीतराग स्तव' के वीश प्रकाशकों का पाठ करते थे।

दशमाव्रतः—वर्षाऋतु में युद्ध नहीं करना—गजनी सुलतान महमूद आया, उस समय भी चलायमान नहीं हुए थे।

ग्यारहमाव्रतः—पौषध ओर उपवास करते थे। उस दिन रात्रि के समय काउस्सग्ग ध्यान में रहते थे। उस समय पैर में मंकोडा चिपक गया था, तव लोग उसें खींचने लगे। लेकिन वह तो चिपक ही रहा। उस समय "वह मंकोडा मर जायगा" इस शंका सें अपनी चमडी का उतना भाग कटवा कर उसे दूर किया। पारणे के दिन समस्त पौषध करने वालोंकों अपने यहां पौषध करवाते थे।

बारहमाव्रतः—अतिथि संविभागः–दुःखी ऐसे साधर्मिक श्रावकोंका बहोत्तर लाख के द्रव्य का कर माफ कर दिया।

मुनिमहाराजाओं को (प्रथम तथा अन्तिम तीर्थङ्कर महाराजा के शासन मे) राज्यपिण्ड नहीं कल्पता है। इसीलिये भरत चक्रवर्ति के समान महाराजा कुमारपालने सीदाता कई स्वधार्मिक भाईयों का उद्धार किया।

महाराजा कुमारपालने श्रीहेमचन्द्राचार्य महाराज की धर्मशाला की मुहपत्ति का पडिलेहण कराने वाले स्वधार्मिक को पाचसौ अश्व और बारह गाव का आधिपत्य प्रदान किया तथा सर्व मुहपत्ति पडिलेहण करने वालों को कुल पाचसौं गाव का दान दिया।

इस प्रकार विवेकियो मे शिरोमणि के समान महाराजा कुमारपालने दूसरे भी कई भाति के पुण्योपार्जन किया था। उसमें से कुछ यहा लिखे गये है। इस प्रकार उत्तम धार्मिक कार्यों द्वारा उन्होने सिर्फ दो ही भव बाकी है, इतना आत्म कार्य सिद्ध कर लिया (आनेवाली उत्सर्पिणी में पद्मनाभ प्रथम तीर्थकर महाराजा के गणधर हो कर वे उसी भव में सिद्धत्व को प्राप्त करे गे) इसी लिये साधर्मिकों को योग्य सन्मान मान दिया है तथा धर्म की सहायता–कर आदि छोड देना, दुःखीओं का उद्धार करना। तथा अठारह देशों में अहिंसा (अमारी पडह) का प्रचार आदि से उसका उपकार प्रत्यक्ष दिखाई देता है।

उपसंहार

यहां पर महाराजा कुमारपाल के सम्यक्त्वमूल वारहव्रत आदि का वर्णन किया है। उसका मात्र कारण यही है कि-अठारह देशो के राज्य को सम्हालने का बोझा होते हुए भी उन्होंने श्रावक के गुणों का कितना पालन कर बताया है कि जिसका अनुकरण करना तो दूर रहा लेकिन भावना पर विचार करने में भी हम पीछे है? अभी हमको कितने कठिन परिश्रम की आवश्यकता है? वैसी शुभ भावनाओं को प्राप्त करने के निमित्त-प्रसंगोपात यह विषय यहां दिया गया है।

आनन्द—कामदेव आदि श्रावको की-जिन की प्रशंसा स्वयं भगवन् महावीरने भी अपने स्वमुख द्वारा की, तथा जिन्होंने श्रावक के कर्तव्यों को पूर्ण रूपसें पालन किया कि जिन कर्तव्यों के कारण निरवद्य आहार लेना योग्य है। इस वडा कठिन मार्ग समजना चाहिये। जो उस प्रकार की शक्ति नहीं होवे, तो सचित्त त्यागी रहना जरूरी है। आखिर जो यह भी नही हो सके, तो वाईस अभक्ष्य और अनन्तकाय का तो अवश्य ही त्याग करना चाहिये। यहां पर ध्यान में रखना आवश्यक है कि-अभक्ष्य आदि का त्याग इत्यादि तुच्छ नियमों को लेने सें ही मात्र हमारा पूर्ण संतोष होजाने का नही, लेकिन आनन्द कामदेव तथा महाराजा कुमारपाल इत्यादि के समान श्रावकों के वारह व्रतों को अंगीकार करते हुए क्रमानुसार पंचमहाव्रत की प्राप्ति के लिये

प्रयास करना योग्य है। शास्त्रकार महाराजा प्रथम तो सर्व-विरतिपने का ही उपदेश करते है। लेकिन जब श्रावक असमर्थ तथा निरुत्साही प्रतीत होता है, तो देशविरति आदि का उपदेश देते है।

सूचना

१ पृष्ठ १५५ की ५ वीं पक्ति में उस [शेरडी] का रस दो घडीबाद अचित्त है। ऐसा लिखा गया है लेकिन उसका समय बतलाया गया नहीं है। इसलिये श्री लघुप्रवचनसारोद्धारमें उसका समय दो पहर कहा गया है। इसके बाद यह अभक्ष्य है। इस बाबत मे खुलासा करने का कारण यही है कि-वर्षीतप के पारणे के समय कई एक अणजान श्रावक भाइयों ऐसा कालातीत रस काम मे लेते है। तो उन्हें उपयोग रखना जरूरी है।

२. बादाम, पीस्ता, चारोली, काली लाल-श्वेत कीसमिस (द्राख), अखरोट, कोकनी केग, मूबानी, अजीर, मुगफली, सुखे कोपरे, सुखी रायण, कचीखाड, सूखे बखाड बेर, इत्यादि और पृष्ठ १११ मे फाल्गुन चौमासी के बाद अभक्ष्य में गिनाये गये है। प्रथम आवृत्ति मे इन चीजो के अषाड चौमासी के बाद त्याग करने का लिखा है। सूखे मेवे को फाल्गुन-चौमासीसे अभक्ष्य होने का मतान्तर भी बतलाया है। इसीलिए इस आवृत्ति मे उन्हे फाल्गुन चौमासी से ही अभक्ष्य गिनाये है।

श्री-लक्ष्मी रत्नसूरि-कृत अभक्ष्य अनंतकायनी सज्झाय.

ढाळ—जीनसासन रे मूघी सद्दहणा धरे,
मुणी गुरु मुख रे नवे तत्त्व निरता करे;
मिथ्यामति रे कपट कदाग्रह परिहरे,
सही पाळे रे ते नर समकित मन खरे.

त्रुटक—मन खरे समकित शुद्ध पाळे, टाळे दोष दया परो,
धुर पंच अणुव्रत, त्रण गुणव्रत, च्यार शिक्षाव्रत धरो;
इम देश विरति क्रिया निरति, करो भवियण मन रुली,
दाखवी नियगुण परह केरा, दोष मम काढो वळी. १

ढाळ—मम काढो रे लोभी नर कूडो करो,
जाणी सावद्य रे अभक्ष्य बावीसे परहरो;
वड पींपळ रे पीपरीन कठुंबरो,
ऊंबर फळ रे रखे तुमे भक्षण करो.

त्रुटक—रखे भक्षण करो मांखण, मद्य, मधु, आमिष तणुं,
विष, हेम, करहा छांडी परहा, दोष मूल माटी घणुं;
परिहरो सज्जन रयणी भोजन, प्रथम दूरगति बारणुं;
मम करो व्याळु[1] अति असुरु, रवि उदय विण पारणुं, २

ढाळ—अथाणु रे अनंतकाय सवि निर्मीयें,
काचुं गोरस रे मांहे कठोळ, न जीमीये;
वळी वेंगण रे तुच्छ फळ सवि छंडीये,
आपणपुं रे व्रत लीधुं नवि खंडीये.

---

१ वाळु २ आपणुं.

त्रुटक—नवि ! खंडीये सुवि नीम छेद, देइ फळ मते भगनु,
अज्ञात फळ, बहु बीज, भक्षण चलित रस हुये जेहनु,
सवर आणी अभक्ष्य जाणी, तजो ए बावीस ए,
गुरु वयण विगते बळीय प्रीछो, अनतकाय बत्रीश ए ३

ढाळ—अनती रे कद जाति जाणो सहु,
जिसे भक्षण रे पातिक नोन्या छे बहु,
कचूरो रे, हळदर, नीली आदु वळी,
वज्र, सूरण रे कद वेहु ठुमळी फळी

त्रुटक—जे फळीअ कुमळी बीज पावे,
चावे चतुर न आगली,
आलु, पिंडालु, थेग, थुहर, सतावरी, लसण फळी,
गाजर, मूळा, गळो, गिरणी विरहाली, टक, वत्थुलो,
पल्लंक, सूरण, घोल, नीली, मोथ, नीली, मामळो ४

ढाळ—वस करेला, रे कूपल कुअळा तरु तणा,
अकूरा, रे लोढा, ते जऊ पोयणा,
कुंआरी रे, भमर वृक्षनी छाल्डी,
जे कहिये रे लोके अमृत वेल्डी.

त्रुटक—वेलडी केरा तंतु ताजा, खीलोडाने, खरसूआ,
भुइ, फोडी छत्राकार जाणो, नील फुल ते सवि जुआ,
मनीश लोक प्रसिद्ध बोल्या, लक्ष्मीरत्न सूरि इम कहे,
परिहर जो बहु दोप जाणी, प्राणी ते शिव सुख लहे ५

इति अभक्ष्य-अनन्तकायनी सज्झाय

सचित्त-अचित्त विचार सज्झाय.

प्रवनच अमरी मरी ससदा, गुरुपय पंकज प्रणमी मुदा;
वस्तु तणुं कहुं काळ प्रमाण, सचित्त अचित्त विधि जीम लीयो जाण. १
वेहु ऋतु मळी चोमासामान, पट् ऋतु मळी वर्ष प्रमाण;
वर्षा शीत उष्ण त्रिहुं काळ, त्रिहुं चोमासे वर्ष रसाळ. २
श्रावण भाद्रवो आसो मास, कार्तिक वरसाळो वास;
मागशीर पोष माहाने फाग, ए चार शीयाळा लाग. ३
चैत्र वैशाख ने जेठ, अषाढ, उष्णकाळ ए चारे गाढ;
वर्षा शरद शिशिर हेमंत, वसंत ग्रीष्म पट् ऋतु एन तंत, ४
वर्षापनर दिवस पक्वान्न, त्रीस दिवस शीयाळे मान;
वीस दिवसे उनाळे रहे, पछी अभक्ष्य श्री जिनवर कहे. ५
रांध्युं विदल रहे चिहुं जाम, ओदन आठ प्रहर अभिराम;
सोळ प्रहर दहिं कांजी छास, पछी रहे तो जीव निवास. ६
पापड, लोइया, वटक, प्रनाण-चाहर प्रहर पोळीनुं मान.
मात्र प्रमुख निविगय पक्वान्नचलितरस[1] तस काळनुं मान. ७
धान धोयण छ घडी परमाण, दोय घडी जळवाणी जाण;
फळ धोयण एक प्रहर प्रमाण, त्रिफला जळ वे घडीने मान. ८
त्रणवार उकाळे जेह, शुद्ध उष्णजळ कहिये तेह;
प्रहर तीन चउ पंथ प्रमाण, वर्षा शीत उनाळे जाण. ९

---

१ चार पहोर.

आरण माद्रवडे दिन पच, मिश्र लोट अणचाळिा सच,
आसो कार्तिक चिह् दिन जाण, मागशीर पोष दिन तीन प्रमाण १०
माह फागणे कया पण ज्ञामे, चैत्र वेशाख चिह पोर अभिराम,
जेठ आषाढ प्रहर त्रण जोड, तद उपरान अचित्त ते होइ ११
अलसी, कोद्रवा, काग, ने जवार, माते सरसे अचित्त रसाळ
तिहर सर्व तल, तुयरी, वाल, पाचे वरसें अचित्त रसाळ १२
गहु, शालि, रडधान, कपास, जव तिहु वरसें अचित ते खास,
सीत ताप वपादिक जोइ, सचित्त योनि अचित्त छे होइ
हरडे, पींपर, मरिच, नदाम, खारेक, द्राख, एैश अभिराम,
शत जोयण जलवटमा वदे, साठ जोयण थलवटमा कहे १४
धुम अग्नि परियण करी, अचित्त योनी तस थाये खरी,
सचित्त योनि प्रहवणनी जेह, थाये अचित्त प्रवचन कहे तेह १५
गेरु मणिशिल, लुण, हरियाळ, आपे जलवट माहे रसाळ,
त अचित्त हाय प्रवचन मारग, पण ल्यानी रहि तस मारग १६
थोळो सिधव कयो अचित्त श्राद्ध वि[?]े अक्षर परतीत,
इत्यादिक औगर जे थाय, ते अचित्त थापना नवि थाय १७
गोर घृत जे का[?]लीन, परठाये वरगादिक रीन,
फासु दूध विदळ मयोग थाये अभक्ष्य कहे मुनि लोग १८
चार प्रहर रहे जुगरी रावे, सोळ प्रहर राइतु जवार,
दहि राड विदळे दवाय, उष्ण कर तो शुद्ध थाय १९

---

१ पांच पहोर २ [?] ३ गुजराती पाणकी [?]

कुडा विगय परि शेक्यु धान मुहूर्त चोवीस गोमूत्रनुं मान
दुंढणीयादिक विदलनी दाळ, शेक्यां धान परें ते समका
चार प्रहर शीरो, लापसी, विदल परें ते प्रवचन वसी;
जीहां जेहनो काळ पूरो थाय, तिहां ते वस्तु अभक्ष्य कहेवाय
अथाणां प्रमुख सहु जाण, चलित रसें तसकाळनुं मान
बलवणादिक केरो काळ, शास्त्र मांहे छे तेह विशाळ.
तेह भणी इहां नाण्यो एह, अल्प बुद्धिने पडे संदेह;
आर्द्रधान अंकूरा निकळे, ते सहु वस्तु अभक्ष्यमां भळे.
ए बोल्यां लवलेश विचार, विस्तार प्रवचनसारोद्धार;
धीरविमल पंडित सुपसाय, कवि नयविमल कीधी सज्झाय.

इति श्री सचित्त अचित्त विचार सज्झाय सम्पूर्ण

श्री मद् उपाध्यायजी महाराज श्री यशोविजयजी

विरचित–

चार आहारमां-आहारी-अणाहारीनी सज्झाय

[अरिहंत पद ध्यातो थको–ए देशी.]

समरुं भगवती भारती प्रणमी गुरु गुणवंतो रे!
स्वादिम जेह दुविहारमां सूजे ते कहु कंतो रे! श्रीजिन० १
श्रीजिनवचन विचारीये कीजीए धर्म निसंगो रे!
व्रत पच्चक्खाण न खंडिये धरीये
पींपर, सूंठ, तीखा, भला हरडे.
जावंत्री, जायफळ, एलची

काठ, कुल्जर, कुमठा, चणीक,—वावा कचूरो रे ।
मोथ न कटाळेरियो पोहोकर–मूळ कपूरो रे । श्री जिन० ४

हींगल्ग, अष्टक, वावची, वूकी हींग, त्रेहींगो रे ।
वडवण, सवड, सूखना सभारो निसदिसो रे । श्रीजिन० ५

हरडा, वहेडा पगाणीये, काथो, पान, सोपारी रे ।
अज, अजमोद, अजमो भलो खेरवडी निरधारो रे । श्रीजिन० ६

तज न तमाल, लवींग शु जेठीमध गणो मेजा रे ।
पान वळी तुलसी तणा दुनिहारे केल्यो हेला रे । श्रीजिन० ७

मूळ जवासना जाणीये वावडींग, फसेलो रे, ।
पींपरीमूळ जोइ लीजीए, रास यो अत वेलो रे । श्रीजिन० ८

वावळ खेर ने खीजडो, छाली धवादिक जाणो रे ।
कुसुम सुगंध सुवासियो वासी पु नितर्यो पाणी रे । श्रीजिन० ९

एहवा भेद अनेक छे, स्वादिम नीनि मांहे रे ।
जीरु स्वादिम कयु भाष्यमा, खादिममा वजे ठाम रे ।

श्रीजिन० १०

मधु, गोळ प्रमुख जे प्रथमा स्वादिम जानिमा भाष्यो रे ।
ते पण तृप्तिनें कारण आवरणाए नवि राख्यो रे । श्रीजिन० ११

हवे अणाहार ते कंहु जे चौविहारमा सूझे रे ।
लींब पचाग, गळो, कडु जेहथी मनि नवि मूझे रे । श्रीजिन० १२

रास, धमासो, न रोहिणी, सुखड, त्रिफळा कथा रे ।
किरियातो, अतिविष, ओटीयो, रिंगणी पण तिम जाणो रे ।

श्री जिन० १३

---

१ दुष्कड मूळ (!) २ पु किमोडको (पाठान्तर)

आछी, आसंध, चितरो, गूगळ, हरडां दालो रे;
वोण कही अणहारमां मळी मजीठ निहाळो रे! श्रीजिन० १४

कंणेरनां मूळ, पुंवाडीया, वोल, वीयो ते जाण्यो रे;
हळदर सूझे चौविहारमां वळी उपलेट वखाण्यो रे! श्रीजिन० १५

चोपचिनी वज जाणीये वोरडी मूळ कंथेरी रे!
गाय–गोमुत्र वखाणीये वळी कुंवार अनेरी रे! श्रीजिन० १६

कंदरु, वड़कुडा (गुंदा) भला ते अणाहारमां कहिये रे!
एहवा भेद अनेक छे, प्रवचनथी सवि लहीए रे! श्रीजिन० १७

वस्तु अनिष्ट इच्छा विना ते मुखमां धरी जे रे!
चार आहारथी वहिरो ते अणहार कही जे रे! श्रीजिन० १८

एह जुगत शुं जे लही व्रत पच्चक्खाण न खंडे रे!
तेह शुं गुण अनुरागिणी शिव–लच्छी रति मंडे रे!

श्री नयविजय सुगुरु तणा लेइ पसाय उदार रे!
वाचक जशविजये कह्यो एह विशेष विचार रे! श्रीजिन० २०

(तपगच्छ गयण दिवाकरुं श्री परम (प्रभ) सूरि राज्ये रे!
ए सज्झाय रच्यो भलो भवियणने हित काजे रे! श्रीजिन० २१



---

१ वाचक जश सज्झाय रची, ए सेवक सुविचारो रे!
२ कोइ प्रतमां आ गाथा वधारे छे:

❀ धार्मिक पुस्तकोनी यादी ❀

बे प्रतिक्रमण मूळ (गुजराती)	०-८०
,, हिन्दी)	०-९०
पंच प्रतिक्रमण मूळ (गुजराती)	छपाय छे
पंच प्रतिक्रमण (हिन्दी)	छपाय छे
जिन गुण पद्यावली	२-१०
सामायिक चैत्यवंदन सार्थ	०-४१
बे प्रतिक्रमण सार्थ	१-५०
पंच प्रतिक्रमण सार्थ	छपाय छे
जीव विचार सविवेचन	१-५०
नवतत्व सविवेचन	२-००
दंडक तथा सघयणी	१-५०
भाष्यत्रयम्	४-१०
कर्म ग्रंथ १-२ (भा १)	३-००
कर्म ग्रंथ ३-४ (भा	२-००
कर्म ग्रंथ ५-६ (भा ३)	२-७५
समकितना सडसठ बोलनी सज्झाय विवेचन सह	०-७१
द्रव्य गुण पर्यायनो रास टबा साथे	१-००

आत्महितकर आध्यात्मिक वस्तु संग्रह	१-००
अभक्ष्य अनंतकाय विचार (हिन्दी)	छपाय छ
,, (गुजराती)	१-५०
ब्रह्मचर्य व्रत	०-५०
आत्म जाग्रति	०-२५
दंडक टीका (प्रताकार)	०-४०
स्नात्रपूजा	०-१०
श्री सिद्ध हेमरहस्य वृत्ति	६-००
श्री तत्वार्थाधिगम सूत्र सविवेचन (भा १ लो)	७-००
श्री तत्वार्थाधिगम सूत्र सविवेचन (भा २ जो	१०-००
समास सुबोधिका	०-७०
आनंदघन चोविशी	४-००
छ कर्म ग्रंथ साथ	५-००
भूमिका	२-५०

प्राप्तिस्थानो

श्री जैन श्रेयस्कर मंडल
महेसाणा (उ गु.)

श्री जैन श्रेयस्कर मंडल
पालीताणा (सौराष्ट्र)

शुद्धिपत्रक

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२२	१६	वन्घुओ	वन्धुओ
३३	९	।१॥	॥१॥X
५०	१	द्वदल	द्विदल
५१	१६	वरतनो	बरतनो
५८	११	हीना	होना
६६	२	परदेस	परदेशसें
७६	२९	शास्त्रकाकारोंने	शास्त्रकारोंने
१०७	८	अमक्ष्य	अभक्ष्य
१०७	२१	अघिक	अधिक
११८	१२	कन्धुओ	बन्धुओ
१२२	१२	जत्थावंघ	जत्थाबन्ध
१५९	१४	भावसें	भावसें
१८४	१७	धामिक	धार्मिक
१९०	५	मानव	मानव